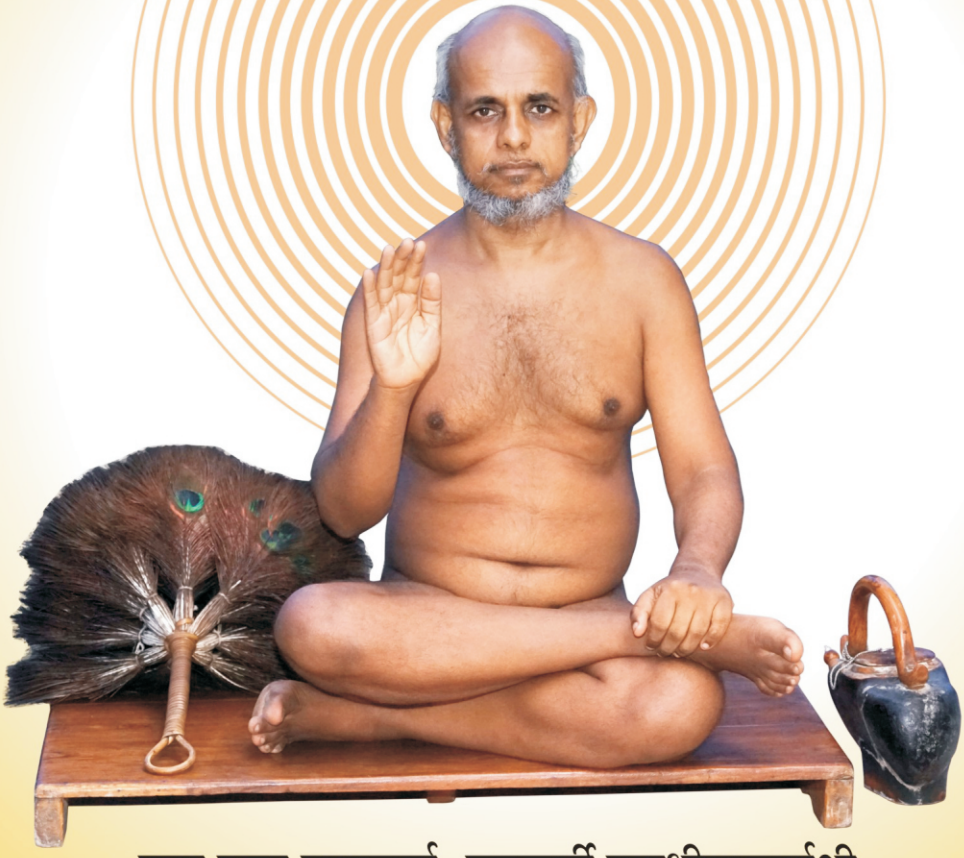

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

छन्दप्रभाकर

लेखक
जगन्नाथप्रसाद

प्रकाशक
जगन्नाथ प्रिंटिंग प्रेस
विलासपुर (छत्तीसगढ़)

(परम्परानायक)

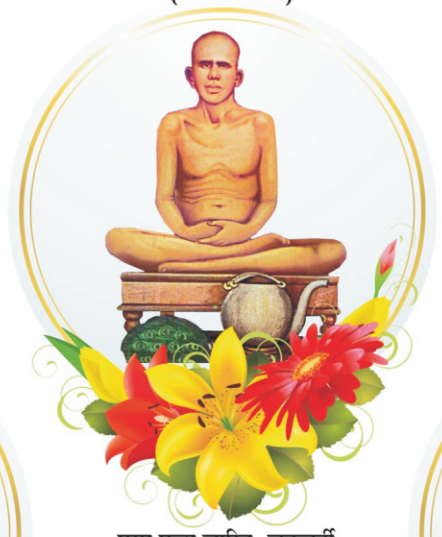

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

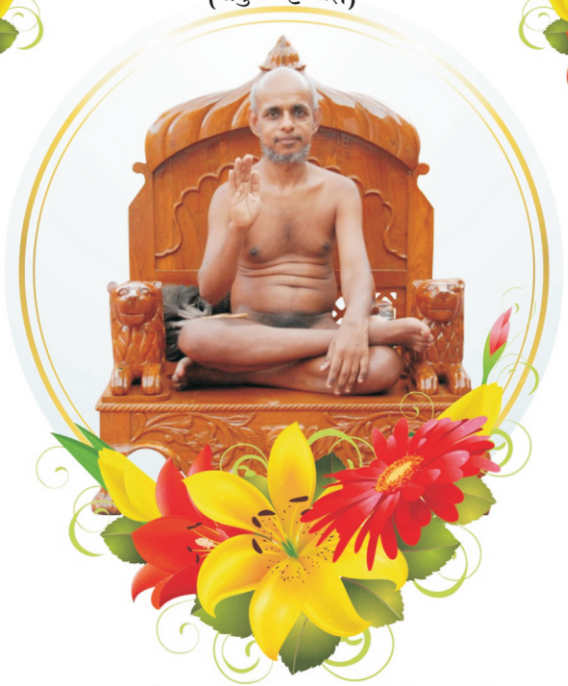

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

Fifth Edition (1922)
Thoroughly revised.

Sixth Edition (1926)

The evergrowing demand for this book by the learned public establishes its popularity beyond any doubt. It is a matter of great satisfaction to me to see its sixth edition. May the book continue always to impart a sound knowledge of the art of poetry and shower its choicest blessings on its numerous readers, is my hearty prayer.

Seventh Edition (1931)

Still further improved and brought upto date together with a comparative table of Hindi and Urdu metres at the end.

Eighth Edition (1955)

The special feature of these editions is the marking out with asterisks in the Index all such metres as are generally set up in examinations.

Ninth Edition (1939)

My grateful thanks to the all India Sahitya-Sammelan for confering on me the title of *'Sahitya-Vachaspati'* at their annual session held at simla in 1938.

BILASPUR C. P.
July 1939. } JAGANNATH PRASAD
'Bhanu'

दशवीं आवृत्ति

मेरे पूज्य श्वसुर स्वर्गीय महामहोपाध्याय, साहित्य वाचस्पति, रायबहादुर जगन्नाथ प्रसाद जी 'भानु कवि', रिटायर्ड ई० ए० सी० बिलासपुर की अमर लेखनी का यह अनुपम ग्रन्थ है तथा इसके नौ संस्करण अभी तक प्रकाशित हो चुके हैं। नवें संस्करण के पश्चात् ही सरकार ने उन्हें 'महामहोपाध्याय' की उपाधि से जुलाई १९४० में विभूषित किया। स्वर्गीय पूज्य महामहोपाध्याय के निधन (२५ अक्टूबर १९४५) के पश्चात् उनके सुयोग्य चिरंजीव मेरे पूज्य पति बाबू जुगलकिशोर जी आनरेरी मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी इस ग्रन्थ की दसवीं आवृत्ति का मुद्रण कराने का प्रबन्ध कर ही रहे थे कि वे भी इस महान तथा कठिन कार्य का उत्तरदायित्व मेरे निर्बल कन्धों पर छोड़ कर स्वर्गीय पथ के (दिसम्बर १९४७ में) पथिक हुए।

अतः भगवत्कृपा से इस दशम संस्करण की प्रतियां पाठक वृन्द के समक्ष मैं ही प्रस्तुत कर रही हूँ।

पूर्णिमा देवी
धर्मपत्नी स्वर्गीय बाबू श्रीजुगलकिशोरजी

प्रो० जगन्नाथ प्रिन्टिंग प्रेस, बिलासपुर म० प्र०

Comparative chart explaining the outlines of Aryan Prosody.

Symbol I stands for short syllable or short quantity, called लघुमात्रा as क denoted by the letter 'ल' counting as I instant.

Symbol ऽ—stands for long syllable or long quantity, called गुरुमात्रा, as का denoted by the letter 'ग' counting as 2 instants.

The 8 trisyllabic feet or Ganas.

Serial number	1	2	3	4	5	6	7	8
Name of ganas in English character	Magana	vagana	Ragana	Sagana	Tagana	Jagana	Bhagana	Nagans
Name of ganas in Hindi character	मगण	यगण	रगण	सगण	तगण	जगण	भगण	नगण
Symbols denoting ganas.	SSS	ISS	SIS	IIS	SSI	ISI	SII	III
Examples in Hindi	मायावी	यशोदा	राधिका	सरसी	तांबूल	जलेस	भावन	नमन
English or Latin equivalents	Molossus	Baechius	Amphi-macer	Anapa-es tus	Anti Ba cthius	Amphi-brachys	Dactylus	Tribra-chys
Symbolic initial letters.	म	य	र	स	त	ज	भ	न

English Poetry is regulated by accent whereas Hindi poetry is regulated by quantity.

Hindi dissyllabic combinations	Symbols in Signs	Symbols in Letters	English or Latin eqvivalents
रामा	S S	गग	Spondaic
रमा	I S	लग	Iambic
राम	S I	गल	Trochaic
रम	II	लल	Pyrrhic

Metre (छन्द)

- Mâtric or Jati (मात्रिक वा जाति)
  i. e. Metre regulated by number of syllabic instants.
  - सम
    A stanza of which all the component lines have the same number of instants.
  - अर्द्ध सम
    A stanza of which the alternate lines have the same number of instants.
  - विषम
    All other kinds of stanzas,
- Varnic or Vritta (वर्णिक वा वृत्त)
  i. e. Metre regulated by number and Position of syllables.
  - सम
    A stanza of which the component lines are the same in syllabic arrangements.
  - अर्द्ध सम
    A stanza of which the alternate lines are alike.
  - विषम
    All other kinds of stanzas.

Other Technical Terms.

छन्द—(1) A metre.
(2) One complete stanza of not less than 4 lines or parts.
(3) A general term for all kinds of metre.

मात्रा—Syllabic instant. An instant=one short syllable or quantity or sound.

वर्ण—Syllable or quantity which may be either short i. e. composed of one instant or long composed of two instants.

पद पाद or चरण-A verse (a poetical-line)
समचरण-Even quarter
विषम चरण-Odd quarter.
दोहा-A couplet (two poetical lines)
त्रिपाद्-A Triplet (three poetical lines)
पद्य वा काव्य-Poetry, poem
गद्य Prose
षटपदी-A senary (six poetical lines)
अष्टपदी-An ottava rima (8 poetical lines)

यति-A caesura A Pauso
पदयोजना-Versification.
लक्षण नियम-Measure or Defination.
लक्षणविचार-Scansion.
प्रस्तार-Permutation.
भेद-Variety.
ध्वनि-(लय) Rhythm.
तुकांत-Rhyme.
अनुप्रास-Alliteration.

एकगणात्मक-Monometrical
द्विगणात्मक-Dimetrical
त्रिगणात्मक-Trimetrical
चतुर्गणात्मक-Tetrametrical
पंचगणात्मक-Pentametrical
षड्गणात्मक-Hexametrical
सप्तगणात्मक-Heptametrical
अष्टगणात्मक-Octometrical

In English generally the same kind of feet are repeated, whereas in Hindi either the same egana or others may be used.

B. JAGANNATH PRASAD,
AUTHOR.

❋ श्रीराधाकृष्णाभ्यांनमः ❋

❀ श्रीराधाकृष्णौजयतः ❀

❀ श्रीराधाकृष्णौजयतः ❀

श्री राधा राधा रमण, पद वन्दौं कर जोर।
करिय ग्रंथ कल्याणमय, छन्दःप्रभाकर मोर॥

(भानु कवि)

हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग

साहित्य वाचस्पति

श्री जगन्नाथ प्रसाद "भानु" को

उनकी अमूल्य हिंदी सेवा के उपलक्ष्य में यह सम्मेलन, स्थायी समिति की २६ श्रावण, १९९५ की बैठक के निश्चय संख्या ५ के अनुसार सम्मानार्थ "साहित्य वाचस्पति" की उपाधि अर्पित करता है और उसके प्रमाण में यह ताम्रपत्र प्रदान करता है।

बाबूराव विष्णु पराड़कर, सभापति
बाबूराम सक्सेना, प्रधान मंत्री
दयाशंकर दुबे, परीक्षा मंत्री

शिमला,
२ आश्विन, १९९५

* श्रीसरस्वत्यैनमः *

भूमिका ।

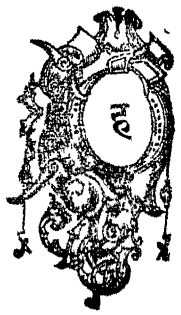

हम उस सर्व शक्तिमान जगदीश्वर को अनेक धन्यवाद देते हैं जिसकी कृपा कटाक्ष से यह छन्दःप्रभाकर नामक पिंगलग्रन्थ निर्मित होकर प्रकाशित हुआ ।

(१) सब विद्याओं के मूल वेद है और छन्दःशास्त्र वेदों के छः अंगों (१ छन्द २ कल्प, ३ ज्योतिष, ४ निरुक्त ५ शिक्षा और ६ व्याकरण) में से एक अंग है । यथा—

छन्दः पादौतु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ कथ्यते ।
ज्योतिषामयनं नेत्रं निरुक्तं श्रोत्र मुच्यते ॥
शिक्षा घ्राणन्तुवेदस्य मुखं व्याकरणंस्मृतम् ।
तस्मात् सांगमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते ॥

चरणस्थानीय होने के कारण छन्द परम पूज्यनीय हैं, जैसे भौतिक सृष्टि में बिना पांव के मनुष्य पंगु है, वैसे काव्यरूपी सृष्टि में बिना छन्दःशास्त्र के ज्ञान के मनुष्य पंगुवत् है । बिना छन्दःशास्त्र के ज्ञान के न तो कोई काव्य की यथार्थ गति समझ सकता है न उसे शुद्ध रीतिसे रच ही सकता है । भारतवर्ष में संस्कृत और भाषा के विद्वानों में कदाचित् ही कोई ऐसा होगा जिसे काव्य पढ़ने का अनुराग न हो, परन्तु बिना छन्दःशास्त्र के पढ़े किसी को काव्य का यथार्थ ज्ञान एवं बोध होना असंभव है । इसी प्रकार बहुतेरों को काव्य रचने की भी रुचि रहती है किन्तु बिना छन्दःशास्त्र के जाने उन्हें भी शुद्ध और श्रेष्ठ काव्य रचना दुस्तर है ।

(२) छंदःशास्त्र के कर्त्ता महर्षि पिंगल हैं, उनका रचा हुआ शास्त्र भी पिंगल के नाम से प्रसिद्ध है । कोष में पिंगल शब्द का अर्थ सर्प भी है, अतएव लोग इन्हें फणि, अहि और भुजंगादि नामों से भी स्मरण करते हैं यथा इनको शेषजी का अवतार भी मानते हैं ।

(३) छंदःशास्त्र का थोड़ा बहुत ज्ञान होना मनुष्य के लिये परमावश्यक है । आप लोग देखते हैं कि हमारे ऋषि, महर्षि और पूर्वजों ने स्मृति शास्त्र पुराणादि जितने ग्रन्थ निर्माण किये हैं वे सब प्रायः छन्दाबद्ध हैं यहां तक कि श्रुति अर्थात् वेद भी छंदस् कहाते हैं । छंद का इतना गौरव और माहात्म्य क्यों ? इसका कारण यही है कि कोई भी विषय छंदोबद्ध रहने से रमणीयता के कारण शीघ्र कंठस्थ हो जाता है और पाठकों और श्रोताओं दोनों को एक साथही

आनन्दप्रद होता है इसके सिवाय उसका आशय भी गद्य की अपेक्षा थोड़े ही में आ जाता है, किसी सत्कवि का कथन है:—

नरत्वं दुर्लभं लोके विद्या तत्र सु दुर्लभा ।
कवित्व दुर्लभ तत्र शक्ति स्तत्र सु दुर्लभा ॥

अर्थात इस संसार में पहिले तो मनुष्य जन्म ही दुर्लभ है, फिर मनुष्य जन्म पाकर विद्या प्राप्ति उससे भी दुर्लभ है, यदि कहीं विद्या आ भी गई तो काव्य की रचना और भी दुर्लभ है, और काव्य रचने में सुशक्ति का प्राप्त होना तो अतीव दुर्लभ है । इससे यह सिद्ध हुआ कि नरदेह पाकर काव्य का ज्ञान होना श्रेयस्कर है । और काव्य का ज्ञान बिना छन्दःशास्त्र पढ़े हो नहीं सकता । अतएव प्रत्येक मनुष्य के लिये छन्द शास्त्र का ज्ञान परमावश्यक है, किसी ने ठीक ही कहा है:—

काव्यशास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम् ।
व्यसनेनच मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा ॥

(४) सच है काव्य के पठनपाठन में जो अलौकिक आनन्द प्राप्त होता है उसका वर्णन करना लेखनी की शक्ति के बाहर है । इस आनन्द का यथार्थ अनुभव तो केवल काव्यानुरागी सज्जन ही कर सकते हैं ।

(५) देखा जाय तो संसार में जितनी भाषाएं प्रचलित हैं उनका सौंदर्य उनकी कविता ही में है । छंद शास्त्र किसी मत अथवा धर्म विशेष का प्रतिपादन नहीं करता, यह तो केवल एक विद्या है जो सर्वानुकूल है ।

(६) थोड़े ही वर्ष पहिले इस भारतवर्ष में श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदासजी, सूरदासजी, श्रीनाभादासजी, केशवदासजी, देव, भूषण, पदमाकर; बाबा भिखारीदासजी, इत्यादि हिन्दी के कैसे २ सत्कवि हो गये हैं जिन्होंने हम लोगों के कल्यार्थार्थ एक से एक विचित्र और मनोहर रसपूर्ण काव्य ग्रन्थ रूपी अमूल्य रत्न रख छोड़े हैं । वर्तमान समय में भी अनेक सुकवि विद्यमान हैं किन्तु इनकी संख्या बहुत थोड़ी है, हमें ऐसे नामधारी कवि अधिक दृष्टिगोचर होते हैं जिनकी कविता भद्दी और गणागण के बिचार से शून्य रहती है इसका कारण यही है कि प्राचीन सुकविगण छन्दःशास्त्र तथा साहित्यशास्त्र का भली भांति अध्ययन कर लेने के पश्चात् ही काव्य रचना में हाथ लगाते थे किन्तु आजकल यह बात नहीं रही । अधिकांश जन छन्दःशास्त्र का भलीभांति अध्ययन किए बिना ही कविता करने लगते हैं जिससे वे उपहास के पात्र होते हैं । इनकी असफलता का दूसरा किन्तु मुख्य कारण यह भी है कि भाषा में ऐसा कोई उत्तम छन्दोग्रन्थ भी नहीं है जिसके द्वारा लोग सरलता पूर्वक छंदों का ज्ञान प्राप्त करलें । कुछ थोड़े से ग्रन्थ हैं सही पर वे अपूर्ण क्लिष्ट, परस्पर विरोधी और लाभ पहुंचाने के बदलें भ्रम में डालने वाले हैं ।

(७) यह देखकर ही जन साधारण के हितार्थ इस ग्रन्थ की रचना की गई है। छंद के नियमों का ग्रन्थ पिंगल कहाता है यह जितना सरल हो उतना ही लाभदायक है। नियमप्रधान ग्रन्थों में जटिलता सदैव त्याज्य होनी चाहिये। नियमों की क्लिष्टता से विद्यार्थियों को लाभ पहुंचना संभव नहीं। अतएव यथा संभव इस विषय को अत्यन्त सुगम करने का विशेष ध्यान रखकर प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना की गई है।

(८) इस ग्रन्थ में हमने श्रीयुत भट्ट हलायुद्ध के सटीक प्राचीन संस्कृत छन्द शास्त्र, श्रुतबोध वृत्तरत्नाकर, छन्दोमंजरी, वृत्तदीपिका, छंदःसारसंग्रह इत्यादि ग्रन्थों का आधार लिया है। इस ग्रंथ में हमने विषय की अपूर्णता और वर्णन प्रणाली की क्लिष्टता यथासंभव नहीं रखी है. यथा अन्योन्य पिंगल ग्रन्थों के परस्पर विरोधी और गूढ़ (अमर्य्यादित वा अश्लील) शृंगारादि भी जो नियम प्रधान ग्रन्थों के दूषण हैं नहीं आने दिये हैं। नियम वर्णित ग्रन्थों का गूढ़ शृङ्गार से ओत प्रोत भरा रहना कदापि लाभकारी नहीं क्योंकि उन्हें गुरु शिष्य को, पिता पुत्र या कन्या को, भाई बहिन को और माता अपनी सन्तान को लज्जावश भलीभांति पढ़ा नहीं सकते अतएव उनसे विशेष उपकार नहीं हो सकता।

(९) कई छन्दोग्रंथ ऐसे हैं जिनमें प्रस्तार, सूची आदि प्रत्ययों का पूर्णरूप से वर्णन नहीं किया गया है किन्तु इस ग्रन्थ में आप सम्यक् रूप से इनका वर्णन पावेंगे। कई ग्रन्थ ऐसे हैं, जिनमें हारी, वसुमती, समानिका कुमारललिता, तुंगा, मदलेखा, सारंगिक, मानवक्रीड़ा, शिष्या, विद्युन्माला भ्रमरविलसिता, अनुकूला इत्यादि वर्णवृत्तों को मात्रिक छन्द की उपाधि दी गई है। और कई ऐसे भी हैं, जिनमें तोमर, सुमेरु, दिगपाल रूपमाला, मरहट्ठा आदि मात्रिक छन्द, वर्णवृत्त बताये गये हैं किन्तु ये दोष इस ग्रन्थ में नहीं आने पाये हैं।

(१०) वर्ण दो प्रकार के हैं:—गुरु और लघु, यही छन्दःशास्त्र के मूलाधार हैं। ये ही उसकी कुंजी हैं पिंगल में इन गुरु और लघुवर्णों से ही सब कार्य सिद्ध होते हैं। इन्हीं के संयोग से गण बनते हैं। इनका वर्णन आगे है। दीर्घाक्षर को गुरु कहते हैं, इसका चिन्ह है (ऽ) और ह्रस्वाक्षर को लघु कहते हैं इसका चिन्ह है (।) मात्रिक तथा वर्णिक गण इस प्रकार हैं:—

'टः ठः डः ढः णः' गण मत्ता।
छै पच चौ त्रय दुइ कल यत्ता॥
वर्ण तीन वर्णिक गण जानो।
'भय रस तज भन' आठ प्रमानो॥

(मात्रिक गण)

नाम	मात्रा	कुल भेद	व्याख्या
टगण	६	१३	इन मात्रिक गणों का काम बहुत कम पड़ता है कविजन सांकेतिक तथा संख्यावाची शब्दों से ही काम निकाल लेते हैं। इनके रूप इसी ग्रन्थमें देखिये।
ठगण	५	८	
डगण	४	५	
ढगण	३	३	
णगण	२	२	

(वर्णिक गण)

नाम	लघु संज्ञा	अक्षरार्थ	रेखारूप	वर्णरूप	उदाहरण	शुभाशुभ	व्याख्या
मगण	म	त्रिवेद	SSS	मागाना	मायावी	शुभ	'मत भय' सुखदा, 'जर सता' दुखदा। अशुभ न धरिये नर छू करिये॥ (इनका विशेष वर्णन ग्रंथमें यथास्थान दिया गया है)
यगण	य	यश	ISS	यगाना	यमारी	शुभ	
रगण	र	अग्नि	SIS	रागना	राधिका	अशुभ	
सगण	स	वायु	IIS	सगना	सरसी	अशुभ	
तगण	त	तस्कर	SSI	तागान	तातार	अशुभ	
जगण	ज	विष	ISI	जगान	जलेश	अशुभ	
भगण	भ	नक्षत्र	SII	भागन	भावन	शुभ	
नगण	न	स्वर्ग	III	नगन	नगन	शुभ	

(११) 'मय रस तज भन' और 'गल' अर्थात् 'गुरु लघु' मिलकर पिंगल के दशाक्षर कहाते हैं। यथा—

मय रस तज भन गल सहित, दश अक्षर इन सोहिं।
सर्व शास्त्र व्यापित लखौ, विश्व विष्णु सों ज्योंहिं॥

जिन छन्दों के पदों में केवल मात्राओं की संख्याका विधान है वे मात्रिक छन्द और जिन छन्दोंमें वर्णों का क्रम तथा उनकी संख्या एक समान हो वे वर्णिक वृत्त कहाते हैं।

(१२) कई कवियों ने चौपाई का लक्षण दोहे में और दोहे का लक्षण चौपाई में कहा है। इसी तरह भिन्न भिन्न छन्दों के लक्षण भिन्न भिन्न छन्दों में कहे हैं। ऐसी प्रथा लाभदायक नहीं। जिस छन्द का जो लक्षण हो उस लक्षण को उसी छन्द मे कहना परमोचित है जिससे विद्यार्थियों को छन्द के लक्षण के साथ ही उसकी लय भी विदित हो जावे। संस्कृतज्ञ पंडितों ने बहुधा ऐसा ही किया है और हमने भी उसी मार्ग का अनुसरण किया है।

जिन कवियों ने जिस वृत्त का लक्षण उसी वृत्त में लिखने की कृपा की है उसमे भी कई स्थानों मे त्रुटियां हो गई हैं, अर्थात् उनमें गणों का क्रम ही भ्रष्ट हो गया है। यथा अनुकूला वृत्त—इसका शुद्ध लक्षण यों है:—

भ त न गग
SII SS III SS

छन्दोऽर्णव में यह लक्षण इस प्रकार है:—

'गो सभ सो गो हरि अनुकूले'

अर्थात् पहिले एक गुरु, फिर सगण, फिर भगण, फिर सगण, फिर गुरु। बात वही है, परंतु गणों के मूल स्वरूपों में कितना उलटफेर हो गया है। आदि में गुरु कहने से विद्यार्थी को सहज भ्रम हो सकता है कि कहीं यह मात्रिक छन्द तो नहीं है। शुद्ध प्रथा तो यह है कि आदि से तीन तीन वर्णों में गण घटित करते जाइये। यदि ६ वर्णों का वृत्त है तो कोई दो गण पूरे मिलेंगे यदि ७ वर्ण हुए तो दो गण और अन्त में एक वर्ण अवश्य होगा। ऐसे ही यदि ८ वर्ण हुए तो प्रथम दो गण और अंत में दो वर्ण अवश्य होंगे। यदि ९ वर्ण हुए तो तीन गण पूरे मिलेंगे अर्थात् वृत्ताक्षरों में ३ का भाग पूरा लग जाय तो पूरे गण आवेंगे यदि कुछ शेष रहे तो उतने ही गुरु अथवा लघु वर्ण अन्त में शेष रहेंगे। अब एकही उदाहरण अनुकूला वृत्त का देकर इसका स्पष्टीकरण नीचे लिखते हैं पाठक दोनों की तुलना स्वयं कर सकते हैं—

(छन्दोऽर्णव)	(छन्दःप्रभाकर)
ल०—गो स भ सोगो हरि अनुकूले।	सू०—भीतिन गंगा जहँ अनुकूला॥
S। । SS ।। ।।SS	S।। SS ।। ।।SS
उ०-गोपिहु ढूंढौ ब्रज कत दूना।	उ०-भीतिन गंगा जग तुव दाया।
कूबरि ही की करहु न पूजा।	सेवत तोही मन बच काया।
योग सिखावै मधुकर भूलो।	नासहु बेगी मम भव शूला।
कूबरि ही सों हरि अनुकूलो।	हौ तुम माता जन अनुकूला।

(१३) छन्द दो प्रकार के होते हैं १ वैदिक, २ लौकिक। वैदिक छन्दों का काम केवल वेदादि अध्ययन करने में पड़ता है और अन्य शास्त्र पुराणादि तथा अन्य काव्य लौकिक छन्दों में ही पाए जाते हैं इस कारण इस ग्रन्थ में केवल लौकिक छन्दों का ही सविस्तार वर्णन किया गया है। फिर भी वैदिक छन्दों का एक कोष्ठक ग्रन्थ के अन्त में लगा दिया है।

संस्कृत में छन्द तीन प्रकार के माने जाते हैं । यथा– गण छन्द (१) मात्रिक छन्द (२) और अक्षर छंद (३) आर्या की गणना गण छंद में की है, परंतु भाषामें छन्द वा पद्य के दो भेद माने गये हैं और आर्या को मात्रिक छंद का उपभेद माना है। यह अनुचित नहीं है। लौकिक छंदों के मुख्य दो भाग हैं। (१) मात्रिक वा जाति, (२) वर्णिक वा वृत्त। साधारणतया छन्दके चार पद, पाद वा चरण होते हैं। पद्यं चतुष्पदम्। पादश्चतुर्भागः।

(१४) जिस छंद के चारों चरणों में एक समान मात्रा हों परंतु वर्ण क्रम एकसा न हो वही मात्रिक छंद है।

जिस छंद के चारों चरणों में वर्ण क्रम एकसा हो और उनकी संख्या भी समान हो वही वर्णिक वृत्त है।

मात्रिक छन्द और वर्णिक वृत्त की पहिचान का यह दोहा स्मरण रखने योग्य है।

क्रम अरु संख्या बरण की, चहुं चरणनि सम जोय।
सोई वर्णिक वृत्त है, अन्य मातरिक होय॥

वा

क्रम हत मत्ता । क्रम गत वृत्ता॥
सम कल वर्णा । गिन प्रति चर्णा॥

क्रम हत=क्रम नहीं है जिसमें। क्रम गत=क्रम है जिसमें। कल=मात्रा।

(मात्रिक छंद)

१ पूरन भरत प्रीति मैं गाई	११ वर्ण	१६ मात्रा
२ मति अनुरूप अनूप सुहाई	१२ वर्ण	१६ मात्रा
३ अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन	१५ वर्ण	१६ मात्रा
४ करत जु बन सुर नर मुनि भावन	१५ वर्ण	१६ मात्रा

इसमें वर्णों का क्रम और संख्या एक समान नहीं परंतु मात्राएं ६, १६ प्रत्येक पद में एक समान हैं इसलिये यह मात्रिक छन्द है।

(वर्णिक वृत्त)

।। ऽ। ।ऽ.।। ऽ। ।ऽ

जय राम सदा सुख धाम हरे	१२ वर्ण
रघुनायक सायक चाप धरे	१२ वर्ण
भव वारण दारण सिंह प्रभो	१२ वर्ण
गुण सागर नागर नाथ विभो	१२ वर्ण

इसके चारों चरणों में वर्ण क्रम और वर्ण संख्या एक समान है इसलिये यह वर्णिक वृत्त है। इस विषय को और भी स्पष्ट करते हैं। निम्नांकित पदों को देखिये और समझिये।

(मात्रिक)			(वर्णिक)	
	वर्ण	मात्रा	ऽ।।।ऽ	वर्ण
शिव शिव कहौ	६	७	शंकर कहौ	५
जो सुख चहौ	५	७	जो सुख चहौ	५
जो सुमति है	५	७	जो सुमति है	५
तो सुगति है	५	७	तो सुगति है	५

देखिये थोड़े ही अंतर में यह सुगति नामक मात्रिक छंद वर्णवृत्त हो गया यदि वर्णवृत्त में इस लक्षण का कोई वृत्त न मिले तो इसे सुगति वर्ण वृत्त कह सकते हैं।

(१५) सम विषम पदों के सम्बंध से छन्दों के तीन तीन भेद होते हैं—

१ सम जिसके चारों चरणों के लक्षण एक से हों।

२ अर्द्धसम जिसके विषम अर्थात् पहिला और तीसरा चरण एक समान हों और सम सम अर्थात् दूसरा और चौथा चरण एक समान हों। जो छन्द दो पंक्तियों में लिखे जाते हैं उनके प्रत्येक पंक्ति को दो दल कहते हैं।

३ विषम—जो न सम हो न अर्द्धसम। चार चरणों से न्यूनाधिक चरण वाले छंदों की गणना भी विषम में है।

सम छंदों के भी दो उपभेद हैं—

मात्रिक में ३२ मात्राओं तक साधारण और ३२ से अधिक मात्रा वाले दंडक छंद कहाते हैं।

वर्णिक में २६ वर्ण तक साधारण और २६ से अधिक वर्ण वाले दंडक वृत्त कहाते हैं।

(१६) यों तो मात्रिक और वर्णिक दोनों ही छंद हैं किंतु विद्वानों ने वर्णिक की संज्ञा (वृत्त) और मात्रिक की संज्ञा 'छंद' इसलिये मानी है कि वर्णिक वृत्त, गणोंद्वारा क्रमबद्ध है और मात्रिक छन्द मुक्त अर्थात् स्वछंद विहारी हैं।

(१७) इतना लिखकर इस बात का वर्णन किया जाता है कि हमने किस क्रम से इस ग्रन्थ की रचना की है।

पहिले मंगलाचरण के पश्चात् गुरु और लघु वर्ण तथा छंद की व्याख्या देकर सम्पूर्ण ६ प्रत्ययों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है, इन प्रत्ययों में सूची, प्रस्तार, नष्ट और उद्दिष्ट ही मुख्य हैं इसलिये इनके नियम इस रीति से दिये हैं कि उन्हीं नियमों से मात्रिक छंदों तथा वर्णिक वृत्तों की संख्या और उनके स्वरूप दोनों एक साथ ही विदित हो जावें तत्पश्चात मात्रिक समछन्द इस प्रकार लिखे गये हैं कि जिस छंद का जो लक्षण है वह नाम सहित छंद के

प्रथम चरण में ही लिखा है अर्थात् प्रत्येक छन्द का पहिला चरण ही सूत्रवत् लक्षण और नाम का बोधक है उसी से यति (विश्राम) का भी बोध होता है, यहां यति निर्धारित नहीं वहां अन्त में वा कवि की इच्छा पर निर्भर है। प्रसंगानुसार अन्य सत्कवियों के उदाहरण भी दिये हैं। मात्रिक समान्तर्गत दंडकों के लक्षण उनके नाम सहित एक एक पंक्ति में देकर उन्हीं के नीचे अन्य उदाहरण दिये हैं। फिर मात्रिक अर्द्धसम छन्दों का वर्णन है इनके लक्षण और नाम सम और विषम पदों के सम्बन्ध से दो दो चरणों में देकर उन्हीं के नीचे उनके उदाहरण दिये हैं तथा उनकी संख्या जानने की रीति भी लिख दी है। फिर विषम छन्दों का वर्णन है और साथही उनकी संख्या जानने की रीति भी लिख दी है। तदनंतर आर्या और बैतालीय छन्दों का वर्णन है इस प्रकार मात्रिक छन्दों के पश्चात् वर्ण वृत्तों का वर्णन है। वर्णवृत्तों में भी समवृत्त, दंडकवृत्त, अर्धसमवृत्त और विषमवृत्तों का वर्णन यथाक्रम करते हुए यह ग्रन्थबारह मयूख में समाप्त हुआ है। प्रत्येक वर्णसंख्या के वृत्त 'म य र स त ज भ न' गणों के क्रमानुसार ही लिखे गये हैं अर्थात् पहिले मगण से प्रारम्भ होने वाले समस्त वृत्त, फिर यगण से प्रारंभ होने वाले समस्त वृत्त, फिर रगण से प्रारम्भ होने वाले समस्त वृत्त, ऐसे ही नगण तक यही क्रम चला गया है।

(१८) (क) विद्यार्थियों और साहित्य परीक्षार्थियों की सुगमता के हेतु प्रत्येक समवृत्त के प्रथम ही सूत्रवत् एक पंक्ति उसी वृत्त के ऊपर लिखदी है जिससे वृत्त का नाम लक्षण सहित मिलता है। इस सूत्रवत् एक पंक्ति में गणों के मान से वृत्त का नाम जिस स्थान में आ सकता है वहीं रखा गया है।

(ख) उक्त सूत्रवत् पंक्ति के पश्चात् वृत्त का पूर्ण उदाहरण चार चार चरणों में लिखा है। प्रत्येक वृत्त के आदि में वृत्त के लक्षण पिंगल के दशाक्षर 'म य र स त ज भ न ग ल' के योगही से निर्भ्रान्त रीति से लिखे हैं जिससे वृत्तगत गणाक्षरों के बोध के सिवाय नाम और भावार्थ भी पाया जाय। अनेक विद्वानों के अनुरोध से सरल पदों की टीका जैसे मैं माटी ना खाई = मैंने मिट्टी नहीं खाई) अनावश्यक जानकर नहीं लिखी परन्तु इसके पलटे कठिन शब्दों का भावार्थ तथा छन्दःशास्त्र के गूढ़ रहस्यों का विस्तृत उल्लेख कर दिया है और साथही सत्कवियों के उदाहरण भी यथा स्थान दिए हैं।

(ग) वृत्त के लक्षण कहीं२ भिन्न रीति से उसी वृत्त में दो प्रकार से कहे हैं ये ऐसे वृत्त हैं जिनमें क्रमपूर्वक आदि से अन्त तक गुरु लघु वा लघु गुरु वर्णों का नियम है।

(घ) प्रत्येक वृत्त के उदाहरण में ईश्वरभक्ति पर सुन्दर उपदेश अथवा किसी पौराणिक कथा का संक्षिप्त वर्णन अथवा भगवद्भजनादि पाया जाता है। गूढ़ शृंगार का आद्योपांत बचाव किया है यदि कहीं किंचित शृंगार आ भी गया तो मर्यादा सहित है इन चारों बातों का स्पष्टीकरण नीचे लिखा जाता है यथा—

तोटक (स म स स)

(क) ससि सों सुअलंकृत तोटक है ॥

(ख) ससि सों सखियां विनती करतीं, टुक मंद न हो पग तो परतीं ।
हरि के पद अंकनि ढूंढ़न दे, छिन तो टक लाय निहारन दे ॥

टुक=थोड़ा । पग तो=पांव तेरे । पद अंकनि=पांव के चिन्हों को यथा-

जय रामसदा सुख धाम हरे, रघुनायक सायक चाप धरे ।
भव बारण दारण सिंह प्रभो, गुण सागर नागर नाथ विभो ॥

प्रमाणिका (ज र ल ग)

(ग) जगा लगा प्रमाणिका ॥

जगा लगाय चित्त हीं, भजौ जु नंद नंदहीं ।
प्रमाणिका हिये गहौ, जु पार भौ लगा चहौ ॥ यथा—

नमामि भक्त वत्सलं, कृपालुशील कोमलं ।
भजामितें पदाम्बुजं, अकामिनां स्वधामदं ॥

१-ज र ल ग=जगण ।ऽ। रगण ऽ।ऽ लघु । और गुरु ऽ

२-लगाचहौ=लघु गुरु ।ऽ चार बार

(घ) दोनों उदाहरणों में कथा व उपदेश कथित है ॥

(१६) पिंगल के दशाक्षरों (म न भ य ज र भ त ग ल) में से 'ग' और 'ल' ही सब से पीछे आते हैं इसलिये जिन वृत्तों के अन्त में 'ग' वा 'ल' आते हैं उनके नियमों में 'ग' वा 'ल' तक ही नियम का अन्त समझना चाहिए 'ग' वा 'ल' के पश्चात् फिर 'म य र स त ज भ न' ये वर्ण जहां आए हैं वे गण सूचक नहीं हो सकते क्योंकि अन्त तो 'ग' वा 'ल' तक ही है जिन वृत्तों के अन्त में 'ग' वा 'ल' नहीं आते उनके नियमों में विशेष ध्यान इस बात का रखा गया है कि 'म य र स त ज भ न' के पश्चात् फिर ये वर्ण दूसरी बार न आवें । दूसरी बार आने से विद्यार्थी को भ्रम होना संभव है इसलिये इनसे भिन्न ही कोई दूसरा अक्षर रखा गया है यथा—

जरा लगाय चित्तहीं-यहां 'ग' तक अन्त है ग के पश्चात् 'य' यगण का सूचक नहीं ।

ससि सों सखियां बिनती करतीं-इसमें चार सगण तक ही अन्त है तो अंतिम सकार के पश्चात् गणाक्षर से भिन्न 'ख' अक्षर का प्रयोग है ऐसे ही और भी जानो ।

हां कहीं २ नियमों में संख्यावाची शब्दों से भी काम लिया है जैसे— रात्रि=गण तीन, भावहु=भगण चार यचौ=यगन चार, भावत=भगण सात इत्यादि और भ्रम निवारणार्थ उनका स्पष्टीकरण भी वहीं के वहीं कर दिया गया है ।

(२०) पाठक यदि ध्यान से देखेंगे तो प्रत्येक वृत्त में मुख्यतः चार बातें पावेंगे जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के तुल्य हैं । आइये, इनकी तुलना कर देखें ।

१ धर्म=लक्षण अथवा नियम, २ अर्थ=उदाहरण ३ काम=नाम, ४ मोक्ष=उपदेश अथवा हरि कथा—

(२१) प्रायः देखा जाता है कि नियम वाले ग्रन्थों में फिर चाहे वे किसी भी विषय के क्यों न हों, एक प्रकार की शुष्कता एवं क्लिष्टता पाई जाती है । इन कारणों से उन नियमों को रटते रटते विद्यार्थियों का जी ऊब जाता है, पर वे नियम उन्हें अच्छी तरह याद नहीं होते । छोटे से छोटा और सरल से सरल नियम उन्हें पहाड़ के सदृश ज्ञात होने लगता है । इन बातों पर ध्यान रखकर हमने छन्दःप्रभाकर की रचना इस भांति से की है कि मनोरंजन, उपदेश और भगवद्भक्ति के साथ ही साथ वृत्त का नाम, नियम और उदाहरण भलीभांति याद हो जांय और इन्हें जरा भी कठिनता का अनुभव न हो ।

(२२) इन सब बातों के अतिरिक्त जो महाशय अंग्रेजी भाषा के वेत्ता हैं उनकी सुविधा के लिये अंग्रेजी और हिन्दी भाषा के गणों की तुलना और अन्य पारिभाषिक संज्ञाओं का एक कोष्ठक, ग्रन्थ आरम्भ होने के पहिले ही लगा दिया गया है तथा अभंग, आर्वी, दिंडी आदि मराठी भाषा के मुख्य २ छन्दों का भी वर्णन उदाहरण सहित किया गया है । उर्दू छंदों के जो उदाहरण मौके २ पर दिये गये हैं, उनके विषय में कुछ कहना व्यर्थ है । ग्रन्थ का स्वाध्याय करते समय पाठक उन्हें स्वयं देख लेंगे । अन्त में वैदिक छन्दों का भी एक कोष्ठक लगा दिया गया है तत्पश्चात् तुकांत विषयक एक उपयुक्त सूचना देकर ग्रन्थ की समाप्ति की गई है ।

(२३) ग्रन्थ भर में विशेष ध्यान इस बात पर भी दिया गया है कि प्रत्येक छंद के रचने में फिर चाहे वे मात्रिक या वर्णिक क्यों न हो उसी छन्द का सहारा लिया जाय अर्थात् उसके जो नियम हैं वे स्वतन्त्र रूप से सर्वांग उसी में मिलते रहें उसको समझाने के लिये दूसरे छन्द या वृत्त की अपेक्षा न रहे किंतु कई छन्दोग्रन्थ प्रणेताओं ने ऐसा नहीं किया है । श्रीबाबा भिखारीदासजीकृत परतंत्र नियम का उदाहरण अर्थात् जिसके समझाने के लिये दूसरे वृत्त की समझने की अपेक्षा करनी पड़ती है, नीचे लिखा जाता है—

कन्द।

अन्तै भुजंगप्रयात के, लघु इक दीने कन्द।

पहिले तो कन्द वृत्त का लक्षण दोहा में कहा गया (कन्द वृत्त ही में नहीं) फिर उस पर भी यह कि भुजंगप्रयात के अन्त में लघु लगा देने से कन्द वृत्त बनता है। लीजिये, अब ढूंढ़िये कि भुजंगप्रयात किसे कहते हैं, वह कितने अक्षरों का है, समवृत्त है कि विषम इत्यादि। क्योंकि वह इस लक्षण से तो कुछ जानही नहीं पड़ता है अस्तु, किसी तरह भुजंगप्रयात मिला तो अब इसे पढ़िये और समझिये। जब समझ में आजाय, तब फिर उसके अंत में एक लघु रख दीजिये और कन्द वृत्त बना लीजिये। है न यह परतंत्र नियम ?

हमने कन्द वृत्त का लक्षण इस तरह लिखा है।

"यचौ लाइकै चित्त आनन्द कन्दाहि"

टी० - चित्त लगाकर आनन्दकन्द परमेश्वर से याचना करो।
पिंगलार्थ—यचौ=यगण चार, लाइकै=लघु एक।

इसमें लक्षण, उदाहरण, नाम और उपदेश सब एकही स्थान पर मिल गये। (पूरा उदाहरण ग्रंथ में यथास्थान पर देखिये)

(२४) हमारा अभिप्राय प्राचीन कवियों को दोष देने का कदापि नहीं है किंतु केवल यही वक्तव्य है कि उन लोगों ने अपने समय में जो कुछ किया वह परम प्रशंसनीय था। परंतु अब वह समय नहीं रहा अतएव उनके ग्रन्थों से जैसा चाहिये वैसा होना सम्भव नहीं है।

(२५) सच पूछिये तो इस छन्दस्सागर का पारावार नहीं। इसमें ज्यों २ डुबकी लगाइये त्यों २ एक से एक बढ़कर अमूल्य रत्न हाथ आते हैं। जो छन्द प्रगट नहीं हैं वे 'गाथा' कहाते हैं। बहुत से सत्कवियों ने नाना प्रकार के छन्द अपनी विद्वत्ता से रच २ कर उनके भिन्न २ नाम रक्खे हैं वे सब आदरणीय हैं। क्योंकि प्रस्तार की रीति से अनेक छन्द निकल सकते हैं और पात्रों को ही नूतन छन्द रचकर उनके नाम रखने का अधिकार है, अन्य को नहीं। और पात्र वे ही हैं जो छन्दों के लक्षणों को भलीभांति समझते समझाते पढ़ते और पढ़ाते हैं किन्तु जो नाम एक बार किसी कवि ने किसी छन्द का रखकर प्रकाशित कर दिया है उसे पलटना न चाहिये। उचित है कि उसका आदर हो और नाम पलटा न जावे। नाम पलटने का केवल भ्रम उत्पन्न होता है और लाभ कुछ नहीं।

(२६) वर्णवृत्त की अपेक्षा मात्रिक छन्दों की रचना में विशेष सावधानी चाहिये। मात्रिक छन्दों की श्रेणी में यदि कहीं कोई ऐसा छंद दृष्टिगोचर हो कि

जिसके चारों चरणों में वर्णक्रम एकसा ही है और प्रत्येक चरणों की वर्ण संख्या भी एक समान है तो उसे मात्रिक छंद न मान, वर्णवृत्त मानना चाहिये। यदि उसका कोई विशेष नाम ग्रन्थोंमें न पाया जावे तो उसमें जितने वर्णहों उतने वर्णों के सम्पूर्ण वृत्तों में से, जो प्रस्तार द्वारा सिद्ध होते हैं, उसे एक विशेष भेद अर्थात् वृत्त समझना चाहिये। ऐसे प्रत्येक छन्द सत्पात्रों द्वारा नामांकित हो सक्ते हैं, परन्तु जब तक नाम निश्चित न कर लिया जाय तब तक मात्रिक प्रकरण में जो उसका नाम है उस नाम के पीछे वर्णिक लगा देना उचित है। जैसे तोमर (वर्णिक) सार (वर्णिक इत्यादि परंतु ऐसा करना एक निर्वाह मात्र है शास्त्र सम्मत नहीं, शास्त्र सम्मत तो यही है कि प्रचलित मात्रिक छंद मात्रिक रीति से और प्रचलित वर्णवृत्त वर्णवृत्त की रीति से ही रचे जावें अन्यथा भविष्य में बहुत गड़बड़ हो जाने की संभावना है। जिस छंद का जो नाम प्राचीन कवि रख गये हैं उसका वही नाम रखना चाहिये बदलना न चाहिये। जैसे किसी व्यक्ति का नाम 'सुन्दर' है तो वह 'सुभग' नाम से पुकारे जाने पर कभी उत्तर नहीं देगा यद्यपि सुन्दर और सुभग का अर्थ एकही है वैसेही 'भानु' जिस मनुष्य का नाम है उसे 'रवि' कहकर पुकारना उचित नहीं। हां 'भानु' से यदि सूर्य का बोध ग्रहण करना व कराना हो तो उसे सूर्य्यबोधक चाहे जिस शब्द से प्रगट कर सकते हैं। हमने अपने ग्रन्थ में जिन २ छन्दों के नाम अनेक कवियों ने अलग २ कहे हैं, उन्हें यथा संभव एकत्रित कर दिया है। परंतु छंद में बहुधा वही नाम रखा है जो विशेष प्रचलित है। विभक्ति सहित शब्द को पद कहते हैं, जैसे-घर यह शब्द है-'घरमें' वा 'घरै' यह पद है। जहां २ पदांतमें यति का अर्थात् विश्राम का विधान हो वहां पद पूर्ण होना चाहिये। कहा है (यतिर्विच्छेदः)। पद पूरे एक चरणको भी कहते हैं और यतिके सम्बन्ध से एक चरणमें भी अनेकपद होतेहैं, जहां जिसका ग्रहणहो वहां उसीको लेना चाहिये।

(२७) अपने पाठकों से हमारा यही निवेदन है कि पिंगल पढ़कर छंद की ध्वनि अर्थात् लय पर विशेष ध्यान रखें। यदि कविता रचने की रुचि उत्पन्न हो तो साहित्यशास्त्र का भी कुछ अध्ययन करें, तत्पश्चात् देव अथवा लोकोपकारी मंगल काव्य काव्य की रचना करें। क्योंकि इसमें यदि कोई दग्धाक्षर अथवा गणागण का दोष भी पड़ जायगा तो दोष न माना जायगा। नर काव्य जहां तक बने नहीं करना चाहिये। यदि कोइ करे भी तो बड़ी सावधानी के साथ नियमपूर्वक करे क्योंकि नर काव्य में गणागण आदि का दोष महादोष माना जाता है। गोस्वामी श्री तुलसीदासजी ने कहा है – "कीन्हें प्राकृत जन गुण गाना शिर धुनि गिरा लगति पछताना।" कविता किस भाषा में होनी चाहिये? इस विषय पर हमारा यही निवेदन है कि यद्यपि भारत वर्ष में देश भेद के कारण हिंदी के अनेक रूप देखने में आते हैं और उन सभों में कविता हो भी सकती है किन्तु हमारी समझ में तो यही आता है कि जैसी कुछ रसीली कविता ब्रजभाषा में होती है वैसी अन्य हिन्दी भाषा में नहीं हो सकती। यथार्थ में बहुत ठीक कहा गया है।

देश भेद सों होत है, भाषा विविध प्रकार ।
बरनत है तिन सबन में ग्वार परी रस सार ॥
ब्रजभाषा भाषत सकल, सुर बानी सम तूल ।
ताहि बखानत सकल कवि, जानि महारस मूल ॥

(ग्वार = ग्वाल, भाषा ब्रजभाषा)

(२८) बोलचाल की भाषा अर्थात् खड़ी बोली में कविता करने वाले रसिक सज्जनों के प्रति भी हमारी यही प्रार्थना है कि वे पहिले ब्रजभाषा की कविता प्रेम से पढ़ें तत्पश्चात् खड़ी बोली में कविता करना आरंभ करें। बिना ब्रजभाषा के भलीभांति मनन किये खड़ी बोली की कविता में सरसता लाना दुस्तर है। हमारी सम्मति में खड़ी बोली की कविता में ब्रजभाषा का पुट दे देने से वह शुष्क खड़ी बोली की कविता की अपेक्षा विशेष रसीली हो सकती है।

(२९) जो लोग समझते हैं कि उर्दू अथवा फारसी के समान ललित छन्द ब्रजभाषा में नहीं पाये जाते वे यदि पक्षपात छोड़कर छन्दःप्रभाकर को पढ़ेंगे तो आशा है उनका उक्त मिथ्याभ्रम दूर हो जावेगा। देव नागरी के वर्णों से उर्दू के वर्णों का ढंग निकाला है इसलिये उर्दू के छन्द बहुधा मात्रिक छंदों में ही परिगणित हो सकते हैं। जिन महाशयों को उर्दू वा फारसी में कविता करने का शौक हो, उन्हें चाहिये कि वे हमारे रचित "गुलजारे सखुन" का अवलोकन करें। यह ग्रन्थ नवलकिशोर प्रेस लखनऊ से १॥) में मिलता है।

(३०) अब भूमिका समाप्त करने के पहले हम अपने पाठकों से विनय करते हैं कि कृपया इस ग्रन्थ से लाभ उठावें, साथ अपनी संतानों को अल्पावस्थाही से इसका अध्ययन कराते रहें जिससे वर्षों की विद्या अल्पा ही में अल्प परिश्रम उन्हें प्राप्त हो जावे।

(३१) अन्त में हम जगन्नियन्ता सर्वशक्तिमान परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभो! ऐसी कृपा कीजिये, जिससे देश देशान्तर में पिंगल का प्रचार होकर छंदःशास्त्र का शुद्ध ज्ञान सब लोगों को भलीभांति प्राप्त हो जावे और वे सब आपकी भक्ति विषयक तथा देशोपकारी काव्यों के रचने में निरंतर मग्न रहकर जन्म सफल करें और अन्त में परम पद के अधिकारी हों॥"

बिलासपुर, मध्यप्रदेश
सम्वत् १९९६

जगन्नाथप्रसाद 'भानु'

छंदःप्रभाकर तथा काव्यप्रभाकरादि ग्रंथों के प्रणेता

स्व० महामहोपाध्याय, साहित्याचार्य्य, साहित्य-वाचस्पति,

रायबहादुर जगन्नाथप्रसाद 'भानु'

बिलासपुर, मध्य प्रदेश

जन्म तिथि श्रा० सु० १०, संवत १९१६ दि० ८ अगस्त सन १८५९ ई०

निधन तिथि.....दि० २५ अक्टूबर १९४५

महामहोपाध्याय, साहित्य-वाचस्पति, साहित्याचार्य

रा. ब. श्री जगन्नाथप्रसाद 'भानु'

की

संक्षिप्त जीवनी

[श्री प्यारेलाल गुप्त]

❋ जन्म ❋

हिन्दी साहित्य-गगन एक बार फिर तिमिराछन्न हो गया था। भारतेन्दु अस्त हो चुके थे। हिन्दी गद्य-साहित्य का पथ-प्रदर्शन उनकी उज्ज्वल और प्रकाशवान किरणों ने खूब अच्छे प्रकार किया। अब आवश्यकता थी पद्यमय-जगत को आलोकित करने की। हिन्दी संसार में पद्य रचयिताओं का अभाव न था पर आधुनिक शैली के सहारे उन्हें पद्यमय-जगत में प्रवेश कराने वाला कोई नहीं था। पिंगल विषयक प्राचीन पुस्तकें थीं जरूर, पर वे दुर्बोध और जटिल थीं। उनका जल्दी समझ में आना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य था। समय के साथ वे टक्कर नहीं ले सकती थीं। होने वाले कवि अंधेरे में रास्ता भूल जाते थे और भटक जाते थे। बिना वर्षों अध्ययन किये शुद्धतापूर्वक व्याकरण-सम्मत पद्य रचना करना दुष्कर सा था। ऐसे समय में स्वाभाविकतः एक ऐसे महानुभाव का आविर्भाव होना आवश्यक था जो हिन्दी संसार के उपर्युक्त अभाव को दूर कर सके और काव्य प्रेमियों को ठीक ठीक पथ प्रदर्शन कर सके इस आवश्यकता को— इस अभाव को जगन्नियंता भगवान ने समझा और पिंगलके आचार्य श्री जगन्नाथप्रसाद भानु को श्रावण शुक्ल दशमी सं० १९१६ (विक्रम) ता० ८ अगस्त १८५९ ई० के दिन मध्यप्रांत की राजधानी नागपुर शहर में जन्म दिया। भानु कवि के सुयोग्य पिता श्री बख्शीराम जी सरकारी फौज में नौकर थे। ये भी कवि थे और इनका 'हनुमान नाटक' आज भी प्रसिद्ध थे। सरकार में तथा सरकारी कागजात में भानु महोदय "बी० जगन्नाथ" के नाम से प्रसिद्ध थे। इनके नाम के पूर्व यह बी०' शब्द इनके' पिता के नाम का द्योतक

है। ये तीन भाई थे। इनके दूसरे भाई अर्जीनवीसी करते थे और सबसे छोटे भाई स्वर्गवासी श्री बी० रामनाथ ने जिला दफ्तर के असिस्टेंट सुपरिण्टेण्डेंट के पद से अवसर ग्रहण किया था। इनकी एकमात्र बहिन भी अब न रहीं।

बाल्य-काल और शिक्षा-दीक्षा

भानु महोदय का बाल्यकाल बिलासपुर शहर में ही अधिकतर व्यतीत हुआ। इनकी शिक्षा-दीक्षा भी यहीं हुई। सच पूछिये तो इन्हें स्कूली शिक्षा बहुत थोड़े ही समय तक मिली, पर ये छुटपन से ही बड़े मेधावी थे। स्वाध्याय द्वारा इन्होंने हिन्दी, संस्कृत, अंगरेजी, उर्दू, उड़िया और मराठी का खासा ज्ञान प्राप्त कर लिया। हिन्दी-संसार में आपका कौनसा स्थान था इसे यहां लिखने की आवश्यकता नहीं है। अंगरेजी भाषा की योग्यता का प्रमाण यह है कि आपने एक छोटे से पद पर से परिश्रम करके क्रमशः यहां तक उन्नति की कि असिस्टेंट सेटिलमेंट आफिसर के सदृश उच्च पद प्राप्त किया और कुछ समय तक सेटिलमेंट आफिसरी भी की, यद्यपि यह पद उस समय केवल सिविलियनों को ही मिलता था। आप अंगरेजी शुद्ध और मुहाविरेदार लिखते थे। उर्दू में आपने दो पुस्तकें लिखी हैं. यह आपकी उर्दू की लियाकत का सबूत है। वास्तव में इनके काव्य गुरु स्वयं पिंगल भगवान् थे, अन्यथा कोई बात न थी जो स्वाध्याय द्वारा इन्हें पिंगल का इतना व्यापक ज्ञान प्राप्त हो जाता, जिससे इन्हें छन्दः प्रभाकर और काव्य प्रभाकर के सदृश अनुपम ग्रंथ लिखने की शक्ति प्राप्त हो जाती। वस्तुतः यह ईश्वरदत्त प्रतिज्ञा का ही परिणाम है। इनकी शिक्षा-दीक्षा के सम्बन्ध में बस इतना ही लिखा जा सकता है।

सारकारी नौकरी और सरकारी सम्मान

भानु महोदय की सरकारी नौकरी शिक्षा-विभाग से आरंभ होती है। भिन्न-भिन्न विभागों में योग्यता और परिश्रम पूर्वक काम करते हुए जब उन्होंने सेटिलमेंट मुहक्मे में प्रवेश किया और असिस्टेंट सेटिलमेंट आफीसर हुए, तब इन्हें अपनी लियाकत दिखाने का अच्छा अवसर मिला। इधर तो इन्होंने निमाड़ जिले में ५० नये गांव जंगल कटवाकर बसाये जिनसे आज सरकार को खासी आमदनी हो रही है, उधर उन गावों का इतना हलका बंदोबस्त किया कि लोग ताज्जुब करते रह गये। इनके हृदय में निज देशवासियों के प्रति इतना

अनुराग रहा कि जहां जहां इन्हें बंदोबस्त का काम मिला किसान सुखी हो गये। कहते हैं कि जब तक लोगों ने पहली बार सरकारी लगान पटा नहीं डाला, तब तक उन्हें विश्वास नहीं होता था कि लगान में इतनी ज्यादा कमी हो सकती है, और जहां एक बार लगान दाखिल खजाना हो गया कि सारे निमाड़ जिले में इनका गुणगान होने लगा। गांव गांव में इनके प्रशंसात्मक भजन बन गये और गाये जाने लगे। एक ऐसा ही भजन जिसका प्रचार निमाड़ जिले में अब तक है नीचे दिया जाता है। भजन की भाषा निमाड़ी है—

चालोरी साहेल्यां म्हारा जगन्नाथ जी आयारी।
जगन्नाथ जी आया वो तो काई पदारथ लायारी॥ टेक॥
हातां माहीं आरती लीस्यां पुष्प पान का पूड़ारी।
स्वामिजी की पूजा करस्यां मन इच्छा फल पावारी॥ १॥
आगूं तो हम सौ सौ देता अब नौ दसक सुनाया री।
बाकी रूपया सबै छुड़ाया हरखीना घर आया री॥ २॥
आगूं बैलया भाड़ा लाता, दूनि बिभाई बोंवारी।
अब तो म्हारा स्वामीजी ने मोठा बैल खरीद्यारी॥ ३॥
आगूं तो धीराजी आवे काई उन्हें खिलावांजी।
अब आवे नन्दोईजी म्हारो मोहन भोग जिमावांजी॥ ४॥
आगूं फाटा कपड़ा पहेरां लाजाही मर जावां जी।
अब तो म्हारा स्वामीजी ने चुंदड चौख रंगायाजी॥ ५॥
आगूं म्हारा स्वामीजी ने हंसली चूड़ा बेचाजी।
अब तो म्हारा स्वामीजी ने तोड़ा साठ गठायाजी॥ ६॥
जन शिवलाल सुनावैं विनती हरख हरख यश गावाजी।
रहे निरन्तर दया प्रेम की मन भावा फल पावाजी॥ ७॥

हे सखियां चलो! आज हमारे गांव में जगन्नाथजी का आगमन हुआ है। और जब जगन्नाथजी आये हैं तब हमारे लिए कोई चीज लाये ही होंगे।टेक।

हाथ में आरती का थाल सजालो और फूल पान की पुड़िया साथ रखलो। चलो स्वामी जी की पूजा करके इच्छित फल की प्राप्ति कर लें॥ १॥

पहले तो हमें सौ सौ रुपये (लगान) देना पड़ता था, अब केवल नौ-दस रुपये देना पड़ते हैं। शेष सब रुपये उन्होंने छुड़ा दिये हैं (जिससे हमारे घर के लोग) हर्ष पूर्वक घर लौटे हैं॥ २॥

पहले हम लोग बैल भाड़े से लाते थे और दूनी बाढ़ी पर बीज कर्ज लेते थे, लेकिन अब तो हमारे स्वामीजी ने बड़े बड़े बैल खरीदवा दिये हैं ॥ ३ ॥

पहले हमारे भाई आते थे तो यह फिक्र पड़ती थी कि उन्हें क्या खिलावें अब तो हमारे नन्दोईजी भी आते हैं तो उन्हें मोहन भोग खिलाती हैं ॥ ४ ॥

पहले हम लोग फटा कपड़ा पहने लज्जा से मरी-सी रहती थी, अब स्वामीजी की कृपा से हमने अपनी चूनड़ी चोखे रंग से रंगाली है ॥ ५ ॥

आगे हमारे पति को हमारी हँसली कड़े (वक्त पड़ने पर) बेचना पड़ते थे, अब उनकी अवस्था ऐसी हो गई है कि उन्होंने साठ साठ तोले के तोड़े गढ़ा दिये हैं ॥ ६ ॥

जन शिवलाल (रचयिता) विनयपूर्वक अत्यन्त हर्षित हो यश गान करता है। प्रभु की दया हम पर निरंतर बनी रहे और हम मन चाहे फल की प्राप्ति करते रहें ॥ ७ ॥

निमाड़-निवासी इन्हें इतनी प्रतिष्ठा देने लगे थे कि कई गांवों में इनकी मूर्ति स्थापित कर दी गई और उसकी पूजा होने लगी। जब इन्होंने यह समाचार सुना, तब वे उन गावों में दौड़े दौड़े गये और इसे एकदम बंद करा दिया भानु महोदय निमाड़ी किसानों के प्रेम का स्मरण जब कभी करते थे गद-गद हो उठते थे और कहते थे "इस छल-कपट से भरे हुए संसार में मुझे ग्रामीण जनता से जो प्रेम और प्रतिष्ठा मिली, वह देव दुर्लभ है।" बिलासपुर जिले के गावों में भी इनका यथेष्ठ सम्मान था। जब कभी कोई इनके यहां जाता कोई न कोई ग्रामीण इनके दर्शनार्थ आया हुआ बहुधा दृष्टिगोचर होता। इन्होंने वर्धा, बैतूल सागर, निमाड़ और बिलासपुर इन पांच जिलों का बंदोबस्त किया और इसी सिलसिले में कुछ समय तक संबलपुर जिले में भी रहे। इन्होंने यह कठिन कार्य इतनी बुद्धिमत्ता और परिश्रम से किया कि राजा और प्रजा दोनों सुखी होगये। अकाल, प्लेग एवं विशूचिका के कोप निवारणार्थ इनके प्रयत्न श्लाध्य रहे। विभैष कर सन १६०० में इन्होंने बुरहानपुर तहसील में अकाल-कष्ट निवारणार्थ जो प्रबंध किया उसकी प्रशंसा सरकार में खूब हुई। सन् १६११ में कारोनेशन दरबार के समय बंदोबस्त का कार्य सतत रूप से योग्यतापूर्वक सम्पन्न करने के उपलक्ष में माननीय वाइसराय द्वारा आपको "सर्टिफेकेट आफ आनर" प्रदान किया गया था। सन् १६१२ में आपको कारोनेशन मेडल मिला। सन् १६१३ में आपने ६५० रु. मासिक वेतन परसे

सरकारी नौकरी से अवसर ग्रहण किया। उसी वर्ष आप दरबारी नियुक्त हुए और हथियार के कानून (Arms Act) से भी बरी किये गये। आपने १७ वर्षों तक बड़ी योग्यता और लगन के साथ आनरेरी मजिस्ट्रेटी की और आखिर आखिर में आपको दर्जा अव्वल के अख्तियारात हासिल हो गये थे। सन् १९२१ और सन् १९२५ में आपको रायसाहिब और रायबहादुर की उपाधि क्रमशः प्रदान की गई। विशेषता तो यह है कि इतना कार्य करते रहने पर भी आपका साहित्य परिशीलन पूर्ववत ही जारी रहा। सन् १९४० में आप अपनी अध्ययन शीलता और विद्वत्ता के बल पर सरकार द्वारा "महामहोपाध्याय" की उपाधि से विभूषित किये गये और आपको १००) वार्षिक दक्षिणा मिलने लगी तथा आप सेला और पगड़ी से सम्मानित किये गये।

लोक हितकारी कार्य

सरकारी नौकरी से पेंशन ले लेने पर भानु महोदय ने अपना अधिकांश समय लोक हितकारी कार्य की ओर लगाना आरंभ किया। सन् १९१३ में आपने श्रीकृष्ण पुत्रीशाला के अध्यक्ष का पद संभाला और उसे अच्छी दशा में पहुँचाकर म्युनिसिपाल्टी के जिम्मे कर दिया। उसी वर्ष आपने जगन्नाथ प्रेस नामक अपना प्रेस खोल कर बिलासपुर जिले के एक बड़े अभाव की पूर्ति की। आप निज रचित पुस्तकें इसी प्रेस में छपवाते थे और केवल लागत के दाम पर बेचवाते थे। सन् १९४० में आप बिलासपुर डिस्पेंसरी के मेम्बर हुए और उसी सन् में जर्मन युद्ध छिड़ जाने पर वार रिलीफ फंड (युद्ध निवारण कोष) के खजांची चुने गये। सबसे बड़ा कार्य आपने बिलासपुर जिले में जनता विशेष कर किसानों के हिताथ यह किया जो सहकारी बैंक (सेंट्रल कोआपरेटिव्ह बैंक) की स्थापना सन् १९१५ में कर दी। आज दिन इसकी ३००० से अधिक शाखाएँ जिले में फैली हुई हैं और यह मध्यप्रदेश के समस्त बैंकों में अग्रगण्य माना जाता है।

सन् १९२२ में जब प्रिंस ऑफ वेल्स का आगमन हिन्दुस्थान में हुआ उस समय उनके स्वागतार्थ जो समिति बिलासपुर में बनी उसके आप प्रेसीडेंट चुने गये और अपनी लोक प्रियता के कारण एक खासी रकम एकत्र कर भिजवाई। इस समय भी आप "महाकोशल हिस्टारिकल सोसायटी" की कौंसिल के प्रेसीडेंट थे और मध्यप्रांतीय लिटरेरी एकाडमी के आजीवन सदस्य थे। आपकी

कई पुस्तकें भिन्न भिन्न प्रांतों के शिक्षा विभाग द्वारा स्कूलों की लाइब्रेरी में रखने के लिए स्वीकृत की गई हैं तथा कई पुस्तकें लंदन के इम्पीरियल म्यूजियम में रखने के लिए भेजी गई हैं।

साहित्य वाचस्पति महोदय का साहित्यिक जीवन अत्यंत परिश्रम पूर्ण और उत्तरोत्तर प्रगतिशील रहा है। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है इनके मानसिक गुरु स्वयं पिंगल भगवान हैं। सच पूछिये तो जो मनुष्य मेधावी होते हैं, भिन्न भिन्न ग्रंथ ही उनके पथ प्रदर्शक होते हैं और उनकी प्रतिभा उनको ज्ञान पथ को अलोकित करती रहती हैं। भानु महोदय दिन भर तो सरकारी काम करते और रात को भिन्न भिन्न काव्य ग्रंथों का अध्ययन और मनन कर और अपना ज्ञान-भाण्डार संचित करते। पश्चात् जब आप मुहकमे बंदोबस्त के चार्ज में हो गये तब आपको और भी कम समय मिलने लगा, पर आपकी काव्य चर्चा और उसके अध्ययन का कार्यक्रम निरंतर जारी रहा, जिससे आपको रात्रि के ११-१२ बजे तक जागना पड़ता था। एक बार का जिक्र है कि आप दौरे में बड़ी रात तक काव्य ग्रंथ का अवलोकन करते करते सो गये। प्रभात काल में जब इनकी नींद नहीं खुली, तब एक नौकर इन्हें जगाने आया। वह क्या देखता है कि काला नाग इनके सिरहाने फन काढ़े बिस्तर पर ऐसा बैठा हुआ है मानो शेषावतार श्रीपिंगलाचार्य महाराज अपनी छत्रछाया के नीचे आशीर्वाद सा दे रहे हों। उसने तत्काल हल्ला किया। अनेक लोग जुड़ गये और उस सर्प को मार डालना चाहा पर आपने मना कर दिया। सर्प वहीं कहीं बिल में जाकर घुस गया। उस दिन दीन अनाथों को बहुत सी दान-दक्षिणा दी गई।

हमारे चरितनायक का उपनाम 'भानु' था। यह उपनाम किस प्रकार आपको मिला इसका भी एक इतिहास है। एक बार आप सन् १८८५ में काशी आकर बाबू रामकृष्ण वर्मा के यहां ठहरे। वहां अनेक विद्वानों के सामने आपने पिंगल का चमत्कार दिखलाया। इनकी प्रतिभा और विद्वत्ता का प्रखर तेज देखकर लोगों ने चकित होकर कहा—'आप तो साक्षात पिंगलाचार्य हैं, कवियों में भानु हैं।' तभी से आपका उपनाम 'भानु' हो गया जिसे इन्होंने अपना भी लिया।

इनका लिखा सबसे पहला ग्रंथ "छन्दः प्रभाकर" है जिसकी रचना सन् १८९४ ई० में हुई थी। इसमें छन्दों की गति, भिन्न भिन्न छन्दों के लक्षण, उदाहरण आदि अत्यन्त सरल रीति से लिखे गये हैं। इसमें विशेषता यह है कि

प्रत्येक छंद में उस छंद के लक्षण, नाम और उदाहरण दिये गये हैं और समष्टि रूप से समस्त पदों में श्रीरामकृष्ण का गुणगान किया गया है। इस ग्रंथ में हिन्दी और उर्दू काव्य की तुलना भी की गई है। छन्दः प्रभाकर के प्रकाशन के पश्चात् यद्यपि बहुत सी पुस्तकें इस विषय पर प्रकाशित हो चुकी हैं, पर विद्वानों का यह निश्चित मत है कि इस विषय पर अब तक छन्दः प्रभाकर के जोड़ का दूसरा ग्रंथ नहीं लिखा जा सका है। इसकी लोक प्रिकप्रियता, उपयोगिता और प्रचार का प्रमाण यह है कि अब तक दस संस्करण छप चुके हैं। इस ग्रंथ को पढ़ कर न जाने कितने जन कवि और कविता प्रेमी हो गये।

आपका दूसरा ग्रंथ "काव्य प्रभाकर" है। लगभग ८०० पृष्ठों के इस बृहतकाय ग्रंथ का प्रकाशन सन् १६०५ में कल्याणस्थ श्री लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई ने किया था। यह ग्रंथ बारह मयूखों में विभाजित है। प्रथम मयूख में छन्दों के भेद बताये गये हैं। द्वितीय मयूख में ध्वनि-भेद, काव्यगुण, काव्यभेद, गद्य-पद्य काव्य, नाटक, संगीत, काव्यांग आदि का वर्णन किया गया है। तृतीय मयूख में नायिका भेद वर्णित है। चतुर्थ मयूख में उद्दीपन विभाग का वर्णन है, जिसके अंतर्गत 'नखशिख' का भी वर्णन आ गया है। पंचम मयूख में सात्विक, कायिक और मानसिक अनुभावों के भेदानुभेद बताये गये हैं। छठे मयूख में संचारी भाव का वर्णन है जो तैंतीस प्रकार के होते हैं और जो नवों रस में संचार करते हैं। सप्तम मयूख में स्थायी भावों का वर्णन किया गया है। अष्टम मयूख में काव्य की आत्मा नवरसों (शृङ्गार, हास्य, करूणा, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, अद्भुत और शांत) का विस्तृत वर्णन है। नवम मयूख में अलंकारों की विशद व्याख्या की गई है। दशम मयूख में दोषों का वर्णन है जिनसे कवियों को बचना चाहिए। एकादश मयूख में काव्य निर्णय किया गया है अर्थात् समस्त मयूखों में दिये गये विषयों पर शंकाओं का निर्णय सप्रमाण दिया गया है और द्वादश मयूख में कोश-लोकोक्ति संग्रह है। इस प्रकार यह काव्य सम्बन्धी सर्वाङ्गपूर्ण ग्रंथ है। यह नागपूर विश्वविद्यालय से एम० ए० परीक्षा के लिये स्वीकृत हो चुका है।

आपकी तीसरी पुस्तक छंदः सारावली" (सन् १६१७) आपके पेंशन लेने के पश्चात् लिखी गई है। इसमें पिंगल का बोध सूत्र रूप से सरल भाषा में कराने का प्रयत्न किया गया है। विद्यार्थियों के लिए यह परमोपयोगी है। आपकी चौथी पुस्तक "अलंकार प्रश्नोत्तरी" (सन् १६१८) है। इसमें अलंकार

सम्बन्धी प्रश्न किये गये हैं साथ ही उनके उत्तर भी दे दिये गये हैं। आपकी पांचवीं पुस्तक "हिंदी काव्यालंकार" सन् १९१८ में प्रकाशित हुई है। इसमें प्रत्येक घेरे के आधे में अलंकारों के लक्षण और आधे में उनके उदाहरण दिये गये हैं। आपकी छठी पुस्तक "काव्य प्रबंध" (१९२०) है जिसमें संस्कृत और भाषा काव्य कुसुमांजलि भी गुंफित कर दी गई है। इसमें काव्य रचना के समय किन किन बातों पर ध्यान रखना चाहिये, इसका पूर्ण विवेचन किया गया है। आपने अपनी सातवीं पुस्तक "काव्य कुसुमांजलि" (सन् १९२० में) भिन्न भिन्न कवियों की सरस और अनूठी) उक्तियों का संग्रह किया है आपकी आठवीं पुस्तक "नायिका भेद शंकावली" (सन् १९२५) है जिसका विषय पुस्तक के नाम से ही स्पष्ट है। आपकी नवीं पुस्तक "रस रत्नाकर" (सन् १९२७) है जिसमें प्रत्येक रस का विशद वर्णन किया गया है साथ ही उदाहरण भी दे दिये गये हैं। आपकी दसवीं पुस्तक "अलंकार दर्पण" (सन् १९३६) है, इसमें श्रीतुलसीकृत रामायण से प्रत्येक अलंकार के उदाहरण दिये गये हैं।

यह तो हुआ पूज्य 'भानु' कवि के रचित साहित्य और काव्य सम्बन्धी पुस्तकों का संक्षिप्त परिचय। अब इनकी अन्य पुस्तकों के सम्बन्ध में किंचित जानकारी कीजिए—

साहित्याचार्य महोदय श्री तुलसीकृत रामायण के बड़े ही प्रेमी और भक्त थे यही कारण है कि रामायण प्रेमी जो विद्वान इनसे मिलने आते इनसे बड़ी देर तक और कभी कभी तो कई दिनों तक रामायण पर वार्तालाप या उस पर प्रवचन करने का अवसर पाते रहे। इन्होंने रामायण पर निम्नलिखित पुस्तकें लिखी हैं:—

१ **नव पंचामृत रामायण**--(लघु पिंगल सटीक सन् १९२४) इसमें रामायण के समस्त छंदों के लक्षण उदाहरण सहित दिये हैं।

२ **श्री तुलसी तत्व प्रकाश**--(प्रश्नोत्तर सहित सन् १९३१) इसमें श्री तुलसी कृत रामायण के गूढ़ तत्वों का वर्णन है।

३ **रामायण वर्णावली**--(सन् १९३६) इसमें वर्णमाला के क्रम के अनुसार रामायण के पदों का संग्रह है।

४ **श्री तुलसी भाव प्रकाश**--(सन् १९३७) इसमें मानस सम्बन्धी अनेक शंकाओं का समाधान किया है।

भानु महोदय गणित के भी उद्भट विद्वान थे और इस विषय पर इन्होंने निम्नलिखित पुस्तकों की रचना की है—

१ काल प्रबोध—(सन् १८६६) इसमें हिन्दी तिथि से अंगरेजी तारीख निकालने की रीति बताई है।

२ अंक विलास—(सन् १६२५) यह अंकपाश-विद्या का अनूठा ग्रंथ है जिसकी प्रशंसा बड़े बड़े विद्वानों ने की है।

३ काल विज्ञान—(सन् १६२६) सृष्टि के आरंभ से आज तक जितने संवत प्रचलित हैं उनका इसमें विस्तार पूर्वक वर्णन है।

आपने कुछ फुटकर पुस्तक या पुस्तिकाएँ भी लिखी हैं जिनका संक्षिप्त उल्लेख नीचे किया जाता है—

१ तुम्हीं तो हो—(सन् १६१४) इसमें श्री रामकृष्ण के भजन हैं और जिसके प्रत्येक पद के अंत में "तुम्हीं तो हो" आता है। इस प्रान्त के ग्रामों में इसका बहुत प्रचार है।

२ जय हरि चालीसी—(सन् १६१४) इसमें भी श्रीरामकृष्ण के भजन हैं जो प्रभाती के तर्ज पर लिखे गये हैं और जिसके प्रत्येक पद के अन्त में "करी, धरी, हरी" इत्यादि आता है।

३ शीतला माता भजनावली—(सन् १६१५) बिलासपुर जिले के भिन्न २ प्रमुख स्थानों में (रतनपुर, तखतपुर, कवर्धा आदि) शीतला निकलने पर जो भजन शांति प्रीत्यर्थ गाये जाते हैं, उनमें से अत्यन्त ललित और मनोहर पद छाँट कर इसमें संग्रह कर दिये गये हैं।

इनके सिवाय इन्होंने ग्राम निवासियों के आग्रह से उनके विनोदार्थ "खुसरा चिरई के बिहाव" आदि कई छोटी २ पुस्तकें छत्तीसगढ़ी बोली में लिख दी थी जो बहुत मनोरंजक हैं और गांवों में बड़े चाव से पढ़ी जाती हैं।

महामहोपाध्यायजी ने अंगरेजी में भी तीन छोटी छोटी पुस्तिकाएँ लिखी हैं जिनका विषय उनके नाम से ही प्रगट है। उनके नाम ये हैं—

1	Key to Perpetual Calender B. C.	(1927)
2	„ A. D.	(„)
3	Combination and Permutation of figures	(„)

आप उर्दू के भी प्रसिद्ध विद्वान थे और उसमें इनका उपनाम "फैज" रक्खा। आपने इस भाषा में निम्नलिखित दो पुस्तकें लिखी हैं।

१ गुलजारे सखुन--(सन् १९०९) इसमें उर्दू के प्रसिद्ध कवियों के चुनिंदा पद संग्रहीत हैं।

२ गुलजारे फैज--(सन् १९१४) इसमें आपकी रची हुई आध्यात्मिक और श्रृङ्गार विषयक कविताएँ हैं।

इसके सिवाय कुछ पुस्तकें अप्रकाशित हैं। इस प्रकार भानु कवि की सेवाएँ जहां अनुपम ठोस और स्थायी हैं वहां मनोरंजक, लोकप्रिय और सर्वमुखी भी हैं। इनके ग्रंथों और पुस्तकों से विद्वानों और विद्यार्थियों की साहित्यिक अभिलाषाएँ पूरी होती हैं और ग्रामीणों की भी मानसिक पिपासा शांत होती है। इनकी कुछ सुन्दर रचनाएँ इस लेख के अन्त में दी गई हैं।

साहित्यिक सम्मान

भानु-कवि का साहित्यिक सम्मान भी यथेष्ठ रूप से हुआ एक समय आपके साहित्यिक और काव्य शास्त्र सम्बन्धी व्याख्यानों की बड़ी धूम थी। मध्यप्रांत में आपके प्रभाव से कई नगरों में कवि-समाज स्थापित हुए जिनमें सागर का "आदि भानु-कवि समाज" प्रमुख है। ये यथाशक्ति इन समाजों को सहायता और उत्साह दान देते रहे। इन समाजों में किसी से चंदा नहीं लिया जाता। इनके उद्योग से दो काव्य सम्बन्धी मासिक पत्र चलते रहे पर अन्त में कई झगड़ों से वे बंद हो गये।

आप भारतवर्ष के प्रायः समस्त प्रधान स्थानों का भ्रमण कर चुके थे। जहां जहां आप गये आपकी बड़ी अभ्यर्थना हुई और आपको अभिनन्दन पत्र दिये गये, जिनमें महाराजाधिराज मिथिला-दरभंगा नरेश श्रीमान् स्वर्गीय रामेश्वरसिंह जी द्वारा दिया गया मानपत्र विशेष उल्लेखनीय है। सन् १९२५ में आपने कानपुर के अखिल भारत वर्षीय कवि सम्मेलन के सभापति का आसन सुशोभित किया था। उस समय इन्होंने जो भाषण दिया था वह इतना मर्मस्पर्शी और महत्व पूर्ण था कि कई वर्तमान पत्रों ने उसे ससम्मान प्रकाशित किया था। वहां आपके अनेक सारगर्भित भाषण भी हुए और आपको अभिनन्दन पत्र दिया गया सच पूछिये तो पूर्ववर्ती हिन्दी कवियों की कृतियां का जैसा गम्भीर अध्ययन भानु महोदय ने किया था, कदाचित् ही किसी वर्तमान

साहित्यिक ने किया हो। आपके इन्हीं गुणों से मुग्ध होकर रायगढ़ नरेश स्व-- र्गीय राजा भूपदेवसिंह बहादुर ने आपका बड़ा सम्मान किया था और आपको साहित्याचार्य की उपाधि प्रदान कर अपनी गुणग्राहकता का परिचय दिया था।

सबसे महान और उल्लेखनीय सम्मान आपका अखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने सन् १९३८ में अपनी शिमलावाली बैठक में किया जो सात साहित्य महारथियों को उनकी ठोस हिन्दी सेवाओं के उपलक्ष में "साहित्य वाचस्पति" की उपाधि, भारतीय पद्धति के अनुसार सुन्दर ताम्रपत्र पर लेखबद्ध करके प्रदान किया और उनका गौरव किया। ये सात साहित्य सेवी जिन्हें हम सप्त ऋषि भी कह सकते हैं ये हैं – १–महात्मा मोहनदास करमचंद गांधी २—डा० ग्रियर्सन ३- पं० महाबीरप्रसाद द्विवेदी ४–पं० गौरीशंकर ओझा ५ रायबहादुर श्यामसुन्दरदास ६--पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध ७— रायबहादुर जगन्नाथप्रसाद भानु। अपने जिले के एक महान साहित्य सेवी के इस उच्चत्तम उपाधि के प्राप्त करने के हर्ष में बिलासपुर की "भारतेन्दु साहित्य समिति" ने सन् १९३९ में टाउनहाल में एक बड़ी सभा करके भानु महोदय को बड़े समारोह के साथ अभिनन्दन पत्र देकर आपने को कृतार्थ और गौरवान्वित किया था। इस सभा के सभापति का आसन साहित्य वाचस्पति महोदय के अंतरंग मित्र साहित्यावर्ण साहित्य वाचस्पति काव्य विनोद पं० लोचनप्रसादजी पाण्डेय ने ग्रहण किया था। खेद है कि पाण्डेय जी का निधन दि० १८ नवम्बर १९५९ की सन्ध्या को रायगढ़ में हो गया।

मित्र–मण्डली

भानु महोदय के मित्रों की संख्या बहुत बड़ी थी। कई उच्च पदस्थ राज कर्मचारी जो सेक्रेटरियट की शोभा बढ़ा रहे थे या किसी मुहक्मे के सबसे बड़े आफिसर (Head) इन्हें अत्यन्त आदर की दृष्टि से देखते थे और अपने बिलासपुर के दौरे में इनके यहां आकर इनके प्रति अपना सम्मान प्रकट करते थे। आपकी सिफारिश से न जाने कितने लोग गवर्नमेंट सर्विस हासिल कर आज अच्छे अच्छे पदों पर विद्यमान हैं।

राजा महाराजाओं में दरभंगा नरेश स्वर्गीय श्रीरामेश्वरसिंहजी आपके काव्यशास्त्र सम्बन्धी पाण्डित्य से मुग्ध होकर आपकी बड़ी प्रतिष्ठा करते थे। खंडवा में श्रीमान् रीवां (बांधव) नरेश तथा मैहर नरेश आपके अतिथि रह

चुके हैं। हैदराबाद के भूतपूर्व निजाम इनसे बहुत स्नेह रखते थे। रायगढ़ नरेश स्वर्गीय राजा भूपदेवसिंह बहादुर तत्पश्चात् श्रीमान् चक्रधरसिंहजी भी आपके प्रति बड़ी श्रद्धा रखते थे। वर्तमान सक्ती नरेश का भी आपके प्रति अत्यन्त पूज्य भाव था।

स्वर्गीय महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आपको एक आशीर्वादात्मक पत्र भेजकर आपके दीर्घजीवी होने की शुभकामना की थी।

साहित्यिकों में स्वर्गीय पं० अम्बिकादत्त व्यास आप पर बड़ी कृपा रखते थे और भानु महोदय की भी उन पर बड़ी श्रद्धा और भक्ति थी। भारत जीवन प्रेस के स्वामी स्वर्गीय रामकृष्ण वर्मा काशी, स्वर्गीय सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास मालिक श्रीवेंकटेश्वर प्रेस बम्बई, नागरी प्रचारिणी सभा के सभापति प्रसिद्ध पुरातत्वज्ञ रायबहादुर डाक्टर स्वर्गीय हीरालाल (रिटायर्ड डेपुटी कमिश्नर,) स्वर्गीय पं० गणपतिलाल चौबे (एजंसी इन्सपेक्टर), स्वर्गीय ठा० जगन्मोहनसिंह, स्वर्गीय पं० विनायकराव भट्ट, स्वर्गीय पं० माधवराव सप्रे आदि अनेक सज्जन इनके परम मित्र थे। स्वर्गीय पं० गंगाप्रसाद अग्निहोत्री तथा स्वर्गीय सैयद अमीरअली 'मीर' इन्हें गुरूवत् मानते थे। श्री पं० पुरुषोत्तमप्रसाद पाण्डेय, पं० गयाप्रसाद शुक्ल सनेही, प्रसिद्ध समालोचक पं० रामदयाल तिवारी, ठाकुर प्यारेलालसिंह, पं० लोकनाथ सिलाकारी, पं० प्रयागदत्त शुक्ल, हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान डाक्टर बल्देवप्रसाद मिश्र, महामहोपाध्याय प्रोफेसर मिराशी, पं० मुकुटधर पाण्डेय तथा अन्य पाण्डेय बंधु, ठाकुर जयरामसिंह इत्यादि प्रसिद्ध साहित्यसेवी इन्हें सदैव अत्यन्त सम्मान की दृष्टि से देखते रहे। हिन्दी के प्रसिद्ध व्याकरणाचार्य और सुकवि पं० कामताप्रसादजी गुरू ने तो इन पर एक अत्यन्त सुन्दर कविता लिखकर और सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका सरस्वती में छपाकर इन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पण की थी। हिंदी के प्रतिष्ठित कवि, लेखक और पुरातत्वज्ञ श्रद्धेय पं० लोचनप्रसादजी पाण्डेय जब जब इनसे मिलते थे, तब तब गुरूजी की जिस कविता का ऊपर उल्लेख किया गया है उसकी निम्नलिखित पंक्तियों का पाठ अत्यन्त श्रद्धापूर्वक करते हुए उनका अभिवादन करते रहे और भानु महोदय उन्हें गले से लिपटा कर उनके प्रति अपना अगाध प्रेम प्रकट करते थे।

छंदः पथदर्शक कवि भानु, छन्दों जलधि जिन्हें परमाणु।
जिनका छंद-प्रभाकर ग्रंथ, विद्युत्-प्रभा-प्रकाशित पंथ॥
कालिदास से कविता कामी, मनसा ईदृश कवि नमामी॥

स्वर्गीय पं० मेदिनीप्रसाद पांडेय, स्वर्गीय पं० पुत्तीलाल शुक्ल, स्वर्गीय पं०शिवदास पाण्डेय, पं० द्वारिकाप्रसाद "विप्र" पं० सरयूप्रसाद तिवारी 'मधुकर, पं० शेषनाथ शर्मा शील, पं० भैरवप्रसाद रामायणी आदि अनेक कवि और साहित्यसेवी आपके प्रति अत्यन्त पूज्य भाव रखते रहे।

मध्यप्रांत के भूतपूर्व गवर्नर स्व० डाक्टर श्रीराघवेन्द्रराव जो पहिले वाइसराय को कौन्सिल के मेंबर थे इन्हें अत्यन्त सम्मानीय दृष्टि से देखते थे। खेद है कि अब ये इस संसार में नहीं रहे।

इन पंक्तियों के लेखक का पूर्ण विश्वास है कि इतने नाम देते हुए भी वह भानु महोदय के अनेक मित्रों और शिष्यों के नाम स्मरण न आने के कारण छोड़ रहा है और इसके लिए वह उनसे क्षमा प्रार्थी है।

दिनचर्या और स्वभाव

महामहोपाध्यायजी की दिनचर्या घड़ी के सदृश्य नियमित और सुविभाजित थी। वे छः बजे स्नान कर लेते थे। पश्चात् ईशवंदना और भजनादि करके अल्प जलपान करते और पठन-पाठन में रत हो जाते। इसी बीच में ये लोगों से मिलते जुलते तथा उन्हें काव्य प्रणाली की शिक्षा देते जो इसके अभिलाषी थे। ठीक साढ़े नौ बजे ये साधारण सा भोजन कर लेते थे। घंटा-डेढ़ घंटा आराम करने के पश्चात् फिर ये अपना समय सबेरे के सदृश पठन-पाठन काव्य चर्चा और मिलने-जुलने में व्यतीत करते। संध्या को ६ बजे अल्पाहार करके फिर ये सो जाते और सबेरा होते तक न किसी से मिलते जुलते और न बाहर निकलते थे।

भानु महोदय स्वभाव से बड़े सहृदय, गुणग्राही और मिष्टभाषी थे। अभिमान तो उन्हें छू तक नहीं गया था। छोटे से छोटे व्यक्ति तक से वे बड़े प्रेम से मिलते थे। परिचितों को देखते ही गले से लगा लेते थे। जो उनके निकट कुछ पूछने, सम्मति लेने या शिक्षा प्राप्त करने जाता, उसे अत्यन्त सहृदयता के साथ सहायता देते। बिलासपुर में आने वाला कदाचित ही कोई ऐसा गुणी, विद्वान संगीतज्ञ, व्याख्याता, लेखक या कवि होगा जो इनका दर्शन न करता रहा हो। ये सबकी उचित अभ्यर्थना करते और आवश्यकता पड़ने पर बिदाई भी देते। ये स्वरचित पुस्तकों का दान भी करते रहते थे। जब उनके पास

कोई जाता सम्मति के लिए आई हुई पुस्तकों का ढेर रक्खा हुआ पाता। कोई इनसे अपनी पुस्तक की प्रस्तावना लिखाना चाहता तो कोई इन्हें अपनी पुस्तक समर्पण करना चाहता। कोई इनसे अपने पुत्र या भाई या अन्य रिश्तेदारों के लिए अच्छी चाल चलन का सार्टीफिकेट मांगने आया तो कोई इनसे यह निवेदन करता कि ये उसे सरकारी उच्च पद की प्राप्ति में 'रेफरी' (सम्मति दाता) बन कर या अन्य किसी भांति से सहायता पहुँचावें। इस प्रकार ये अपना अधिकांश समय काव्य-शास्त्र-विनोद में व्यतीत करते या दूसरों के उपकार चिंतन में। स्वर्गीय पं० कामताप्रसादजी गुरू की, उनके सम्बन्ध में लिखी गई, निम्नलिखित पंक्तियां उन पर बिलकुल फिट होती रहीं—

जिनका अहंकार उपकार, वसुधा जिनका प्रिय परिवार।
देखो अन्तर्नयन उघार, अपनों में अपना अवतार॥

साहित्य वाचस्पति महोदय बड़े विनोदशील भी थे। कभी कभी ऐसी मीठी चुटकी लेते कि हँसी रोके नहीं रुकती एक बार एक पत्रकार ने एक नया मासिक पत्र निकाला और प्रतिमास उसका १ अंक इनके पास भेजता रहा। साथ ही एक पत्र उसका वार्षिक मूल्य भेज देने के लिए भी रहता। इन्होंने जिस महीने में उसका मूल्य भेजा उसी महीने से उस पत्र का प्रकाशन बंद हो गया। जब इसकी चर्चा इनकी काव्य-विनोद मण्डली में चली, तब इनके एक शिष्य ने कहा—"साहब, जब तक कोई पत्र वर्ष-दो वर्ष न चल निकले, तब तक उसका मूल्य भेजना गलत है।" इन्होंने चट उत्तर दिया—"तब तो सभी पत्रकार तुम्हारे दरवाजे आकर सत्याग्रह करने लगेंगे अन्यथा उनके पत्र का प्रकाशन ही असंभव हो जावेगा।" उनके इस उत्तर से खूब हँसी हुई।

भानु महोदय के निकट एक बार एक विद्वान आये और वेदान्त पर उन्होंने एक छोटा, पर सारगर्भित व्याख्यान दे डाला जिसे सुनकर उपस्थित मित्रों में से एक जन बोल उठे -"आप तो बड़े भारी वेदांती मालूम होते हैं।" अब भानु महोदय को मजाक सूझी। उन्होंने चट अपना मुँह जिसमें एक भी दांत नहीं था खोल कर कहा—"चाहे ये जितने बड़े वेदान्ती हों पर क्या मुझसे भी बड़े हैं? खूब ठहाका हुआ।

* संतान *

भानु महोदय छः संतानों (तीन पुत्र और तीन पुत्रियों) के पिता थे। इनके ज्येष्ठ पुत्र स्वर्गीय बाबू जुगलकिशोर संस्कृत, हिन्दी, अंगरेजी और

मराठी भाषा के पण्डित तथा ख्यातनामा संगीतज्ञ थे। पिता साहित्य मर्मज्ञ और पुत्र संगीत मर्मज्ञ। साहित्य और संगीत के इस मधुर मिलन को देखते बनता था। आप १७ वर्षों तक आनरेरी मजिस्ट्रेट रहे और इस पद से स्तीफा देते तक फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट थे। आप अपने मुद्रण यंत्रालय (जगन्नाथ प्रेस) का काम भी देखते थे। खेद है दिसम्बर १९४७ में इनका भी स्वर्गवास हो गया। वे अपने पीछे अपनी सुयोग्य पत्नि, एक पुत्र (चि० घनश्याम उपनाम मोहन कुमार) तथा एक ज्येष्ठ पुत्री छोड़ गये हैं।

महामहोपाध्याय महोदय अन्त तक पठन पाठन में सदैव तत्पर रहे। यद्यपि वृद्धावस्था के कारण इनका शरीर कृश और दुर्बल हो गया था और स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं रहता था, पर स्मरणशक्ति वैसी ही प्रखर रही जैसी पहले थी। अलबत्तः ये कहीं आ-जा नहीं सकते थे। आप इन्हें सदा वृहद् ग्रंथागार में पुस्तक पढ़ते, या किसी साधू-महात्मा या विद्वान से वार्तालाप करते, या किसी विद्यार्थी को काव्य शिक्षा देते पाते। इनका आदर्श जीवन इस बात का पद पद पर प्रमाण देता रहा कि मनुष्य अपने परिश्रम, अध्यवसाय और सलग्नता से कहां से कहां पहुँच सकता है। इन्होंने संयम, नियम, और अध्ययन द्वारा अपने हृदय को इस प्रकार बना लिया था कि संसार की कोई भी हर्ष या विषाद पूर्ण घटना इनके हृदय में हलचल नहीं मचा सकती थी। ये सबको एकसा, ईश्वर की देनगी समझ कर परम तत्वज्ञानी दार्शनिक की भांति सिर पर झेलते थे। खेद है कि गगन का यह भानु हिन्दी संसार को अपनी प्रकाश किरणों द्वारा एक लम्बी अवधि तक आलोकित कर २५ अक्टूबर १९४५ के दिन अस्त हो गया।

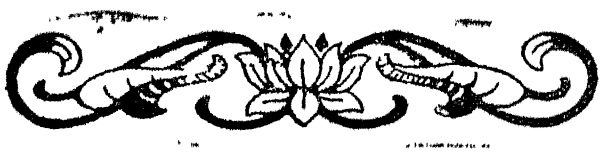

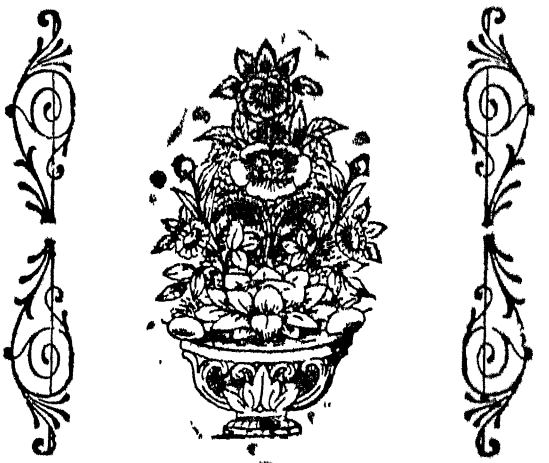

सूचीपत्र ।

छन्दों के नाम	पृष्ठ
अ, आ	
अम्र	२०२
अचल	१८६
अचलधृति	१८०
अद्रितनया	२०४
अतिबरवै	८३
अतिशायिनी	१८३
अनवसिता	१४५
अनंगक्रीड़ा	२३४
अनंगशेखर	२१३
अनुराग	१६०
अनुकूला ❀	१४४
अनुष्टुप ❀	१२८
अनंद	१६७
अपरभा	१२२
अपरांतिका	१०४
अपरवक्त्र	२२४
अपराजिता	१६८
अभीर	४४
अभंग	२३२
अमी	१३१
अमृतकुंडली	५८
अमृतगति	१३५
अमृतधुनि ❀	६६
अमृतधारा	२३१
अर्द्धाली	५२
अरविंद	२०७
अरसात ❀	२०६
अरल	५८
अरिल्ल ❀	४६
अरुण	५७
अवतार	६२
अश्वगति	१७६, १८६
अश्वललित	२०४
अशोक पुष्पमंजरी	२१२
असम्बाधा	१६४
अहि	१६८
अहीर	४४
अम्बा	१२२
आनंदवर्धक	५५
आपीड़	२३०
आपातलिका	१०४
आख्यानिकी	२२५
आभार ❀	२०५
आर्या ❀	१०१
आर्यागीति	१०२
आल्हा ❀	७४
ओवी	२३३
इ, ई	
इन्दिरा	१४५
इन्दव	२०३
इन्द्रवज्रा ❀	१३६
इन्द्रवंशा	१५१
इन्दुवदना ❀	१६८
ईश	१२६
उ, ऊ	
उज्वला (वर्णिक)	१५७
उज्वला (मात्रिक)	४८
उड़ियाना	६१
उत्पलिनी	१६३
उद्गता	२३१
उद्गीति	१०२
उद्धत	७६
उद्धर्षिणी	१६७
उदीच्यवृत्ति	१०३
उपगीति	१०१

छन्दों के नाम		पृष्ठ
६४. उपजाति ❀	...	१३६
६५. उपमान	...	६१
६६. उपमालिनी	...	२०६
६७. उपस्थित	...	१४४
६८. उपस्थित प्रचुपित	...	२३१
६९. उपस्थिता	...	१३३
७०. उपचित्र	...	१३८
७१. उपचित्र अर्द्धसम	...	२२४
७२. उपचित्रा	...	५०
७३. उपेन्द्रवज्रा ❀	...	१३६
७४. उमा	...	२००
७५. उल्लाल	...	११९
७६. उल्लाला ❀	...	४५
७७. उषा	...	११८
ऋ		
७८. ऋषभ	...	१७२
७९. ऋषभगज विलसिता	...	१७६
ए		
८०. एकावली	...	१६२
८१. एला	...	१७२
क		
८२. कज्जल	...	४६
८३. कंजअवलि	...	१६२
८४. कनकप्रभा	...	१६१
८५. कनकमंजरी	...	१४५
८६. कन्द	...	१६०
८७. कन्दुक	...	१५६
८८. कन्या	...	११७
८९. कबीर	...	६८
९०. कमल	...	११७, १२७
९१. कमला	...	१३१
९२. कमलावती	...	७५
९३. कमंद	...	७७
९४. करखा	...	७८
९५. करता	...	१२१
९६. करहंस	...	१२४
९७. कस ❀	...	७४
९८. करहंत	...	१२४
९९. कलहंस	...	१६१
१००. कला	...	११६
१०१. कलाधर	...	२१७
१०२. कली	...	१४५
१०३. कवित्त ❀	...	२१४
१०४. कांता	...	१८२
१०५. कान्तोत्पीड़ा		१५४
१०६. कामकला	...	५०
१०७. कामक्रीड़ा	...	१७०
१०८. कामदा ❀	...	१३२
१०९. कामना	...	१११
११०. कामनीमोहन	...	१४६
१११. कामरूप	...	६७
११२. कामा	...	११७
११३. काव्य	...	६३
११४. किरीट ❀	...	२०६
११५. किशोर	...	२०८
११६. कीर्ति ❀	...	१३३
११७. क्रीड़ा	...	११८
११८. क्रीड़ाचक्र	...	१८७
११९. कुकुभ	...	७३
१२०. कुंज	...	१७४
१२१. कुटजा	...	१६१
१२२. कुटिल	...	१६५
१२३. कुटिलगति	...	१६३
१२४. कुण्डल ❀	...	६०
१२५. कुण्डलिया ❀	...	६७
१२६. कुन्दलता	...	२०८
१२७. कुमारललिता	...	१२४
१२८. कुमारी	...	१६६
१२९. कुमुद	...	१३१
१३०. कुरंग	...	८३
१३१. कुसुमविचित्रा ❀	...	१५५
१३२. कुसुमस्तवक	...	२११
१३३. कुसुमितलतावेल्लिता	...	१८५
१३४. कृपाण ❀	...	२१६

छन्दों के नाम.	पृष्ठ
कृष्ण ...	११६
केतकी ...	१८८
केतुमती ...	२२४
केसर ...	१६६, १८६
केहरी ...	१४६
कोकिल ...	१८४
कोमलालापिनी ...	१६१
क्रौंच ...	२०८
ख	
खंजन ...	२०४
खंजा ...	२०६
खरारी ❀ ...	७३
ग	
गगनांगना ...	६५
गंग ...	४३
गगन ...	१३८
गंगाधर ...	२०४
गंगोदक ❀ ...	२०४
गजगती ...	१२७
गजल ...	४६
गण्डका ...	११६
गरुड़रुत ...	१८०
गाहिनी ...	६५
गिरिधारी ...	१५०
गिरिजा ...	१६२
गीता ...	६७
गीति ...	१०२
गीतिका (मात्रिक) ...	६७
गीतिका (वर्णिक) ❀ ...	१६६
गुपाल ...	४८
गोपी ...	४८
गौरी ...	१५१
ग्राहि ...	१३८
ग्वाल ...	११७
घ	
घनश्याम ...	१७८
घनाक्षरी ❀ ...	२१४
घनाक्षरी (रूप) ...	२१७
घनाक्षरी (देव) ...	२२१
च	
चक्र ...	१६८
चक्रविरति ...	१६८
चकिता ...	१७६
चकोर ...	२०३
चंचरी (मात्रिक) ...	८०
चंचरी (वर्णिक) ...	१८८
चंचरीकावली ...	१६०
चंचरी ...	१८८
चंचला ...	१७७
चंचलाक्षिका ...	१५५
चंडरसा ...	१२२
चंडिका ...	४६
चण्डी ...	१६२
चण्डवृष्टिप्रपात ...	२१०
चन्द्र ...	५३
चन्द्रकला ...	२०५
चन्द्रकांता ...	१७२
चन्द्रमणि ...	४६
चन्द्रलेखा ...	१७१
चन्द्रवर्त्म ...	१५०
चन्द्ररेखा ...	१६३
चन्द्रिका ...	१६३
चन्द्रावती ...	१७५
चन्द्रौरसा ...	१६५
चम्पकमाला ❀ ...	१३४
चला ...	१८७
चपला ...	१४३
चवपैया ❀ ...	७२
चान्द्रायण ...	५८
चामर ❀ ...	१६१
चारुहासिनी ...	१०४
चित्र ...	१७७

छन्दों के नाम	पृष्ठ	छन्दों के नाम	पृष्ठ
चित्रा	५०, १७०	तरंग	१८३
चित्रपदा	१२७	तार्टक ❀	७२
चित्रलेखा	१८६	तामरस	१५४
चुलियाला	७१	तारक	१६१
चौपई ❀	४८	तारा	११८
चौपाई ❀	५१, ५३	तारी	११७
चौबोला ❀	४८	तांडव	४५
चौरस	१२२	तारिणी	१५८
छ		ताली	११७
छप्पय ❀	६८	त्राना	१६२
छबि	४३	तीर्णा	११७
छाया	१६३	तिभा	११७
ज		तिलका	१२१
जप	६२	तिल्लना	१२१
जनहरण	२१७	तिल्ला	१२१
जयकरी	४८	तिलना	१२१
जलधरमाला	१४८	तिलोकी	५८
जलहरण	२१८	तीव्र	१८६
जलोद्धतगति	१५३	तुंग	१२७
जोहा	१२६	तुरंगम	१२७
झ		तूण	१७१
झूलना (प्रथम)	६७	तोटक ❀	१५०
झूलना (द्वितीय)	७८	तोमर ❀	४४
झूलना (तृतीय)	७६	त्वरितगति	१३५
ड		**द**	
डमरू ❀	२१६	दण्डक ❀	२०६
डिल्ला	५२	दिण्डकला ❀	७६
त		दण्डिका	१६६
तत	१५५	दमनक	१५५
तन्वी ❀	२०६	दान	१५४
तनुमध्या	१२२	दिगपाल ❀	६४
तपी	१२४	दिवा	२००
तरल	१६४	दिंडी	५६
तमाल ❀	५५	दीप	४४
तरणिजा	१२०	दीपक	१७५
तरलनयन ❀	१५८	दीपकमाला ❀	१३४
		दुमिल	७७

छन्दों के नाम	पृष्ठ
द्रुमिल सवैया ❀	२०५
देवघनाक्षरी ❀	२२१
देवी	११९
दोधक ❀	१४४
दोवै	६९
दोहा ❀	८४
दोहा (चंडालिनी) ❀	८६
दोही	९०
दौड़	९६
द्रुतमध्या	२२४
द्रुपद	६१
द्रुतपद	१५६
द्रुतविलंबित ❀	१५५
द्रुता	१३७
द्विज	१३६, १४६
द्विनराचिका	२१३
द्विमोधा	१२१
ध	
घत्ता	९१
घत्तानन्द	९२
धर्म	१९८
धरणी मात्रिक	४५
धरणी वर्णिक ❀	१३३
धर	११९
धरा	११९
धाम	१७१
धार	११८
धारि	११८
धारा	७१
धारी	१५३
धीरललिता	२७८
ध्रुव	८३
न	
नगस्वरूपिणी ❀	१२६
नंदन	१९०
नंदिनी	१६१
नदी	१७०
नभ	१५७
नरहरी	५१
नराच	१७८
नराचिका	१२६
नरेन्द्र	१९८
नलिनी	१७२
नवमालिका	१५६
नवमालिनी	१५६
नाग	६६
नागराज	१७८
नांदीमुखी	१६९
नायक	१२०
नाराच (१६)	१७८, १९१
नाराच (१८)	१९०
नारी	११७
निश्चल	६३, १७४
निम	४५
निधि	४४
निवास ९ वर्ण	१३०
निवास १२ वर्ण	१५७
निशिपाल	१७४
निसि	११९
नीलचक्र	२१२
नील	१७९
प	
पंकजअवलि	१६२
पंकावली	१६२
पंक्ती	१२१
पंकजवाटिका	१६२
पंचचामर ❀	१७७
पज्झटिका	५०
पंचाल	११७
पणव	१३१
प्रथा	१६९
पद्धरि	४९
पदपादाकुलक ❀	५२
पद्म	१२७

छन्दों के नाम		पृष्ठ	छन्दों के नाम		पृष्ठ
पद्मावती	....	७५	प्रचित	....	२१०
पवन	...	१५४	प्लवंगम	....	५७
पवित्रा	...	१२६	**फ**		
पाईता	...	१२६	फुल्लदाम	...	१६२
पादाकुलक ❀	...	४६, ५२	**ब**		
पादाताली	....	१२६	बंधु	..	१४६
पावक	...	१३४	बंदन	....	५४
पावन	...	१७४	वनमाली	....	१५१
पीयूषवर्ष	....	५४	बरवै	...	८३
पुट	...	१५६	बाधाहारी	...	१४६
पुनीत	...	४६	बाला	...	१३३
पुरारि	....	५४	बिधाता ❀	...	७०
पुष्पमाला	....	१६३	बिम्ब ६ वर्ण	....	१३०
पुष्पिताग्रा	...	२२५	बिम्ब १६ वर्ण	....	१६२
पुंज	...	११६	बिहारी ❀		६०
पृथ्वी ❀	...	१८३	बीर ❀	....	७४
प्रतिभा	....	१६६	बिंदु	...	१३४
प्रवक्तक	....	१०४	बुद्धि	....	६५
प्रबोधिता	...	१६१	बैताल	...	६७
प्रभद्रिका	....	१७६	**भ**		
प्रभा	...	१५७	भक्ती	.	१२३
प्रथिता	...	१२६	भद्रक	....	२०१
प्रभाती	...	६१	भद्रविराट	...	२२४
प्रत्यापीड़	...	२३०	भद्रिका	...	१२६
प्रभावती	...	१६१, १६२	भव	...	४४
प्रमदा	...	१६६	भानु ❀	...	५६
प्रमाणिका ❀	....	१२६	भाम	...	१७४
प्रमाणी	...	१२६	भारती	...	१३५
प्रमिताक्षरा ❀	...	१५०	भाराक्रांता	...	१८१
प्रमुदितवदना	....	१५५	भीम	..	१५२
प्रवरललिता	...	१७७	भुजगशिशुसुता	...	१३१
प्रहरणकलिका	..	१२७, १६८	भुजविजृम्भित	...	२०८
प्रहर्षिणी	...	१५६	भुजंगप्रयात ❀	...	१४८
प्राच्यवृत्ति	...	१०४	भुजंगसंगता	...	१२६
प्रियम्वदा	...	१५६	भुजंगिनी	...	४८
प्रिया	....	११७	भुजंगी ❀	...	१३६
प्रज्ञा	....	१६०			

छन्दों के नाम		पृष्ठ	छन्दों के नाम		पृष्ठ
भुआल	...	१२६	मदनारी	...	१५४
भूमिसुता	...	१४७	मदलेखा	...	१२३
भृंग	...	१३७	मदिरा ❀	...	२००
भ्रमरपदक	....	१३०	मधु	...	११७
भ्रमरविलसिता	...	१३६	मधुभार	...	४३
भ्रमरावली	...	१७२	मधुमती	...	१२५
म			मधुमालती	....	४७
मकरंद	...	३०६	मध्यश्यामा	...	१५४
मकरंदिका	...	१२४	मन्थान	...	१२२
मंजरी	...	१६५	मन्दर	...	११७
मंजरी (सवैया)	....	२०६	मन्दाक्रांता ❀	...	१८१
मंजरी (विषम)	...	२३०	मन्दाकिनी	...	१५५
मंजारी	....	१८१	मन्दारमाला ●	...	२००
मंजीर	...	१८६	मनमोहन	....	४७
मंजुतिलका	...	५७	मनहर ❀	...	२१४
मंजुभाषिणी	...	१६१	मनहरण ❀	... १७२,	२१४
मंजुमालिनी	...	१७५	मनहंस	....	१७२
मंजुमाधवी	...	२२५	मनोरम (मात्रिक)	...	४८
मणिगुणनिकर	....	२७५	मनोरम (वर्णिक	....	१६६
मणिगुण	...	२७५	मनोरमा	...	१३५
मणिमध्या	...	१३०	मनोहर	...	६५
मणिमाल	...	१६५	मयूरनया	....	१३६
मणिमाला	...	१५१	मयूरसारिणी	...	१३२
मणिकल्पलता	...	१८०	मयूरी	...	१३२
मत्तगयन्द ❀	...	२०२	मरहटा	...	७१
मत्तमयूर	...	१५६	मरहटा माधवी	....	७१
मत्तसमक	....	५०	मल्लिका	...	१२५
मत्तसवैया	...	७६	मल्लिका (सवैया)	...	२०२
मत्तमातंगलीलाकार	...	२१०	मल्ली	...	२०७
मत्ता	...	१३२	महर्षि	...	१३०
मत्ताक्रीड़ा	...	२०१	महानाराच	...	२१३
मत्ते भविक्रीड़ित	...	१६६	महामालिका	...	१६१
मदन	...	६४	महामोदकारी	....	१८७
मदनगृह	....	७६	महालक्ष्मी ❀	...	१२६
मदनललिता	...	१७६	महास्रग्धरा ●	...	१६६
मदनहर	...	७६	मही	....	११७
मदमाग	...	६६	महीधर	...	२१४

छन्दों के नाम		पृष्ठ	छन्दों के नाम		पृष्ठ
माणवक	....	१२७	मोद	...	२००
माता	....	१३६	मोदक ❀	....	१५३
मात्रिक (सवैया)	...	७४	मोहन	...	६३
माधव	...	१५२	मोहिनी (मात्रिक)	....	८३
माधवी	...	२०६	मोहिनी (वर्णिक)	...	१७३
मान	...	१६१	मंगल	...	१७३
मानव	...	४७	मंगली	...	१६६
मानस	...	१५७			
मानसहंस	...	१७२	**य**		
मानहंस	...	१७२	यम	...	१२१
मानिनी	...	२०२	यमुना	...	१५६
माया	...	१५६	यशोदा ❀	....	१२०
मालती (षडक्षरा)	....	१२२	युक्ता	..	१३१
मालती (द्वादशाक्षरा)	...	१५६	योग ❀	...	५६
मालती (सवैया)	....	२०३	यवमती	...	२२५
माला	...	१७५	**र**		
मालाधर	...	१८४	रति	...	१२०
मालिनी ❀	...	१७५	रतिपद	...	१३१
मालिनी (सवैया)	...	१६६	रतिलेखा	...	१७७
माली (मात्रिक)	...	५३	रणहंस	...	१७२
माली (वर्णिक)	...	१३५	रत्नकरा	...	१२८
मुक्तहरा	...	२०५	रथपद	..	१४६
मुक्तामणि	...	६५	रथोद्धता ❀	...	१३७
मुक्ति	...	१४७	रमण	...	११७
मुकुन्द	...	१६७	रमा	...	११६
मुद्रा	....	११८	रमेश	...	१५७
मुक्तक ❀	२०६, २१४, २३२		रलका	...	१२८
मुनिशेखर	...	१६६	रसना	...	१८५
मृगी	....	११७	रसाल	..	६३, १७८
मृगेन्द्र	....	११७	राग	...	१६१
मृगेन्द्रमुख	...	१६३	राजीवगण	...	५३
मृदुगति	....	६४	राधा	....	१६०
मेघविस्फूर्जिता	...	१६३	राधारमण	...	१५८
मैनावली	...	१५०	राधिका ●	...	६०
मोटनक	...	१४३	राम	...	५३
मोतियदाम ❀	...	१५२	रामा	...	१२६
मौक्तिकमाला	...	१४४	रास ❀	...	५६
			रुक्मवती	...	१३४

छन्दों के नाम	पृष्ठ
रुचिरा (मात्रिक) ❀	७३
रुचिरा (द्वितीय)	९१
रुचिरा (वर्णिक)	१६२
रूपघनाक्षरी ❀	२१७
रूपचौपाई	५२
रूपमाला	६४
रूपा	१२५
रेवा	१६५
रोला ❀	९३
रंगी	११८
ल	
लता	१[illegible]१
ललना	१५४
ललली	२३१
ललित	१५५, २३१
लालित्य	१९९
ललितकेशर	१६९
ललितपद	६९
ललिता	१५१
लवंगलता	२०७
लक्षी	२०४
लक्ष्मी	१६५
लक्ष्मीधर	१४९
लक्ष्मी मात्रिक	९५
लक्ष्मी (वर्णिक)	१२५
लालसा	१८९
लक्ष्मीधरा	१४९
लावनी ❀	७२
लीला (प्रथम)	४५
लीला (द्वितीय)	६४
लीला (वर्णवृत्त)	१२४, १७९
लीलाखेल	१७०
लीलावती	७५
लोला	१६४
व	
वरतनु	१५९
वरयुवती	१८९
वर्धमान	२३२
वर्ष	१२८
वसन्ततिलका ❀	१६६
वसुमती	१२२
वसुधा	१६६
वागीश्वरी	१४९, २०१
वाखिनी	१८०
वातोर्मि	१६३
वापी	१२५
वानवासिका	५१
वाम	२०५
वामा	१३४
वासना	१५८
वासन्ती ●	१६४
वाहिनी	१५२
विजया (मात्रिक)	८०
विजया (वर्णिक)	२२०
विजोहा	१२१
विजात	४६
विज्जोहा	१२१
वितान	१२६
विदोहा	८९
विद्या ❀	७०
विधाता	७०
विद्याधारी ❀	१४७
विद्युत्	१६३
विद्युन्माला ❀	१२५
विद्य लेखा	१२१
विध्वंकमाला	१३८
विन्दु	१३४
विलासी	१५९
विपिनतिलका	१७६
विपरीताख्यानिकी	२२५
विपुला	१२९
विबुधप्रिया	१८८
विमलध्वनि	७६

छन्दों के नाम	पृष्ठ	छन्दों के नाम	पृष्ठ
विमोहा ...	१२१	शिव ...	४४
विराट	१३२	शिवा ..	१४६
विलासी ...	१५६	शिष्या ...	१२३
विलासिनी ..	१४३	शीर्षरूपक	१२३
विशेषक ...	१७६	शील ...	१३८
विष्णुपद	६६	शुद्धगा ...	६८, ११८
वीरवर ...	१२४	शुद्धगीता ...	६८
विश्लोक	५०	शुद्धविराट ...	१३२
विस्मिता ...	१६३	शुद्धध्वनि	७५
वृत्त ...	१६६	शुद्धकामदा	१३२
वृत्ता ...	१४५	शुद्धविराटऋषभ ...	१३२
वेगवती ...	२२४	शुभग	७६
वैताल ...	६७	शुभगति ...	४३
वैतालीय ...	१०३	शुभगीता ..	६८
वैश्वदेवी ...	१४८	शुभोदर ...	१३०
वंशपत्रपतिता ...	१८३	शुभंगी ...	७४
वंशस्थविलम् ❀	१५२	शूर	१८४
श		शेषराज	१०१
शंकर ...	६६	शैल ...	१४६
शंखनारी ...	१२१	शैलसुता ...	२०४
शंभू ...	१६४	शोकहर ❀ ...	७३
शरभ ...	१७५	शोभन ...	६४
शशिकला ...	१७५	शोभा ...	१६५
शशिवदना ❀	१२२	श्याम	१३१
शक्ति ...	५४	श्येनिका	१३७
शशी ...	११७	श्रद्धा	१३५
शार्दूला ...	१८७	श्री ...	११७
शार्दूल ललिता ...	१८६	श्रीपद ...	१५७
शार्दूलविक्रीड़ित ❀ ..	१६१	शृंगार ❀ ...	५३
शारद ...	१८८	शृंगारिणी ...	१४६
शालिनी ...	१३५	श्लोक ...	१२८
शाली ...	१३७	स	
शाल् ...	२११	सखी ❀	४६
शास्त्र ...	५७	सगुण	५५
शिखा	२२५	सती	१२०
शिखारिणी ❀	१८२	समात सवैया ...	७६
शिखंडिन ...	१४४	समानिका ...	१२१

छन्दों के नाम	पृष्ठ	छन्दों के नाम	पृष्ठ
समानी ...	१२५	सुख ...	२०८
समुदविलासिनी ...	१८५	सुखदा ...	६१
समुद्रतता ...	१६५	सुजान ...	६२
समुच्चय ...	१६८	सुखदानी	२०७
सम्मोहा ...	१२०	सुषमा	१३४
सरस	४७	सुखेलक ...	१७६
सरसी (मात्रिक) ❀	६८	सुगती	४३
सरसी (वर्णिक) ...	१६८	सुगीतिका ❀	६६
सरिता ...	१६७	सुधा	१८८
सर्वगामी	२०२	सुधानिधि ...	२१३
सवैया (मात्रिक) ...	७४	सुधी ...	११६
सवैया (वर्णिक) ...	२००	सुन्दरी ❀ १३५, १५५,	२०२
सवाई	७६	सुन्दरी (सवैया) ❀	२०७
सवासन	१२४	सुनंदिनी ...	१६१
साकी ...	६६	सुपवित्रा ...	१७०
सान्द्रपद	१४४	सुभद्रिका ...	१४६
साधु ...	१५८	सुमति ...	१५८
सायक ...	१३८	सुमाला ...	१२३
सार (मात्रिक) ❀	६६	सुमित्र	६५
सार (वर्णिक) ❀	११७	सुमंदर	६८
सारंग ...	१४०	सुमधुरा	१६३
सारस	६५	सुमुखी ...	१४५
सारंगिक	१३०	सुमुखी (सवैया) ❀ ...	२०२
सारंगी ...	१७०	सुमेरु ❀ ...	५५
सार्थ ...	७४	सुरसा ...	१६३
सारवती ...	१३४	सुरसरी	१५१
सारिका ...	१८२	सुरेन्द्र ...	१६०
सिंधु	५६	सुलक्षण ...	४७
सिंह	५०	सुवंशा ...	१६५
सिंहनी ६५,	१६१	सुवास ...	१२४
सिंहनाद	१६१	सुवदना ...	१६५
सिंहविस्फूर्जिता ...	१८७	सूर	१२४
सिंहिका ...	६४	सेवा ...	१३३
सिंहविक्रांत ...	२१०	सोमराजी ...	१२१
सिंहविक्रीड़	२११	सोमवल्लरी	१७१
सिंहोन्नता ...	१६७	सोरठा ❀ ...	८६
सीता ❀ ...	१७१	सौम्यशिखा ...	२३४

छन्दों के नाम		पृष्ठ	छन्दों के नाम		पृष्ठ
सौरभ	...	१५३	हरिहर	...	१६६
सौरभक	....	२३१	हलमुखी	...	१२६
संत	....	५६	हाकलि	....	४६
सम्पदा	....	६२	हारिणी	...	१८१
संयुत	...	१३३	हारी	...	१२०
संयुक्ता	...	१३३	हारीत	....	१२०
स्त्री	...	११७	हित	...	१३८
स्रक	...	१७५	हीर (मात्रिक)	....	६२
स्रग्धरा *	...	१६७	हीर (वर्णिक)	....	१८६
स्रग्विणी ❀	...	१४६	हुल्लास	...	७५
स्वागता	...	१३७	हंस	....	१२१
ह			हंसगति	...	५७
			हंसमाला	...	१२३
हरनर्तन	...	१८८	हंसाल	...	६८
हरा	....	११६	हंसी (दशाक्षर)	....	१३२
हरि	...	१२०	हंसी (२२ अक्षर)	...	१६६
हरिगीतिका	...	६६	क्ष		
हरिणप्लुता	....	१८५, २२४	क्षमा	...	१६३
हरिणा (११ अक्षर)	...	१४४	त्र		
हरिणी (१७ अक्षर)	....	१८४	त्राता	...	१६२
हरिपद	...	६१	त्रिभंगी ❀	...	७४, २११
हरिप्रिया	....	८०	त्रिभंगी (दण्डका)	...	२११
हरिलीला	...	१६७			

इस सूचीपत्र में जिन छन्दों के आगे ऐसे ❀ चिन्ह हैं बहुधा वे ही परीक्षा में आया करते हैं।

अथ

श्री गणपति शारद चरण, बंदौं मन बच काय।
विघ्न अविद्या जाहि तें, तुरतहिं जात नसाय ॥ १ ॥
श्री गुरुपिंगलराय के, चरण वंदि अभिराम।
'छंदप्रभाकर' भानु--कवि, रचत सहज सुखधाम ॥ २ ॥
जाहि पढ़त समुझत सकल, छंद रचन की रीति।
सो पिंगल को शास्त्र यह, साधक हरिपद प्रीति ॥ ३ ॥
पिंगलऋषि निर्मित प्रगट, महामोद की खानि।
अंग वेद को पूज्य अति, जिमि हरिपद सुखदानि ॥ ४ ॥

प्रगट शेष अवतार, रामानुज पावन परम।
एक भक्ति आधार, जगत भार धर तूल सम ॥ १ ॥

छन्द लछण।

मत्त वरण गति यति नियम, अंतहिं समता बंद।
जा पद रचना में मिलें, 'भानु' भनत स्वइ छंद ॥

मात्राओं वा वर्णों की रचना, गति तथा यति (विराम) का नियम और चरणांत में समता जिस कविता में पाई जावें उसे छन्द कहते हैं।

छन्द निबद्ध सुपद्य है, गद्य होत बिन छन्द।
चंपू गद्यपद्यमय, 'भानु' भनत सानन्द ॥

जो रचना छन्द निबद्ध है वह पद्य है, जो बिना छन्द है वह गद्य है और जहां दोनों हों वह चंपू है।

गुरुलघु विचार।

वर्ण दो प्रकार के होते हैं—

(१) लघु-ह्रस्वाक्षर को लघु कहते हैं, लघु का चिन्ह है '।' जैसे—

अ इ, उ, क, कि, कु।

नं० २ के दोहे में पिंगल के दशाक्षर 'म न भ य ज र स त ग ल' का स्तवन है अर्थात् ये सब अक्षर इस दोहे में पाये जाते हैं।

(२) गुरु–दीर्घाक्षर को गुरु कहते हैं, गुरु का चिन्ह है 'ऽ' जैसे—

(१) आ, ई ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः ।

(२) का, की, कू, के, कै, को, कौ कं, कः ।

(३) संयुक्ताक्षर के पूर्व्व का लघुवर्ण गुरु माना जाता है जैसे –

सत्य, धर्म, चिन्ह-यहां स, ध, और चि गुरु है ।

संयुक्ताद्यं दीर्घं, सानुस्वारं विसर्ग सम्मिश्रं ।
विज्ञेयमक्षर गुरु पादान्तस्थं विकल्पेन ॥

(४) संयुक्ताक्षर के पूर्व्व का लघु जिस पर भार नहीं पड़ता, वहां लघु का लघु ही रहता है जैसे—

कन्हैया, जुन्हैया, तुम्हारी—यहां क, जु, और तु लघु ही हैं क्योंकि ये शब्द कनैया, जुनैया, और तुमारीवत् पढ़े जाते हैं । यथा—

शरद जुन्हैया मोद प्रद, करत कन्हैया रास ।

(५) अर्द्धचन्द्र बिंदु वाले वर्ण भी लघु ही माने जाते हैं जैसे—
हँसी, फँसी गँसी इत्यादि क्योंकि ये शब्द हसी फसी और गसीवत् पढ़े जाते हैं ।

(६) कभी २ चरण के अन्त में लघु वर्ण भी विकल्प से अर्थात् प्रयोजनानुसार गुरु मान लिया जाता है और उसका उच्चारण भी गुरुवत् होता है यथा—

'लीला तुम्हारी अति ही विचित्र'–यह इन्द्रवज्रा वृत्त का एक चरण है, नियमानुसार इसके अन्त में दो गुरु होते हैं । संयोगी वर्ण 'त्र' के पूर्व 'चि' तो गुरु हो गया, परंतु 'अ' जो लघु रह गया सो भी गुरु मान लिया गया और उसका उच्चारण भी गुरुवत् ही हुआ ।

गुरु लघु वर्णों का सारांश यों है—

दीरघहू लघु कर पढ़ें, लघुहू दीरघ मान ।
मुख सों प्रगटै सुख सहित, कोविद करत बखान ॥

अभिप्राय यह है कि वर्णों का गुरुत्व वा लघुत्व उनके उच्चारण पर निर्भर है जैसे—

(गुरु वर्ण का लघुवत् उच्चारण)

करत जो बन सुर नर मुनि भावन-यहां 'जो' का उच्चारण 'जु' के सदृश है अतएव जो' लघु माना गया।

(लघु वर्ण का गुरुवत् उच्चारण)

१ लीला तुम्हारी अतिही विचित्र, २ उपेंद्रवज्रादपि दारुणोऽसि—

इन दोनों पदों में 'त्र' और 'सि' पादांत में रहने के कारण गुरु माने गये हैं और उनका उच्चारण भी गुरुवत् ही होता है।

मात्रा विचार।

वर्ण के उच्चारण में जो समय व्यतीत होता है उसे मात्रा कहते हैं। जो काल लघु वर्ण के उच्चारण में लगता है उसकी एक मात्रा मानी जाती है और यह काल उतना ही होता है जितना एक चुटकी बजाने में लगता है। जो काल गुरुवर्ण के उच्चारण में व्यतीत होता है उसकी दो मात्रा मानी जाती है क्योंकि लघुवर्ण की अपेक्षा गुरुवर्ण के उच्चारण में दुगना काल लगता है।

एक मात्रो भवेद् ह्रस्वो, द्विमात्रो दीर्घ उच्यये।
त्रिमात्रस्तु प्लुत ज्ञेयो, व्यञ्जनंचार्द्ध मात्रकम्॥

गुरुवर्ण के पश्चात् हल् की अलग मात्रा नहीं ली जाती। जैसे भवेत् यहां 'त्' की अलग मात्रा न मानी जायगी, परन्तु लघु वर्ण के पश्चात् कोई हल् हो तो वह लघुवर्ण गुरु माना जायगा। यथा मात्रकम्, यहां लघु वर्ण 'क' के पश्चात् 'म' हल् है तो क' को गुरुत्व प्राप्त हो जाता है। बिना स्वर के व्यंजन का उच्चारण नहीं होता इसलिये व्याकरण में व्यजन की आधी मात्रा और प्लुत की तीन मात्राएं मानी जाती हैं, परन्तु अर्द्ध मात्रा और प्लुत का काम छन्दःशास्त्र में नहीं पड़ता। प्लुत का प्रयोजन संगीत शास्त्र में अधिक पड़ता है।

गुरु लघु के उदाहरण स्वरूप कुछ शब्द चिन्हों सहित नीचे लिखते हैं:—

शब्द और मात्राओं के चिन्ह	मात्रा	शब्द और मात्राओं के चिन्ह	मात्रा
ऽ ऽ ऽ । सीताराम	७	ऽ । राम	३
ऽ । ऽ । रामचंद्र	६	ऽ । चित्र	३
ऽ ऽ ऽ संयोगी	६	ऽ । सत्य	३
ऽ ऽ । शृङ्गार	५	ऽ । अर्क	३
ऽ ऽ । आश्चर्य्य	५	ऽ । धान्य	३
ऽ । दुःख	३	ऽ । कार्य्य	३
। ऽ रमा	३	। । रम	२
ऽ वत्	२	। । सुख	२

लघुवर्ण के सांकेतिक नाम—ल, ला ।
गुरुवर्ण के सांकेतिक नाम—ग, गा, गी, गो ।

शब्द योजना ।

छन्द की शुद्धता के अर्थ कवि लोग कभी कभी ह्रस्व को सस्वर, दीर्घ को ह्रस्व और ह्रस्व को दीर्घ मान लेते हैं यथा—विघ्न का विघम, और सीय का सिय वा हरि का हरी इत्यादि ।

इसी प्रकार छन्दोध्वनि की शुद्धता के हेतु कविजन यदा कदा व्याकरण की भी उपेक्षा कर निजेष्ट संपादित करते हैं । यथा—

स्फुटांगार वद्गांखुरैः स्पर्शयन्तो रटन्तो नटंतो भटंतोषयंतः ।
कुरंगा इवांगानि संकोचयंतस्सुरंगास्तुरंगापुरंगाह्वयंति ॥

इस पद्य के पूर्वार्द्ध में निजेष्ट सिद्ध्यर्थ शुद्धरूप 'भटान' के स्थान में 'भटम्' दिया है । इसके लिये प्रमाण भी है (अपिमार्षं मपं कुर्य्याच्छंदो भङ्गं न कारयेत ।) ऐसे ही भाषा में भी जानों । यथा रामायणे—

राम करौं केहि भांति प्रशंसा । मुनि, महेश मन मानस हंसा ।

यहां हंस के स्थान में हंसा लिखा है । ऐसेही और भी जानो ।

मात्रा के पर्य्यायवाची शब्द।

मात्रा के पर्य्यायवाची शब्द ये हैं—मता मत, कला, कल।

छंद भेद।

गुरु लघु के संयोग से ही नाना प्रकार के मात्रिक छन्द और वर्णवृत्त सिद्ध होते हैं।

छंद अहहिं द्वैविध जग माहीं, मात्रिक वर्णिक सुनत सुहाहीं। *
मात्रिक छंदहिं जाती कहिये, वर्णिक वृत्त कहत मुद लहिये॥ १॥
चारि चरण छंदनि प्रति जानो, पहिलो तीजो विषम प्रमानो।
दूजो चौथो कह सम चरणा, भेद लखौ जो आगे वरणा॥ २॥
चहुं चरणनि की गति सम देखो, सो सम छंद हिये में लेखो।
विषम विषम सम सम इकसेही, छंद अर्द्धसम जानिय तेही॥ ३॥
सम नहिं अर्द्ध समहुं नहिं जेते, छंद विषम कवि गावहिं तेते।
बत्तिस कल लगिसम छंदन गति, इनतें अधिक सुदंडक शुभमति॥ ४॥
वर्णिक छब्बिस लग सम वृत्ता, अधिक वर्ण दंडक सुनु मीता।
अर्द्ध समनि विषमनि गति न्यारी, समझत सुखद सुनत अति प्यारी॥५॥

छंद के मुख्य दो भाग हैं(१)मात्रिक अर्थात् जाति और (२)वर्णिक अर्थात् वृत्त। प्रत्येक के चार २ चरण होते हैं। पहिले और तीसरे चरणों को विषम चरण कहते हैं और दूसरे और चौथे को सम चरण कहते हैं। जिनके चारों चरणों की गति एकसी हो वे सम छंद, जिनके विषम के समान विषम और सम के समान सम चरण हों वे अर्द्धसम और जो न तो सम छद हों और न अर्द्धसम हों वे विषम छंद कहाते हैं। चार चरणों से न्यून वा अधिक पद वाले छंद भी विषम कहाते हैं। प्रति चरण ३२ मात्राओं तक साधारण और ३२ से अधिक मात्राओं वाले दंडक कहाते हैं। ऐसे ही वर्णिक वृत्तों में २६ वर्णों तक साधारण और २६ से अधिक वर्ण वाले दंडक कहाते हैं। नीचे एक छंदोवृत्त लिखकर इसका स्पष्टी करण किया गया है।

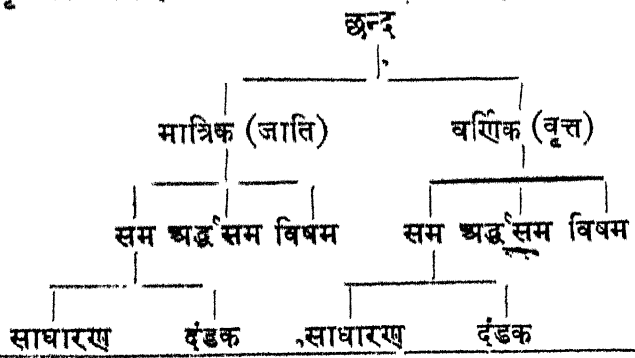

*पद्यं चतुष्पदं तच्च वृत्तं जातिरिति द्विधा। वृत्तमक्षरसंख्यातं जातिर्मात्राकृता भवेत्॥

मात्रिक छन्द लक्षण ।

मिलैं एक सम मत्त जहँ, चहुं चरणनि निरद्वंद ।
वरणनि क्रम नहिं एक सम, सोई मात्रिक छंद ॥

मात्रिक छन्द वह है जिसके चारों चरणों के प्रत्येक चरण में मात्रिक संख्या एक समान हो परन्तु वर्णों का क्रम एक सा न हो । यथा—

		वर्ण	मात्रा
१ पूरब भरत प्रीति मैं गाई	....	११	१६
२ मति अनुरूप अनूप सुहाई	...	१२	१६
३ अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन	...	१५	१६
४ करत जुबन सुर नर मुनि भावन	...	१५	१६

यह उदाहरण मात्रिक सम छंद का है । इसके चारों चरणों में १६, १६ मात्रायें हैं, परन्तु वर्णों का क्रम एकसा नहीं । इसीलिये यह मात्रिक छन्द है । जिस मात्रिक छन्द के पहिले और तीसरे चरण एक से हों तथा दूसरे और चौथे चरण भी एक से हों वे मात्रिकार्द्धसम हैं जैसे दोहा, सोरठा इत्यादि । जो छंद न सम हों और न अर्द्धसम हों वे मात्रिक विषम हैं, जैसे कुंडलियां छप्पय इत्यादि ।

वर्णवृत्त लक्षण ।

क्रम अरु संख्या बरण की, चहुं चरणनि सम जोय ।
सोई वर्णिक वृत्त है, भाषत सब कवि लोय ॥ यथा—

।।S।। S। ।S। ।S		वर्ण
१ जय राम सदा सुख धाम हरे	...	१२
२ रघुनायक सायक चाप धरे	...	१२
३ भव वारण दारण सिंह प्रभो	...	१२
४ गुण सागर नागर नाथ विभो	...	१२

यह उदाहरण वर्णिक समवृत्त का है । इसके चारों चरणों में वर्णों का क्रम एक समान है और उनकी संख्या भी एक समान है । इस लिये यह वर्णवृत्त है । जिस वर्णवृत्त के पहिले और तीसरे चरण एक से हों तथा दूसरे और चौथे चरण भी एक से हों वे अर्द्धसम वृत्त है, जैसे वेगवती, भद्रविराट इत्यादि । जो वृत्त न तो सम हों न अर्द्धसम हों वे विषम वृत्त हैं, जैसे आपीड़, प्रत्यापीड़ इत्यादि । इन विषम वृत्तों के पद भिन्न २ नियमों से बद्ध हैं ।

वर्णिक वृत्त और मात्रिक छन्द की पहिचान।

क्रम अरु संख्या वरण की, चहुं चरणनि सम जोय।
सोई वर्णिक वृत्त है, अन्य मातरिक होय॥

अथवा

क्रम बिन मत्ता, क्रम सह वृत्ता।
समकल वर्णा, गिन प्रति चर्णा॥

(पाठान्तर)

क्रम हत मत्ता, क्रम गत वृत्ता।
समकल वर्णा, गिन प्रति चर्णा॥

क्रमहतमत्ता अर्थात् सिलसिला लघु वा गुरु वर्णों का जिसके चारों चरणों में एक समान न हो परंतु मात्रिक संख्या समान हो वही मात्रिक छंद है।

क्रमगतवृत्ता – अर्थात् सिलसिला लघु वा गुरु वर्णों का जिसके चारों चरणों में एक समान हो और साथ ही साथ वर्ण संख्या भी समान हो वही वर्णवृत्त है।

विदित हो कि मात्रिक छन्द और वर्णवृत्त की पहिचान के नियम जो ऊपर कह आये हैं ये केवल समछंद वा समवृत्तों में पूर्णरूप से घटित होते हैं। परंतु अर्द्धसमछंद वा अर्द्धसम वृत्तों में विषम विषम और सम सम चरणों में घटित होते हैं। विषम छन्द वा विषम वृत्तों की तो गति ही निराली है। इनकी पूर्ण व्याख्या विषम वृत्तों के प्रकरण में देखिये, तथापि इतना अवश्य ज्ञातव्य है कि मात्रिक विषम में पदों की भिन्नता रहते हुए भी वर्णों का क्रम एकसा नहीं रहता, परंतु वर्णिक विषम के प्रत्येक पद में वर्ण योजना किसी एक नियमित रूप से होती है।

दग्धाक्षरों का वर्णन।

कविजन काव्य रचना करते समय अक्षरों के शुभाशुभ फल पर अवश्य ध्यान देते हैं। अशुभाक्षरों को ही दग्धाक्षर कहते हैं। इनको कविता के आदि में न रखना चाहिये।

शुभाक्षर	अशुभाक्षर
क, ख, ग, घ, च, छ, ज, ड द, ध, न, य, श, स, क्ष — १५	ङ, झ, ञ, ट, ठ, ढ, ण, त, थ, प, फ, ब, भ, म, र, ल, व, ष, ह — १९

इन १६ अशुभाक्षरों से भी कवियों ने ५ अक्षर मुख्य चुन लिये हैं अर्थात् झ, ह, र, भ, ष, इनको आदि में रखने से छंद की रोचकता न्यून हो जाती है।

दीजो भूलि न छंद के, आदि 'झ ह र भ ष' कोय ।
दग्धाक्षर के दोष तें, छंद दोषयुत होय ॥

इनके प्रतिप्रसव अर्थात् दोष परिहार का भी विधान है यथा—

मंगल सुर वाचक शबद, गुरु होवे पुनि आदि ।
दग्धाक्षर को दोष नहिं, अरु गण दोषहुं वादि ॥

सुर वा मंगल वाची शब्द के आरंभ में यदि ये दग्धाक्षर आवें अथवा छंद के आदि में येही वर्ण गुरु हों तो दग्धाक्षर अथवा गणदोष नहीं होता। यथा—

(झ) झारखंड में बसत है वैजनाथ भगवान ।
झुकि झुकि तिनकी झलक को, देव करें सब गान ॥
यहां झकार गुरु होने से निर्दोष है।

(ह) हरि से ठाकुर परिहरे, और देव मन लाय ।
ते नर पार न पावहीं, जन्म जन्म भरमाय ॥
हरि शब्द का हकार देववाची शब्द के योग से निर्दोष है।

(र) रघुपति प्रजा प्रेमवश देखी ।
रकार रघुपति शब्द के योग से निर्दोष है।

(भ) भरत बचन सब कहँ प्रिय लागे ।
भकार भरत शब्द के योग से निर्दोष है।

(ष) भाषा पद्य के आदि में षकार का प्रयोग प्रायः नहीं होता।

मात्रिकगण ।

ट ठ ड ढ ण

टः ठः डः ढः णः गण मत्ता । छै पच चौ त्रय दुइ कल यत्ता ॥
मत्त छंद कहुँ कहुँ यह रीती । दै संख्या कोउ करहिं प्रतीती ॥

मात्रिक गण	लक्षण	उपभेद की संख्या
टगण	६ मात्राओं वाले	१३
ठगण	५ ,,	८
डगण	४ ,,	५
ढगण	३ ,,	३
णगण	२ ,,	२

प्राचीन ग्रन्थों में कहीं २ मात्रिक छंदों का लक्षण उक्त गणों द्वारा भी मिलता है, परन्तु अब कविजन संख्या वा संख्यासूचक शब्दों से ही काम निकाल लेते हैं। इनके उपभेदों के भिन्न २ नाम उदाहरण सहित नीचे लिखे हैं।

	रूप	संज्ञा	उदाहरण		रूप	संज्ञा	उदाहरण
		(१) टगण				(३) डगण	
१	SSS	हर	गोविन्दा	१	SS	कर्ण	रामा
२	IISS	शशि	बनवारी	२	IIS	करतल	कमला
३	ISIS	सूर्य	रमापती	३	ISI	मुरारि, पयोध	मुकुंद
४	SIIS	शक्र	लोकपती	४	SII	वसु चरण	मोहन
५	IIIIS	शेष	जगतपती	५	IIIIII	विप्र, द्विज	गिरिधर
६	ISSI	अहि	दयासिंधु				
७	SISI	कमल	दीनबंधु			(४) ढगण	
८	IIISI	धाता	जगतनाथ				
९	SSII	कलि	राधावर	१	IS	रसघास, ध्वजा	रमा
१०	IISII	चंद्र	मुरलीध	२	SI	पौन नंद, ग्वाल	राम
११	ISIII	ध्रुव	रमारमण			ताल	
१२	SIIII	धर्म	नंदसुवन				
१३	IIIIII	शाली	कमलनयन	३	III	बलय	अमर
		(२) ठगण				(५) णगण	
१	ISS	इंद्रासन	मुरारी				
२	SIS	वीर	राधिका	१	S	हार, चौंर,	श्री
३	IIIS	चाप	जगपती			नूपुर, कुंडल	
४	SSI	हीर	गोपाल	२	II	सुप्रिय	हरि
५	IISI	शेषर	ब्रजनाथ				
६	ISII	कुसुम	कृपाकर				
७	SII	अहिगण	पापहर				
८	IIIIII	पापगण	मनहरण				

१ मात्रा का गण नहीं होता। १ मात्रा के शास्त्रोक्त नाम—

शंख, मेरु गंध, काहल।

वर्णिक गण।

तीन तीन वर्णों का एक वर्णिक गण होता है। ऐसे गण आठ होते हैं इनके नाम और रूप शुभाशुभ के क्रम से नीचे लिखते हैं—

नाम	लघु संज्ञा	रेखारूप	वर्णरूप	उदाहरण	शुभाशुभ	व्याख्या
मगण	म	ऽ ऽ ऽ	मागाना	मायावी	शुभ	मन भय सुखदा। जरसत दुखदा॥ अशुभ न धरिये। नर जु वरणिये॥ अन्य वा काव्यके आदि में अशुभ गण वर्जित है। इनकी विशेष व्याख्या वर्णिक वृत्तों के आदि में देखिये।
नगण	न	। । ।	नगन	नमन	शुभ	
भगण	भ	ऽ । ।	भागन	भावन	शुभ	
यगण	य	। ऽ ऽ	यगाना	यमारी	शुभ	
जगण	ज	। ऽ ।	जगान	जलेश	अशुभ	
रगण	र	ऽ । ऽ	रागना	राधिका	अशुभ	
सगण	स	। । ऽ	सगना	सरसी	अशुभ	
तगण	त	ऽ ऽ ।	तागान	तातार	अशुभ	

मगण और नगण के वर्णरूप तो शीघ्र कंठस्थ हो जाते हैं। शेष छै गणों को स्मरण रखने के लिये सबसे उत्तम रीति यह है कि नीचे दिये हुए पदों को कंठस्थ कर लेवे—

भागन--यगाना--जगान। रागना--सगना--तागान॥

पिंगल के दशाक्षर।

वर्णिक गणों के आठ अक्षर 'म य र स त ज भ न' और गुरु लघु के दो अक्षर 'ग' 'ल' मिलकर पिंगल के दशाक्षर कहाते हैं। यथा—

'म य र स त ज भ न ग ल' सहित, दश अक्षर इन सोहिं।
सर्व शास्त्र व्यापित लखौ, विश्व विष्णु सों ज्योंहिं॥

जैसे विश्व में विष्णु व्याप्त हैं वैसेही सम्पूर्ण काव्यरूपी सृष्टि में ये दशाक्षर व्याप्त हैं। इनका महात्म्य वर्णवृत्त के आदि में विस्तार पूर्वक वर्णित है।

संख्यासूचक सांकेतिक शब्दावलि।

१ शशि, भू।

२ भुज, पक्ष नैन।

३ गुण, राम, ताप काल, अग्नि।

४ वेद, वर्ण फल, युग, आश्रम अवस्था, धाम।

५ सर, गति, बाण, शिवमुख, कन्या, इन्द्रिय तत्त्व, प्राण, यज्ञ, वर्ग, गव्य, भूत।

६ शास्त्र, राग, रस ऋतु, वेदांग, ईति, अलिपद।

७ अश्व, मुनि लोक, पुरी, वार, स्वर, द्वीप, सिन्धु, पाताल, नग।

८ वसु, सिद्धि, योग, याम, दिग्गज, अहि, अंग।

९ भक्ति, निधि, अंक, ग्रह, नाड़ी, भूखंड, छिद्र, द्रव्य।

१० दिसि, दशा, दोष, अवतार, दिग्पाल।

११ शिव, हर, भव।

१२ रवि राशि, भूषण, मास।

१३ भागवत, नदी।

१४ मनु, विद्या, रत्न, भुवन।

१५ तिथि।

१६ शृङ्गार, चन्द्रकला, संस्कार।

१८ पुराण, स्मृति।

२० नख।

२५ प्रकृति।

२८ नक्षत्र।

३० मासदिवस

३२ लक्षण, दंत।

३३ देव।

३६ रागिणी।

४९ पवन।

५६ भोग।

६३ वर्णमाला।

६४ कला।

सूचना:—इनके स्थान में पर्य्यायवाची शब्द भी व्यवहृत होते हैं।

मात्रिक छंदों की संख्या और उनकी वर्गसंज्ञा।

मात्राओं की संख्या	वर्ग संज्ञा	कुल भेद अर्थात् छंद संख्या	मात्राओं की संख्या	वर्ग संज्ञा	कुलभेद अर्थात् छन्द संख्या
१	चान्द्र	१	१७	महासंस्कारी	२५८४
२	पाक्षिक	२	१८	पौराणिक	४१८१
३	राम	३	१९	महापौराणिक	६७६५
४	वैदिक	५	२०	महादेशिक	१ ९४६
५	याज्ञिक	८	२१	त्रैलोक	१७७११
६	रागी	१३	२२	महारौद्र	२८६५७
७	लौकिक	२१	२३	रौद्रार्क	४६३६८
८	वासव	३४	२४	अवतारी	७५०२५
९	आंक	५५	२५	महावतारी	१२१३९३
१०	दैशिक	८९	२६	महाभागवत	१९६४१८
११	रौद्र	१४४	२७	नाक्षत्रिक	३१७८११
१२	आदित्य	२३३	२८	यौगिक	५१४२२९
१३	भागवत	३७७	२९	महायौगिक	८३२०४०
१४	मानव	६१०	३०	महातैथिक	१३४६२६०
१५	तैथिक	९८७	३१	अश्वावतारी	२१७८३०९
१६	संस्कारी	१५९७	३२	लाक्षणिक	३५२४५७८

मात्रिक छन्द संख्यासूचक कविता।

१-२-३-४	इक दो तीन रहैं वैसेई, चौके पांच प्रमानो।
५-६-७	पांच आठ छै तेरह कहिये, सातहिं इक्किस जानो॥
८-९-१०	आठहि चौंतिस नौ पचपन कहि, दसहिं नवासी गावैं।
११-१२	ग्यारहिं एक चवालिस जानो, रवि-दो तैंतिस भावैं॥ १॥
१३-१४	तेरा-तीन सतत्तर जानो, चौदहिं छै दस भाते।
१५-१६	पन्द्रा के हैं नव सत्तासी, सोला तिथि नव साते॥
१७-१८	सत्रा पचिस चवासी, ठारा इकतालिस इक्यासी।
१९-२०	उन्निस सड़सठ पैंसठ-बीसे, दस नव चौरस रासी॥ २॥
२१	इक्किस एक सतत्तर ग्यारा, भेद हिये गुन लीजे।
२२	बाइस दो छ्यासी सत्तावन, पूछे पै कहि दीजे॥
२३	तेइस छ्यालिस छत्तिस बसु कहि, भेद याहि के भाखो।
२४	चौविस सात पचास पचीसा, मीत हिये धरि राखो॥ ३॥

२५	पचिस बारा तेरा ऊपर, नव अरु तीन विराजैं।
२६	छब्बिस-उन्निस चौंसठ ठारा, भेद सुकवि जन साजैं॥
२७	सत्ताइस-इकतीस अठत्तर, तापर कीजे ग्यारा।
२८	अट्ठाइस-इक्यावन ब्यालिस, दो नवहूं अधिकारा॥ ४॥
२९	उन्तिस-वसु त्रय बीस चार नभ, कहिये सहित हुलासा।
३०	तीसहिं तेरा छथालिस छब्बिस, तापर नव अति खासा॥
३१	इकतिस इक्किस सात तिरासी, तापर नभ नव धारा।
३२	बत्तिस-माहीं पैंतिस चौबिस, पांच अठत्तर सारा॥ ५॥

वर्णवृत्तों की संख्या और उनकी वर्गसंज्ञा।

वर्ण	वर्ग संज्ञा	सम्पूर्ण भेद अर्थात् छंद संख्या	वर्ण	वर्ग संज्ञा	सम्पूर्ण भेद अर्थात् छंद संख्या
१	उक्था	२	१४	शर्करी	१६३८४
२	अत्युक्था	४	१५	अतिशर्करी	३२७६८
३	मध्या	८	१६	अष्टिः	६५५३६
४	प्रतिष्ठा	१६	१७	अत्यष्टिः	१३१०७२
५	सुप्रतिष्ठा	३२	१८	धृतिः	२६२१४४
६	गायत्री	६४	१९	अतिधृतिः	५२४२८८
७	उष्णिक्	१२८	२०	कृति	१०४८४७६
८	अनुष्टुप्	२५६	२१	प्रकृतिः	२०९७१५२
९	बृहती	५१२	२२	आकृतिः	४१९४३०४
१०	पंक्ती	१०२४	२३	विकृतिः	८३८८६०८
११	त्रिष्टुप्	२०४८	२४	संस्कृतिः	१६७७७२१६
१२	जगती	४०९६	२५	अतिकृतिः	३३५५४४३२
१३	अतिजगती	८१९२	२६	उत्कृतिः	६७१०८८६४

२६ वर्ण से अधिक वर्ण जिस वृत्त में हों उसे दंडक कहते हैं, उसकी भी संख्या इसी हिसाब से दूनी २ करके निकाल लेनी चाहिये।

वर्णिकवृत्त संख्यासूचक कविता।

१–२–३	इक के दो, दो के चौ जानौं, तीन वर्ण के आठ प्रमानो।
४–५–६	चौके सोला, पांच बतीसा, छै के चौसठ गुनौ कवीसा॥ १॥
७–८	सातहि एक, अठाइस धारी, आठहिं दो छप्पन अधिकारी।
९–१०	नव के होहिं, पांच सौ बारा, दस के दैस चौबीस पसारा॥ २॥

११—१२	ग्यारहिं बीस चार-पुनि आठा, बारहिं चालिस नव रस ठाठा ।
१३—१४	तेरहि-आठ एक नव दो हैं, मनु-इक त्रेसठ वसु चौ सोहैं ॥३॥
१५—१६	तिथि-बत्तिस मुनि राग अहीसा, सोला पैंसठ पांच छतीसा ।
१७	सत्रा-तेरा दसा बहत्तर, पूछे पै कहि दीजै उत्तर ॥ ४ ॥
१८	वर्ण अठारह-दो बासठ पर धरिये एक चवालिस आगर ।
१९	उन्निस-बावन ब्यालिस बसु बसु, रामचन्द्र हैं अपने सरबसु ॥५॥
२०	बीस वर्ण के भेद सविस्तर दस अड़तालिस पांच छहत्तर ।
२१	इक्किस वर्ण भेद मन भावन, बीस निधी मुनि इकसौ बावन ॥६॥
२२	बाइस इकतालिस नौ चारी, तापर तीस चार पुनि धारी ।
२३	तेइस आठ तीन अट्ठासी, तापर छै सौ आठ बिलासी ॥ ७ ॥
२४	चौबिस सोला मुनि मुनि मुनि दो, तापर सोला अंकहिं धर दो ।
२५	पच्चिस-तैंतिस पचपन धरिये, तापर चौ चौ बत्तिस करिये ॥८॥
२६	छब्बिस-अड़सठ दस अट्ठासी, तापर चौंसठ परम हुलासी ।
	'भानु' भणित जो हिय महँ लावै पूछे भेदहिं तुरत बतावै ॥९॥

रस ६, राग ६, मुनि ७, अहीश ८, बसु ८, निधि ९, दसा १०, मनु १४ तिथि १५

पारिभाषिक शब्दावलि ।

ल—एक लघु ।
ग—एक गुरु S
लल—दो लघु ॥
लग—लघु गुरु ।S
गल—मंद, पौन, ग्वाल-गुरु लघु ।S
गग—कर्ण, दो गुरु SS
वलय—तीन लघु ।।।
मुरारि—जगण ।S।
गत—गुरु हो अंत में जिसके
गादि—गुरु हो आदि में जिसके
भन्ता—भगण हो अंत में जिसके
जगन्त—जगण और एक गुरु हो अंत में जिसके ।S।S
जग जगण और एक गुरु
जगग—जगण और दो गुरु ।S।SS
जस—जगण और सगण ।S।।।S
जर लग—जगण रगण लघु गुरु
रज गल—रगण, जगण, गुरु, लघु
बिय—दूसरा
यति—विश्राम
विरति—विश्राम
कल कला, मत्ता, मत्त,—मात्रा
द्विकल—दो मात्रा वाला शब्द जैसे—रा, रम, इत्यादि
त्रिकल—तीन मात्रा वाले शब्द जैसे—रमा, राम, रमण इत्यादि
चौकल—चार मात्रा वाले शब्द जैसे—रामा, रावण, हलधर इत्यादि ।

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे भानु कविकृते गुरुलघु विचार, दग्धाक्षरमात्रिकछंदलक्षण तद्वर्ग संज्ञादि, वर्णवृत्तलक्षण तद्वर्ग संज्ञादि वर्णनन्नाम प्रथमोमयूखः ॥ १ ॥

अथ गणित विभागः।

(प्रत्यय)

जातें प्रगटत विविध विधि, छंद विभेद अनेक।
ताको प्रत्यय मानिये, 'भानु' भनत सविवेक॥ १॥
बहुरि कहब सब छंद के, कछु कछु गणित विशेष।
पूरण कहिबे जोग हैं, केवल श्री गुरु शेष॥ २॥
सूची पुनि प्रस्तार नष्ट उद्दिष्ट बखानहु।
पातालहु पुनि मेरु खंडमेरुहु पहिचानहु॥
जानि पताका भेद और मर्कटी प्रमानहु।
नव प्रत्यय ये छंद शास्त्र के हिय महँ आनहु॥
दशम भेद कोउ सूचिका बरणत हैं निज बुद्धि बल।
मर्कटि अंतर्गत स्वऊ संख्या लघु गुरु की सकल॥ १॥

प्रत्यय गुणावलि।

सूची संख्या छंद की, मत्त बरण कहि देय। (संख्या)
प्रस्तारहिं सो रूप रचि, भिन्न भिन्न लखि लेय॥ १॥ (सर्व्व रूप)
नष्टहु पूछे भेद को, रूप रचै ततकाल। (इष्ट रूप)
कहु उद्दिष्ट रचि रूप की, संख्या भेद रसाल॥ २॥ (इष्ट संख्या)
पातलहु लघु गुरु सकल, एकत्रित दरसाय। (लघु गुरु संख्या एकत्रित)
मेरु खंड विस्तार लग, *संख्या छंद लखाय॥ ३॥ (लघु गुरु छंद संख्या)
सजहु पताका गुरुन के, छंद भेद अलगाय। (गुरु भेद)
बर्ण कला लग पिंडहूं, * मर्कटि देत दिखाय॥ ४॥ (सर्व्व संख्या)
सूची औ प्रस्तार पुनि, नष्ट और उद्दिष्ट।
नव प्रत्यय में चारही, 'भानु' मते हैं इष्ट॥ ५॥ } (मुख्य प्रत्यय)

१ सूची।

(सूची संज्ञा छन्द की मत्त बरण कहि देय)

सूची कल कल पिछली दोय, इक दो तीन पांच ज्यों होय।
दून बरण दै चारऽरु आठ, दोनों सूची कर लो पाठ॥

* स ग = लघु गुरु। पिंड = सम्पूर्ण कलाओं के आधे को पिंड कहते हैं।

टीका—मात्रिक सूची में पिछली दो दो [कल] मात्रा जुड़ती जाती हैं और वर्णिक सूची में आदि ही से दूने अंक होते हैं यथा—

अनुक्रम संख्या	१	२	३	४	५	६
मात्रिक सूची	१	२	३	५	८	१३
वर्णिक सूची	२	४	८	१६	३२	६४

इससे यह विदित हुआ कि ६ मात्राओं के भिन्न २ प्रकार से १३ मात्रिक छन्द बन सकते हैं। वैसेही ६ वर्णों के भिन्न २ प्रकार से ६४ वर्णिक छन्द (वृत्त) बन सकते हैं। ऐसेही और भी जानिये।

२ प्रस्तार।

[प्रस्तारहिं सो रूप रचि, भिन्न २ लखि लेय]

आदि गुरू तर लघु निःसंक, दायें नकल बांयें बंक।
बरन बरन कल कल अनुरूप, 'भानु' भनत प्रस्तार अनूप॥

टीका—आदि में ही जहां गुरु मिले उसी के नीचे लघु लिखो [गुरु का चिन्ह 'ऽ' है और लघु का चिन्ह। है] फिर अपनी दाहिनी ओर ऊपर के चिन्हों की नकल उतारो। बांई ओर जितने स्थान खाली हों [क्रम पूर्वक दाहिनी ओर से] बांई ओर को [बंक = बक्र] गुरु के चिन्ह ऽ तब तक रखते चले जावो जब तक कि सब लघु न आ जावें। जब सब लघु आ जावें तब उसी को उसका अंतिम भेद समझो। प्रत्येक भेद में इस बात का ध्यान रखो कि यदि वर्णिक प्रस्तार है तो उसके प्रत्येक भेद में उतने ही उतने चिन्ह आते जावें और मात्रिक प्रस्तार हो तो प्रत्येक भेद में उतनी ही उतनी [कल] मात्राओं के चिन्ह आते जावें, न्यूनाधिक नहीं। मात्रिक प्रस्तार में यदि बांई ओर गुरु रखने से एक मात्रा बढ़ती हो तो लघु का ही चिन्ह रखो। वर्णिक प्रस्तार में पहला भेद सदैव गुरुओं का रहता है। मात्रिक प्रस्तार के समकल में पहला भेद सदैव गुरुओं का रहेगा और विषम कलों में पहला भेद सदैव लघु से प्रारंभ होगा। यथा—

३ वर्ण का पहला भेद—वर्णिक ऽऽऽ
४ वर्ण का पहला भेद—वर्णिक ऽऽऽऽ
५ मात्राओं का पहला भेद—मात्रिक ।ऽऽ विषम कल
६ मात्राओं का पहला भेद—मात्रिक ऽऽऽ सम कल

(१) वर्णिक प्रस्तार ३ वर्ण।

म SSS
य ।SS
र S।S
स ।।S
त SS।
ज ।S।
भ S।।
न ।।।

(२) वर्णिक प्रस्तार ४ वर्ण (३) मात्रिक विषमकल (४) मात्रिक समकल

सू०	१२४८				
१	SSSS	प्रस्तार ५ मात्रा		प्रस्तार ६ मात्रा	
२	।SSS	१	।SS	१	SSS
३	S।SS	२	S।S	२	।।SS
४	।।SS	३	।।।S	३	।S।S
५	SS।S	४	SS।	४	S।।S
६	।S।S	५	।।S।	५	।।।।S
७	S।।S	६	।S।।	६	।SS।
८	।।। S	७	S।।।	७	S।S।
९	SSS।	८	।।।।।	८	।।।S।
१०	।SS।			९	SS।।
११	S।S।			१०	।।S।।
१२	।।S।			११	।S।।।
१३	SS।।			१२	S।।।।
१४	।S।।			१३	।।।।।।
१५	S।।।				
१६	।।।।				

इन प्रस्तारों से हम एक उपयोगी बात जान सकते हैं।

वर्णिक प्रस्तार से यह ज्ञात हुआ कि प्रत्येक भेद के समान चारों चरण होने से ही कोई एक वर्णवृत्त बन सका है। वर्ण प्रस्तार में एक बात और द्रष्टव्य है कि अंतिम स्थान में ऊपर से नीचे की ओर आधे स्थान तक गुरु और उसके नीचे आधे स्थान तक लघु रहते हैं, फिर उसके बांई ओर उनकी संख्या आधी आधी होती जाती है, जैसे कि ऊपर ३ और ४ वर्ण के प्रस्तार से प्रगट है। इसके जानने से वर्ण प्रस्तार के भेदों का ज्ञान शीघ्र होता है।

मात्रिक प्रस्तार से यह ज्ञात हुआ कि जिस छन्द के चारों चरणों में प्रस्तार के भेद एक से न हों वही मात्रिक छन्द है, जहां एक से हों वही वर्णिक वृत्त है ।

३ नष्ट ।

(नष्टहु पूछे भेद को रूप रचै ततकाल)

अंक प्रश्न हरि छंदनि अंक, नष्ट शेष सम करिये बंक ।
सूची अरध, बरन कल पूर, गुरु नंतर कर कल इक दूर ॥

टीका—वर्णिक नष्ट में सूची के आधे अंक स्थापित करो और मात्रा नष्ट में पूरे पूरे अङ्क स्थापित करो । छन्द के पूर्णांक से प्रश्नांक घटाओ । जो शेष बचे उसके अनुसार दाहिनी ओर से बांई ओर के जो जो अङ्क क्रम-पूर्वक घट सकते हों उनको गुरु कर दो । मात्रिक में जहां जहां गुरु बने उनके आगे की एक एक मात्रा मिटा दो । यथा –

वर्णिक नष्ट	मात्रिक नष्ट
प्रश्न–बतावो ४ वर्ण में १०वां रूप कैसा होगा ?	प्रश्न–बतावो ६ मात्राओं में ७ वां भेद कैसा होगा ?
रीति-पूर्णांक ८×२=१६ में से १० घटाये ६ रहे । ६ में से ४ और २ ही घट सक्ते हैं । इसलिये इन दोनों को गुरु कर दिया । यथा—	रीति-पूर्णांक १३ में से ७ घटाये, शेष ६ रहे । ६ में से ५ और १ ही घट सकते हैं अतएव इन दोनों को गुरु कर दिया और उनके आगे की एक एक मात्रा मिटा दी यथा —
अर्ध सूची १ २ ४ ८ पूर्णांक	पूर्ण सूची १ २ ३ ५ ८ १३
१६ साधारण चिन्ह । । । ।	साधारण चिन्ह । । । । । । ।
(उत्तर) ।ऽऽ।	(उत्तर) ऽ . । ऽ . ।
यही १०वां भेद हुआ ।	यही ७ वां भेद सिद्ध हुआ ऽ।ऽ।

प्रश्न–नष्ट से क्या लाभ है ?
उत्तर–बिना प्रस्तार किये पूछी हुई भेद संख्या का रूप बताना ।

४ उद्दिष्ट ।

(कहु उद्दिष्ट रचि रूप की, संख्या भेद रसाल)

गुरु अंकनि हरि छंदनि अंक, शेष रहे उद्दिष्ट निशंक ।
बरन अरध कल जहँ गुरु होय, अंक सूचि सिर पगतल दोय ॥

टीका—वर्णिक उद्दिष्ट में सूची के अंक आवे आवे स्थापित करो। मात्रिक में जहां गुरु का चिन्ह हो वहां ऊपर और नीचे भी सूची के अंक लिखो। गुरु चिन्हों के ऊपर जो संख्या हो उन सब को छन्द के पूर्णांक में से घटा दो। जो शेष रहेगा, वही उत्तर है। यथा—

वर्णिक उद्दिष्ट	मात्रिक उद्दिष्ट
बताओ, ४ वर्णोंमें यह ऽ।ऽ। कौनसा भेद है?	बताओ, ६ मात्राओं में से यह ऽ।ऽ। कौनसा भेद है?
अर्धसूची—१ २ ४ ८ पूर्णांक १६	पूर्णसूची—१ ३ ५ १३ पूर्णांक १३
ऽ । ऽ ।	ऽ । ऽ ।
	२ ८
गुरु के चिन्हों पर ४ और १ है, दोनों मिलकर ५ हुए। ५ को पूर्णांक ८×२=१६ में से घटाया शेष ११ रहे अतएव यह ११ वां भेद है।	गुरु के चिन्हों पर ५ और १ हैं दोनों मिलकर ६ हुए। ६ को पूर्णांक १३ में से घटाया तो ७ रहे। अतएव यह ७ वां भेद है।

प्रश्न—उद्दिष्ट से क्या लाभ है?
उत्तर—बिना प्रस्तार किये पूछे हुए रूप की भेद संख्या बताना।

५ पाताल

(पातालहु लघु गुरु सकल एकत्रित दरसाय)

मात्रिक पाताल।

तीन कोष्ठ की पंक्ति बनैये। इच्छित मत्ता लग रचि जैये॥
आदिहिं क्रम सों अंक धरौ जू। दूजे सूची अंक भरौजू॥
तीजे इक दो, पुनि पाछिल दो। शीर्षांक सह आगे धरदो॥
मत्त पतालहिं लघु गुरु पैये। गुप्त भेद औरहु कछु लहिये॥

मात्राओं की संख्या	१	२	३	४	५	६	७	८
छन्दों की संख्या	१	२	३	५	८	१३	२१	३४
लघु गुरु संख्या	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०

इससे यह विदित हुआ कि ८ मात्राओं के सम्पूर्ण छन्द ३४ ही हो सक्ते हैं। ३४ के नीचे १३० है यही ८ मात्राओं के सम्पूर्ण छन्दों की लघु मात्राओं का

ज्ञापक है। १३० की बांई ओर ७१ है, यही ८ मात्राओं के सम्पूर्ण छन्दों के गुरु मात्राओं का ज्ञापक है। ७१ दूने १४२ और १३० का योग २७२ हुआ इसलिये ८ मात्राओं के सम्पूर्ण छन्दों में २७२ कला हैं और १३० और ७१ मिलकर २०१ होते हैं इतने ही वर्ण जानो। ऐसे ही और भी जानिये।

वर्ण पाताल।

वर्ण पाताल सरल चौ पांती। प्रथम अनुक्रम संख्या तांती॥
दूजे सूची तीजे आधे। आदि अंत लघु गुरु हू साधे॥
चौथे इक त्रय गुणन करौजू। गुरु लघु के सब भेद लहौजू॥
सविस्तार मर्कटि में पइये। पिंगल मति लहि हरि गुण गइये॥

वर्ण संख्या	१	२	३	४	५	६	७	८
वृत्त संख्या	२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६
लघ्वादि लघ्वन्त गुर्वादि गुर्वंत	१	२	४	८	१६	३२	६४	१२८
सर्वगुरु सर्वलघु	१	४	१२	३२	८०	१६२	४४८	१०२४

इस वर्ण पाताल से यह विदित हुआ कि ८ वर्ण के सब २५६ वृत्त हो सक्ते हैं। इनमें से १२८ ऐसे हैं जिनके आदि में लघु हैं और १२८ ही ऐसे होंगे जिनके अन्त में लघु हैं। १२८ ऐसे होंगे जिनके आदि में गुरु हैं और १२८ ही ऐसे होंगे जिनके अन्त में गुरु हैं। सब वृत्तों में मिलकर १०२४ गुरु और १०२४ ही लघु वर्ण होंगे। मर्कटी में ये सब भेद विस्तार सहित मिलते हैं।

६. मेरु।

(मेरु खंड, विस्तार लग, संख्या छन्द लखाय)

मात्रा मेरु।

द्वै द्वै सम कोठा अंतन में अंक सु इक इक दीजे॥
इक दो एक तीन इक चौ इमि बांये अंत लिखीजै॥
शेष कोष्ठ में तिर्य्यक गति सों द्वै द्वै अंक मिलावै॥
सूने थल को या विधि भरिये मत्त मेरु ह्वै जावै॥

मात्रा मेरु–१ से १० मात्राओं का

					१	१
				१	१	२
				२	१	३
			१	३	११	४
			३	४	१	५
		१	६	५	१	६
		४	१०	६	१	७
	१	१०	१५	७	१	८
	५	२०	२१	८	१	९
१	१५	३५	२८	९	१	१०

इस यंत्र से यह विदित हुआ कि १० मात्राओं के छन्दों में

१ छन्द ५ गुरु का होगा।
१५ छन्द ४ गुरु और ३ लघु के होंगे।
३५ छन्द ३ गुरु और ४ लघु के होंगे।
२८ छन्द २ गुरु और ६ लघु के होंगे।
९ छन्द १ गुरु और ८ लघु के होंगे।
१ छन्द सर्व लघु का होगा।

कुल ८९

पताका बनाने के लिए आदिही में मेरु अंकों की आवश्यकता पड़ती है। विद्यार्थियों के लाभार्थ यहां १० मात्रा तक के मेरु अंक की कविता लिखते हैं। कंठस्थ कर लेने से परीक्षा में बड़ी सफलता होती है।

मात्रा मेरु अंकावलि।

इक कल, इक। (१) १
दुइ, एकुइ एका। (२) १, १
त्र, दो इक। (३) २, १

चौ, इक त्रय एका (४) १, ३, १

पंच, तीन चौ इक अभिषेका । (५) ३, ४, १

षट, इक ऋतु सर पुनि इक सारै । (६) १, ६, ५, १

सतैं, चार दस षट इक धारै । (७) ४, १०, ६, १

अठें, एक दस तिथि मुनि एका । (८) १, १०, १५ ७, १

नव, सर नख इक्किस बसु एका । (९) ५, २०, २१, ८, १

दस, शशि तिथि पैंतिस नखत, (१०) १, १५, ३५, २८, ९, १

नव एकहिं भगवंत । मत्त मेरु
के अंक ये, गुनि राखहु गुनवंत ॥

वर्ण मेरु ।

इच्छित कोठनि आदि अन्त में एक एक लिखि आवै ।
दायें बायें पुनि इक द्वै त्रय चार आदि भरि जावै ॥
शेष धरन में तिर्यक् गति सों द्वै द्वै अंक मिलावे ।
सिगरे कोठा या विधि साजै वरण मेरु ह्वै जावै ॥

वर्ण मेरु १ से ८ वर्णों का

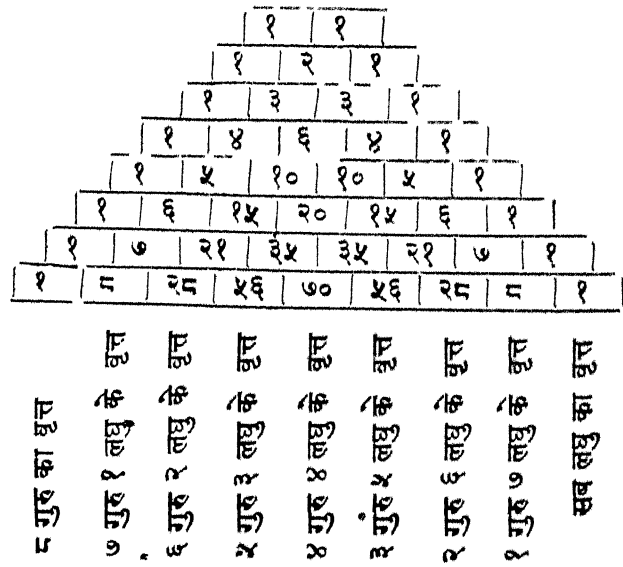

दूसरी सरल रीतिः—

तीन कोष्ठ को यंत्र बनाओ। नीचे सरल अंक लिखि जाओ॥
दूजे उलटे क्रम स्वइ लिखिये। आदिहिं इक घर बाहिर रखिये॥
तिर्यक गति गुणि पहिले दूजै। भाजि तीसरे आदिहि पूजै॥
वरण मेरु सुन्दर बनि जावै। जाके लखे मोद अति पावै॥

१	८	२८	५६	७०	५६	२८	८	१
	८	७	६	५	४	३	२	१
	१	२	३	४	५	६	७	८

$$१, \frac{१\times८}{१}=८, \frac{८\times७}{२}=२८, \frac{२८\times६}{३}=५६, \frac{५६\times५}{४}=७०,$$

$$\frac{७०\times४}{५}=५६, \frac{५६\times३}{६}=२८, \frac{२८\times२}{७}=८, \frac{८\times१}{८}=१$$

पताका बनाने के लिये आदिही में मेरु के अंकों की आवश्यक्ता पड़ती है। विद्यार्थियों के लाभार्थ यहां १ से ८ वर्ण तक मेरु अंक की कविता लिखते हैं। कंठस्थ कर लेने से परीक्षा में बहुत सफलता होती है।

वर्ण मेरु अंकावलि।

वर्ण मेरु आद्यंत में इक इक अंक निसंक।
मध्य अंक सह आठ लग लिखत यहां
सब अंक॥ १॥

एक वर्ण इक इक धरौ। [१] १, १
दूजे इक दो एक। [२] १, २, १
तृतिय मध्य त्रै त्रै धरौ, दुहुं ओर पुनि [३] १, ३, ३, १
एक॥ २॥
चौथे षटधरि मध्यमें एक चार दुहुं ओर। [४] १, ४, ६, ४, १
पंचम दस दस मध्य में, इक पच देस [५] १, ५, १०, १०, ५, १
बहोर॥ ३॥
छठें बीस करि मध्य में इक ऋतु तिथि [६] १, ६, १५, २०, १५, ६, १
पुनि सोय।

सतैं मध्य पैंतिस जुगुल, इक मुनि इक्किस होय ॥ ४ ॥ [७] १, ७, २१, ३५, ३५, २१, ७, १

अष्टम सत्तर मध्य दै शशि वसु तारक भोग। [८] १, ८, २८, ५६, ७०, ५६, २८, ८, १

दायें बायें क्रम स्वइ, वर्ण मेरु संजोग ॥ ५ ॥

७ खंड मेरु।

उलटो क्रमही मेरु को, खंड मेरु फल एक।
एक कोष्ठ धरिये अधिक, आदिहिं एकहि एक ॥

६ मात्राओं का खंड मेरु

१	१	१	१	१	१	१
१	२	३	४	५		
१	३	६				
१						

६ वर्णों का खंड मेरु

१	१	१	१	१	१	१
१	२	३	४	५	६	
१	३	६	१०	१५		
१	४	१०	२०			
१	५	१५				
१	६					
१						

सूचना—तिर्य्यक् गति से अंकों की पूर्ति कर लो। फल मेरु सदृश ही है।

पताका।

[सजहु पताका गुरुन के छंद भेद अलगाय]

१ प्रथम मेरु के अंक सुधारो। उतनइ कोष्ठ अधः लिखि डारो ॥
दूजे घर लिख सूची अङ्कनि। बरन अरध मत्ता भरपूरनि ॥
२ समकल अलग सूचिको प्रथमा। विषम कलनि सब सिर पगतलमा ॥
नीचे तें ऊपर को चलिये। क्रम तें सकल भेद तब लहिये ॥
३ अन्त अङ्क तें इक इक अङ्का। हरि लिख प्रथम पंक्ति निरसंका ॥
द्वै द्वै दूजे त्रय त्रय तीजे। इमि हरि शेष अङ्क भरि लीजे ॥
४ पिंगल रीति अनेक प्रकारा। सुगमहिं को इत कियो प्रचारा ॥
आयो अङ्क न पुनि कहुं आवै। भानु पताका सहज लखावै ॥

१ मात्रा की पताका

१

२ मात्राओं की पताका

१	१
१	१

३ मात्राओं की पताका

२	१
१	३
२	

४ मात्राओं की पताका

१	३	१
१	२	५
	३	
	४	

७ मात्राओं की पताका

४	१०	६	१
१	३	८	२१
२	५	१२	ल
४	६	१६	
६	७	१८	
SSS	१०	१९	
	११	२०	
	१२	S	
	१४		
	१५		
	१७		
	SS		

५ मात्राओं की पताका

३	४	१
१	३	८
२	५	ल
४	६	
SS	७	
	S	

६ मात्राओं की पताका

१	६	५	१
१	२	५	१३
ग	३	८	ल
	४	१०	
	६	११	
	७	१२	
	९	S	
	SS		

८ मात्राओं की पताका

१	१०	१५	७	१
१	२	५	१३	३४
ग	३	८	२१	ल
	४	१०	२६	
	६	११	२९	
	७	१२	३१	
	९	१६	३२	
	१४	१८	३३	
	१५	१९	S	
	१७	२०		
	२२	२३		
	SSS	२४		
		२५		
		२७		
		२८		
		३०		
		SS		

यहां ८ मात्राओं के पताका की रीति विस्तारपूर्वक लिखते हैं—

पहिली पंक्ति १३ वाली

७ कोष्ठ

३४—१=३३
३४—२=३२
३४—३=३१
३४—५=२९
३४—८=२६

सू०-दायें से बायें तरफ की पहिली पंक्ति भरना प्रारम्भ करो। कोष्ठों को नीचे से ऊपर को भरते जावो। जैसे ३३, ३२, ३१ इत्यादि। इस पहली पंक्ति में सूची का एक ही अंक घटित होता है। इतने ही स्थान एक एक गुरु के हैं।

दूसरी पंक्ति ५ वाली

१५ कोष्ठ

३४— ३,१=३०
३४— ५,१=२८
३४— ५,२=२७
३४— ८,१=२५
३४— ८,२=२४
३४— ८,३=२३
३४—१३,१=२०
३४—१३,२=१९
३४—१३,३=१८
३४—१३,५=१६
३४—२१,१=१२
३४—२१,२=११
३४—२१,३=१०

यह दूसरी पंक्ति हुई। कोष्ठों में नीचे से ऊपर को अंक भरते जावो, जैसे ३०, २८, २७, इत्यादि इस दूसरी पंक्ति में सूची के दो दो अंक घटित होते हैं। इतने ही स्थान दो दो गुरु के हैं।

तीसरी पंक्ति २ वाली

१० कोष्ठ

३४— ८,३,१=२२
३४—१३ ३,१=१७
३४—१३,५,१=१५
३४—१३,५,२=१४
३४—२१,३,१= ९
३४—२१,५,१= ७
३४—२१ ५,२= ६
३४—२१,८,१= ४

यह तीसरी पंक्ति हुई। कोष्ठों में नीचे से ऊपर को अंक भरते जावो। जैसे २२, १७, १५ इत्यादि इस तीसरी पंक्ति में सूची के तीन तीन अंक घटते हैं। इतने ही स्थान गुरु के हैं।

पहिला भेद १ सर्व्व गुरु का है और ३४वां भेद सर्व्व लघु का है।

वर्ण पताका १ से ५ वर्णों की

१ वर्ण की पताका

१	१
१	२
ग	ल

२ वर्णों की पताका

१	२	१
१	२	४
ग	३	ल
	ऽ	

३ वर्णों की पताका

१	३	३	१
१	२	४	८
ग	३	६	ल
	५	७	
	ऽऽ	ऽ	

४ वर्णों की पताका

१	४	६	४	१
१	२	४	८	१६
ग	३	६	१२	ल
	५	७	१४	
	६	१०	१५	
	ऽऽऽ	११	ऽ	
		१३		
		ऽऽ		

५ वर्णों की पताका

१	५	१०	१०	५	१
१	२	४	८	१६	३२
ग	३	६	१२	२४	ल
	५	७	१४	२८	
	६	१०	१५	३०	
	१७	११	२०	३१	
	ऽऽऽऽ	१३	२२	ऽ	
		१८	२३		
		१९	२६		
		२१	२७		
		२५	२९		
		ऽऽऽ	ऽऽ		

यहां ५ वर्णों के पताका की रीति सविस्तार लिखते हैं। जो अंक रीत्यनुसार प्राप्त होते जांय उन्हें कोष्ठ से ऊपर की ओर भर चलिए:—

दायें से बांई ओर की पहली पंक्ति· १६ के सूची की (५ कोष्ठ)

३२-१=३१
३२-२=३०
३२-४=२८
३२-८=२४

१ गुरु के स्थान

दूसरी पंक्ति—
८ के सूची की (१० कोष्ठ)

३२-१, २=२९
३२-१, ४=२७
३२-२, ४=२६
३२-१, ८=२३
३२-२, ८=२२
३२-४, ८=२०
३२-१, १६=१५
३२-२, १६=१४
३२-४, १६=१२

२ गुरु के स्थान

तीसरी पंक्ति—
४ के सूची की (१० कोष्ठ)

३२-१,२, ४=२५
३२-१,२, ८=२१
३२-१,४, ८=१९
३२-२,४, ८=१८
३२-१,२, १६=१३
३२-१,४, १६=११
३२-२,४, १६=१०
३२=१,८, १६= ७
३२=२,८, १६= ६

३ गुरु के स्थान

चौथी पंक्ति—
२ के सूची की (५ कोष्ठ)

३२-१,२,४, ८=१७
३२-१,२,४, १६= ९
३२-१,२,८, १६= ५
३२-१,४,८, १६= ३
३२-२,४,८, १६= २

४ गुरु के स्थान

पहिला भेद सर्व्व गुरु का है और ३२वां भेद सर्व्व लघु का जानो।

९ मर्कटी।

(वर्ण कला लग पिंडहूँ मर्कटि देत दिखाय)

मात्रा मर्कटी।

सत कोठावलि प्रथम क्रमावलि दूजे सूची दीजे।
तीजे गुणन दुहुँन को भरिये सर्व कला लखि लीजे॥
चौथे सुन इक द्वै पुनि दूने हरि सिरंक गुरु जानो।
अंकन स्वइ आदिहिं सो पंचम कोष्ठ साजि लघु मानो॥
चौथे हत तीजे सों अंकनि छठे कोष्ठ महँ धारौ।
तृतिय अर्द्ध धरि सप्तम पिंडहिं मत्ता मर्कटि सारौ॥

१ लग=लघु, गुरु।

१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	कला
२	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	८९	छन्द संख्या
३	१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५	८९०	सर्व कला
४	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५	गुरु
५	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५	४२०	लघु
६	१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५	६५५	वर्ण
७	½	२	४	१०	२०	३९	७३½	१३६	२४७½	४४५	पिंड

वर्ण मर्कटी

वर्ण मर्कटी लिखि क्रम संख्या दूजे सूची धारै।
द्वै के आधे तृतीय पंक्ति में आदि अंत गल सारै॥
चौथे इक द्वै गुण कर रखिये सर्व वर्ण गहि पावै।
पंचम चौ के आधे प्यारे गुरु लघु भेद बतावै॥
छटवें चार पांच को जोरौ सर्व कला दरसावै।
सप्तम में षट् के आधे धरि पिंड सकल लखि पावै॥

१	१	२	३	४	५	६	वर्ण संख्या
२	२	४	८	१६	३२	६४	वृत्तों की संख्या
३	१	२	४	८	१६	३२	गुर्वादि गुर्वन्त लघ्वादि लघ्वन्त
४	२	८	२४	६४	१६०	३८४	सर्व वर्ण
५	१	४	१२	३२	८०	१९२	गुरु लघु
६	१	१२	३६	९६	२४०	५७६	सर्व कला
७	१½	६	१८	४८	१२०	२८८	पिंड

१ गल=गुरु, लघु।

१० सूचिका।

दशम भेद कोउ सूचिका बरणत हैं निज बुद्धि बल।
मर्कटि अन्तर्गत स्वऊ संख्या लघु गुरु की सकल॥

यत्त सूचिका सूची लिखिये। अन्त ओर दो अङ्कहिं तजिये॥
वाम उपर त्रय ऊपर नीचै। कोठा एक एक शुभ खींचै॥
इकि तजि पुनि तल कोठा ठानो। आदि अन्त लघु विय सम जाना।
आदि अंत गुरु लघु तिहि बायें। आदि अन्त गुरु पुनि तिहिं बायें।

छः मात्राओं की सूचिका।

			आदि गुरु अन्त गुरु	आदि लघु अन्त लघु	
१	२	३	५	८	१३
	आद्यन्त गुरु		आद्यन्त लघु		

एक और दो मात्राओं तक की सूचिका व्यर्थ है। तीन मात्रा और उससे अधिक की सूचिका नियमानुसार बन सकती है।

वर्ण सूचिका।

वर्ण सूचिका अन्त तजि, द्वै द्वै कोठा बायँ।
आदि अन्त लघु गुरु प्रथम, वामाद्यंत लखायँ॥

४ वर्णों की सूचिका।

	आद्यंत लघु	आदि लघु अन्त लघु	
२	४	८	१६
	आद्यंत गुरु	आदि गुरु अंत गुरु	

एक वर्ण की सूचिका नहीं होती।

सूची और प्रस्तार पुनि नष्ट और उद्दिष्ट।
नव प्रत्यय में चारिहो, भानु मते हैं इष्ट॥

"शेष केवल कौतुकम्"

सूची प्रस्तार उद्दिष्ट और नष्ट इन चारों प्रत्ययों के परस्पर संबन्ध के ज्ञानार्थ निम्नलिखित सवैये को कंठस्थ कर लेना चाहिये—

सूचीतें छंद के भेद लखो सब रूप लखो प्रसतार बढ़ाय कै।
भेद जो पूछहिं रूपहिं दै कहि देहु उदिष्ट सुदिष्ट लगाय कै॥
भेदहिं दै यदि पूछहिं रूप तो ताहि बतावहु नष्ट बनाय कै।
भानु अनंत अनन्द लहो गुरु पिंगलराय को सीस नवाय कै॥

विशेष गणित चमत्कार

(मात्रिक)

पहिले मात्रिक सूची यों लिख चुके हैं:—

मात्रा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
भेद संख्या	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	८९	१४४	२३३

(१) उक्त कोष्टक के रचे बिना अमुक संख्यक मात्रा के कितने छंद बन सकते हैं उसको केवल गणित से ही जानने की रीति लिखते हैं।

चार पांच पुनि छै अरु सात। चौकी प्रथम जानिये तात।
पांच आठ तेरा इकीस। श्रेणी चारों भनत कवीस॥ १॥
भागो चौंसे पूछो अंक। चौकी लब्धी सम निःसंक।
श्रेणी प्रथम भाग जहँ पूर। शेष अंक में इक इक जूर॥ २॥
सप्त गुणित चौकी अधिकाय। एक एक दो तीन घटाय।
पुनि पाछिल जो अष्टम अंक। ताकी सूची घट निःसंक॥ ३॥
लब्धी एक अंक कर ऊन। उतनइ बार सात से गून।
क्रम तें अंतर देय घटाय। जो चहिये उत्तर सो पाय॥ ४॥

अंतर	१ श्रेणी १	श्रेणी २ १	श्रेणी ३ २	श्रेणी ४ ३
प्रथम चौकी	४	५	६	७
सूची अंक वा मूलांक	५*	८*	१३*	२१*
दूसरी चौकी	८	९	१०	११
सूची अंक	३४	५५	८९	१४४
तीसरी चौकी	१२	१३	१४	१५
सूची अंक	२३३	३७७	६१०	९८७
चौथी चौकी	१६	१७	१८	१९
सूची अंक	१५९७	२५८४	४१८१	६७६५
पांचवीं चौकी	२०	२१	२२	२३
सूची अंक	१०९४६	१७७११	२८६५७	४६३६८

*इन चारों को आरम्भ स्थान अथवा मूलांक जानो।

जानना चाहिये कि १, २ और ३ के तो अधिक भेद होते ही नहीं, ४ की संख्या से भेद अधिक हो चलते हैं अतएव ४, ५, ६ और ७ को प्रथम चौकी मानो और इन संख्याओं के सूची अंक अर्थात् ५, ८, १३ और २१ को क्रमानुसार प्रथम, द्वितीय तृतीय और चतुर्थ श्रेणी के सूची अंक वा मूलांक जानो। चौकी के प्रत्येक अंकों में चार चार जोड़कर वहां से नीचे नीचे तीसरे तीसरे स्थान में अंक रखते जावो, तो दूसरी तीसरी, चौथी पांचवीं इत्यादि चौकियां बनती जावेंगी (जैसे ४, ५, ६, ७ ये प्रथम चौकी के अंक हैं, ८ ९, १०, ११ ये दूसरी तथा १२, १३, १४, १५ ये तीसरी चौकी के अंक हैं) प्रत्येक चौकी में चार चार श्रेणियां होती हैं। प्रथम श्रेणी का मूलांक ५, दूसरी का ८, तीसरी का १३, और चौथी का २१ है। अब पूछी हुई संख्या को ४ से भाग देव, जो लब्धि आवे वही चौकी होगी फिर श्रेणी का निश्चय यों कर लेव कि यदि पूरा भाग जावे (शेष कुछ न बचे) तो उसे प्रथम श्रेणी जानो यदि कुछ शेष रहे तो उसमें १ जोड़ देव अर्थात् १ शेष रहे तो दूसरी श्रेणी, २ शेष रहे तो तीसरी श्रेणी और ३ शेष रहे तो चौथी श्रेणी जानो फिर जिस श्रेणी का जो सूची अंक वा मूलांक है उसको ७ से गुणा करो और उसका अन्तर इस क्रम से घटावो कि यदि प्रथम और दूसरी श्रेणी है तो गुणनफल में से एक एक घटावो, यदि तीसरी श्रेणी है तो २ घटावो और यदि चौथी श्रेणी है तो ३ घटावो जो शेष बचेगा, वह आगे को चौकी के उसी श्रेणी का अंक अर्थात् सूची अंक सिद्ध होगा। उसको फिर ७ से गुणो और उसमें से जो उसका पिछला अष्टम अंक है उसका सूची अंक घटा देव ऐसे ही इष्ट संख्या तक करते जावो और पिछले अष्टम अंक की सूची संख्या घटाते जाव कितने बार ७ से गुणा किया जाय इसका ज्ञान यों हो सक्ता है कि लब्धि में १ घटा देव जो शेष रहे उतने ही बार ७ से गुणा करे और क्रमानुसार अन्तर घटाता जाय तो जो चाहिये वह उत्तर प्राप्त होगा। यथा किसी ने पूछा कि १४ मात्राओं के कितने छंद होंगे तो १४ को ४ से भाग दिया ३ लब्धि आये २ शेष रहे इससे पाया गया कि १४ यह तीसरे चौकी के (२ + १) तीसरी श्रेणी की संख्या है। अब तीसरी श्रेणी का मूलांक १३ है (जो ६ का सूची अंक है) तो १३ को ७ से गुणो १३ × ७ = ९१ और नियमानुसार २ घटावो तो शेष ८९ रहे (जो १० का सूची अंक है) अब १४ के लिये ८९ को फिर ७ से गुणो और गुणनफल में से १४ का पिछला आठवां अंक जो ६ है उसका सूची अंक १३ घटा देव तो शुद्ध संख्या १४ मात्राओं के छंदों की निकलेगी (८९ × ७)-१३ = ६१० ऐसेही और भी जानो।

उदाहरणार्थ २०, २१, २२ और २३ की छंद संख्या क्रिया सहित नीचे लिखी जाती है—

२० मात्राओं के छंदों का गणित	२१ मात्राओं के छंदों का गणित	२२ मात्राओं के छंदों का गणित	२३ मात्राओं के छंदों का गणित
प्रथम चौकी (४)	(५)	(६)	(७)
२०/४ शेष ० प्रथम श्रेणी = ५	२१/४ शेष १+३ द्वितीय श्रेणी=८	२२/४ शेष २+१ तृतीय श्रेणी=१३	२३/४ शेष ३+१ चतुर्थ श्रेणी=२१
दूसरी चौकी (८)	(९)	(१०)	(११)
५×७)-१ = ३४	(८×७)-१ = ५५	(१३×७)-२ = ८९	(२१×७)-३ = १४४
तीसरी चौकी (१२)	(१३)	(१४)	(१५)
(३४×७)-५ = २३३	(५५×७)-८ = ३७७	(८९×७)-१३ = ६१०	(१४४×७)-२१ = ९८७
चौथी चौकी (१६)	(१७)	(१८)	(१९)
(२३३×७)-३४ = १५९७	(३७७×७)-५५ = २५८४	(६१०×७)-८९ = ४१८१	(९८७×७)-१४४ = ६७६५
पांचवी चौकी (२०)	(२१)	(२२)	(२३)
(१५९७×७)-२३३=१०९४६	(२५८४×७)-३७७=१७७११	(४१८१×७)-६१०=२८६५७	(६७६५×७)-९८७=४६३६८

ऐसे ही और भी जानो

कोई भी शुद्ध मात्रिक छन्द संख्या देखकर यह बताना कि यह इतने मात्राओं की छन्द संख्या है—

छंद भेद की कला कितेक। लहिये सोऊ सहित विवेक॥
उलट क्रिया करिय मनलाय। रीति तासु अब देत लखाय॥ १॥
इक दो तीन न बदलें ठाठ। चार पांच पांचहुं के आठ॥
छै के तेरा सात इकीस। मूल अंक कहि गये फणीश॥ २॥
भाजि सात सों छंदनि अंक। सप्तम कर जहं लगि मूलंक॥
शेष जहां लब्धी जुर एक। केवल आठ अंक व्यतिरेक॥ ३॥
चौ सप्तम प्रति जोरी भाय। पूछी मत्ता देहु बताय॥
प्रश्न और उत्तर सह रीति। लिखियत जासों होय प्रतीति॥ ४॥

जिस छन्द संख्या में ७ का भाग जा सक्ता हो उसे ७ से भाग देव यदि कुछ शेष रहे तो शेष से कुछ प्रयोजन नहीं, परन्तु जहां शेष हो वहां लब्धि में १ जोड़ो। ध्यान रहे कि जहां शेष शून्य हो वहां १ न जोड़ा जावे। यदि फिर भी ७ से भाग जा सक्ता हो तो भाग देते जाव जब तक कि १, २, ३, ५, ८, १३, २१ मूलांकों में से या उनका निकटवर्ती कोई एक अंक न आ जावे केवल ८ के अंक में ७ से भाग देने पर जो १ बचता है उसके लब्धि में १ न जोड़ो क्योंकि ८ की पिछली मात्रा ५ में केवल ३ का ही अन्तर है। अधिक अंतर में यह साध्य है। लब्धि में १ जोड़ने पर जो अंक आवे वही अंक लेव, परंतु ८ से अधिक हों तो १३ मानो और १३ से अधिक हों तो २१ मानों, फिर उनकी मात्रा निम्नानुसार लेलो।

छंद भेद सूची छंदांक व मूलांक	१	२	३	५	८	१३	२१
मात्रिक संख्या	१	२	३	४	५	६	७

जितनी बार ७ से भाग दिया गया हो उतने ही बार चार चार जोड़ दो तो पूछे हुए छन्द भेद की शुद्ध मात्रा ज्ञात होगी।

प्रश्न—बताओ कि १,२,३,४,५,६,७ ८,१३,२१,३४,५५,८९,१४४ और ६७६५ ये छन्द संख्याएं कितनी कितनी मात्राओं की हैं।

(क्रिया सहित उत्तर)

१ में ७ का भाग नहीं जाता, मानो कि १ ही लब्धि है शेष कुछ नहीं अतएव १ की १ मात्रा।

२ में ७ का भाग नहीं जाता, मानो कि २ ही लब्धि है, शेष कुछ नहीं अतएव २ की २ मात्रा।

३ में ७ का भाग नहीं जाता, मानो कि ३ ही लब्धि है, शेष कुछ नहीं अतएव ३ की ३ मात्रा ।

४ यह प्रश्न ही अशुद्ध है क्योंकि छन्द भेद या मूलांक नहीं है ।

५ में ७ का भाग नहीं जाता, मानो कि ५ ही लब्धि है, शेष कुछ नहीं अतएव ५ की चार मात्रा ।

६ और ७ ये दोनों प्रश्न भी ४ थे प्रश्न के अनुसार अशुद्ध हैं ।

८—$\frac{८}{७}$ शेष १, लब्धि १, ८ में शेष रहने से लब्धि में १ नहीं जुड़ता, ८ में एक बार ७ का भाग गया अतएव जोड़े ४ अर्थात् १+४=५ मात्रा ।

१३– $\frac{१३}{७}$ शेष ६ लब्धि १, १+१=२, २ की मात्रा २, १३ में १ बार ७ का भाग गया अतएव जोड़े ४ अर्थात् २+४=६ मात्रा ।

२१– $\frac{२१}{७}$ शेष कुछ नहीं लब्धि ३, ३ की मात्रा ३, २१ में ७ का भाग १ बार लगा अतएव जोड़े ४ अर्थात् ३+४=७ मात्रा ।

३४– $\frac{३४}{७}$ शेष ६, लब्धि ४+१=५ ५ की मात्रा ४, ३४ में ७ का भाग १ बार लगा अतएव जोड़े ४ अर्थात् ४+४=८ मात्रा ।

५५– $\frac{५५}{७}$ शेष ६, लब्धि ७, ७+१=८ की मात्रा ५, ५५ में ७ का भाग १ बार ही लगा अतएव जोड़े ४ अर्थात् ५+४=९ मात्रा ।

८९– $\frac{८९}{७}$ शेष ५, लब्धि १२ १२+१=१३ १३ की मात्रा ६, ८९ में ७ का भाग एक बार लगा अतएव जोड़े ४ अर्थात् ६+४=१० मात्रा ।

१४४– $\frac{१४४}{७}$ शेष ४, लब्धि २० २०+१=२१ २१ की मात्रा ७, १४४ में ७ के भाग की आवश्यकता एक ही बार पड़ी अतएव जोड़े ४ अर्थात् ७+४=११ मात्रा ।

६७६५– $\frac{६७६५}{७}$ शेष ३ लब्धि ९६६, ९६६+१=९६७ $\frac{९६७}{७}$ शेष १ लब्धि १३८, १३८+१=$\frac{१३९}{७}$ शेष ६, लब्धि १९, १९+१=२०, २० को मानो २१ २१ की मात्रा ७, ६७६५ में ७ का भाग ३ बार लगा अतएव जोड़े ३×४=१२ अर्थात् ७+१२=१९ मात्रा । ऐसे ही और भी जानिये ।

[३] एक से लेकर इष्ट संख्या तक मात्राओं की समस्त छंद संख्या का योग बताना।

प्रश्न अंक लगि केते छन्द। तासु रीति विय लह स्वच्छंद ॥
संख्या छंद कीजिये दून। जुरि उपात्य दुइ कीजे ऊन ॥ १ ॥

अथवा

प्रश्न अंक लगि केते छन्द। प्रश्न अंक जुरि दो स्वच्छन्द ॥
संख्या छन्द तासु मन लाव। तामें दुइ को अंक घटाव ॥ २ ॥

टी०—[१] प्रश्नांक की छन्द संख्या को द्विगुणित करके उसमें उसकी उपान्त्य अर्थात् पूर्व की संख्या को जोड़कर उसमें से २ घटा देव। यथा-एक से लेकर सात मात्रा तक के छन्दों की संख्या जाननी हो तो ७ के नीचे जो २१ का अंक है उसका दुगना किया तो ४२ हुए और २१ का उपान्त्य संख्या १३ है। ४२ में १३ जोड़ो तो ५५ हुए ५५ में से २ घटाये ५३ रहे। यही उत्तर हुआ।

टी०—[२] प्रश्नांक में २ जोड़ो और योग फल की छन्द संख्या में से २ घटा देव। यथा-१ से लेकर ७ मात्रा तक के छंदों की संख्या जाननी हो तो ७ में २ जोड़ो ९ हुए ९ के नीचे ५५ है अतएव ५५ में से २ घटाये ५३ रहे। यही उत्तर हुआ अर्थात् १+२+३+५+८+१३+२१=५३।

[४] प्रत्येक मात्रिक छंद के चारों चरणों में मिलाकर गुरु लघु वर्णों की संख्या जानना।

चारि चरण की जो कला, तिनतें वर्ण घटाव।
शेष गुरू गुरु दुगुन हरि, लघु मत्ता चित लाव ॥

S I I S I S I S S S S I S I I I I I I I S S
आकर चार लाख चौरासी [१०] जाति जीव नभ जल थल वासी [१२]
I S S I I I I I I I S S I S I S I I I SS
सिया राम मय सब जग जानी [१२] करौं प्रणाम जोरि जुग पानी [११]

चौपाई के प्रति चरण में १६ मात्राएं होती हैं। चारों चरणों की मिल कर ६४ मात्राएं हुईं। ६४ में से कुल वर्ण संख्या ४५ घटाई तो शेष रहे १९ तो १९ ही वर्ण वा मात्राएं गुरु हैं १९ के दूने हुए ३८ तो ३८ को ६४ में से घटाया तो २६ रहे इतनी ही मात्राएं लघु हैं अर्थात् इस छंद में १९ गुरु और २६ लघु हैं कुल वर्ण ४५।

S I I S I I S I I S I I I I I I S I
कामिहिं नारि पियारि जिमि लोभिहिं प्रिय जिमि दाम। [१९]
S S S I I S I S I I S S I I S I
ऐसे हौ कब लागि हौ, तुलसी के मन राम॥ [१६]

इस दोहे में ३५ वर्ण हैं। अब ३५ को छन्द की सम्पूर्ण ४८ मात्राओं में से घटाया तो शेष १३ रहे ये ही १३ मात्रा गुरु हैं और १३ के दूने २६ हुए इन २६ को ४८ में से घटाया तो शेष २२ रहे, येही २२ मात्राएं लघु हुईं।

विशेष गणित चमत्कार।

(वर्णिक)

(१) बिना सूची के इष्ट वर्णों की वृत्त संख्या जानना। पहिले वर्णिक सूची यों लिख आये हैं: —

वर्ण	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
भेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	५१२	१०२४

(१) उक्त सूची को रचे बिना इष्ट वर्णों की वृत्त संख्या जानने की एक सुलभ रीति लिखते हैं।

इक के दो दो के चौ जानो। तीन वर्ण के आठ प्रमानो ।
चौ के सोरह वृत्त विकासी। अधिकन की नइ रीति प्रकासी ॥
चौ से अधिक प्रश्न को अंक। चौ से भागो जू निःसंक ॥
सोर सोर गुन लब्धि समान। शेष दुगुन त्रय आठ प्रमान ॥

	लब्धि	शेष	
३	१	१	१६×१=१६×२=३२
६	१	२	१६×१=१६×४=६४
७	१	३	१६×१=१६×८=१२८
४	२	०	१६×१६=२५६

प्रश्न संख्या को ४ से भाग देव जो लब्धि आवे उतने ही अंक १६, १६ के स्थापित करके उनको एक दूसरे से गुणा करो। यदि भाग देने से कुछ शेष रहे तो गुणनफल को फिर इस प्रकार गुणा करो।

१ बचे तो २ से गुणा करो, २ बचे तो ४ से गुणा करो ३ बचे तो ८ से गुणा करो, परन्तु प्रश्न संख्या चार से अधिक हो। यथा—किसी ने प्रश्न किया कि १४ वर्ण के कितने वृत्त होंगे तो १४ में ४ का भाग दिया लब्धि ३ और शेष २ रहे अतएव १६ × १६ × १६ × ४ = १६३८४ यही उत्तर है।

(२) किसी वृत्त संख्या को देखकर यह बताना कि यह कितने वर्णों की है:— वृत्त संख्या में दो का भाग देते जाव जब तक कि लब्धि १ आकर शेष कुछ न रहे। जितने बार दो से भाग जायगा उतनेही वर्ण होंगे यथा—किसी ने पूछा कि ६४ यह कितने वर्णों की वृत्त संख्या है तो—

$\frac{६४}{२}=३२,\ \frac{३२}{२}=१६,\ \frac{१६}{२}=८,\ \frac{८}{२}=४,\ \frac{४}{२}=२,\ \frac{२}{२}=१,$

६ बार दो का भाग गया अतएव कहना चाहिये कि यह ६ वर्णों की संख्या है।

इस नियम के लिये इस चौपाई का स्मरण रखना समुचित है—

वर्ण वृत्त की संख्या जोय, भागो दुइ लब्धी पुनि दोय।
भाग दोय को जितनी बार, उतनइ वर्णन को प्रस्तार॥

(३) १ से लेकर इष्ट संख्या तक समस्त वृत्तों की संख्या का योग बताना:—

प्रश्न अंक लगि केते वृत्त, सो बताय मन कीजे तृप्त।
संख्या वृत्त कीजिये दून, तामें दोय कीजिये ऊन॥

टी०—प्रश्नांक की वृत्त संख्या को द्विगुणित करके उसमें से २ घटा देव तो एक से लेकर प्रश्नांक तक की समस्त वृत्त संख्या निकल आवेगी यथा—किसी ने प्रश्न किया कि एक से सात वर्णों तक के समस्त वृत्तों की संख्या क्या है? तो ७ के नीचे १२८ की संख्या है, इसका दुगना किया तो २५६ हुए, इसमें से २ घटाये तो २५४ बचे। यही एक से लेकर ७ वर्णों तक के वृत्तों की पूर्ण संख्या वा योगफल है अर्थात् २+४+८+१६+३२+६४+१२८=२५४।

(४) वर्ण नष्ट जानने की अन्य सुगम रीति।

विषम गुरू, सम लघु, मन साध। प्रश्न अंक पुनि आधो आध॥
नष्ट रचिय विषमनि इक जूर। जब लगि वृत्त वरण हौं पूर॥ १॥

अथवा

निमे सैक निम हिय में धार। विषम गुरू सम लघु निरधार॥ २॥

जानना चाहिये कि वर्ण प्रस्तार के आदि में विषम संख्या के नीचे गुरु और सम संख्या के नीचे सर्वत्र लघु होता है अतएव प्रश्नांक यदि विषम हो तो प्रथम एक गुरु स्थापित करो और यदि सम हो तो प्रथम एक लघु स्थापित करो, फिर उस प्रश्नांक का आधा करो यदि प्रश्नांक की संख्या विषम हो तो उसमें एक जोड़कर आधा करो निमे=आधा सैक निमे=सहित एक के आधा। फिर जो संख्या विषम वा सम आवे उसके अनुसार गुरु वा लघु स्थापित करो। ऐसे ही आधा २ तब तक करते जाव कि जब तक वृत्त के वर्ण पूरे न हो जांय। यदि वृत्त के वर्ण अधिक हों और आधा करते करते १ बच जाय और आगे संख्या न निकल सके तो वृत्त के जितने वर्ण खाली रह गये हों उनमें उतने ही गुरु लिख दो क्योंकि १ यह विषम संख्या है और उसमें १ जोड़कर २ का भाग देने से फिर १ आवेगा। बस इस नियम के प्रतिपालन से बिना प्रस्तार बिना सूची चाहे जिस वर्ण के इष्ट-भेद का रूप बात की बात में बता सकते हो। नीचे ५ उदाहरण उनकी प्रक्रिया के सहित लिखते हैं।

१ प्रश्न—बताव ६ वर्णों में ६१ वां भेद कैसा होगा ?

प्रक्रिया (६१) $(\frac{६१+१}{२}=३१)$ $(\frac{३१+१}{२}=१६)$ (८) (४) (२)

उत्तर— ऽ ऽ । । । ।

२ प्रश्न—बताव ६ वर्णों में ६३ वां भेद कैसा होगा ?

प्रक्रिया (६३) $(\frac{६३+१}{२}=३२)$ (१६) (८) (४) (२)

उत्तर— ऽ । । । । ।

३ प्रश्न—बताव ५ वर्णों में २७ वां भेद कैसा होगा ?

प्रक्रिया (२७) $(\frac{२७+१}{२}=१४)$ ७, $(\frac{७+१}{२}=४)$ (२)

उत्तर— ऽ । ऽ । ।

४ प्रश्न—बताव ४ वर्णों में १३ वां भेद कैसा होगा ?

प्रक्रिया (१३) $(\frac{१३+१}{२}=७)$ $(\frac{७+१}{२}=४)$ (२)

उत्तर— ऽ ऽ । ।

५ प्रश्न बताव ४ वर्णों में २रा भेद कैसा होगा ?

प्रक्रिया (२) (१) (१) (१)

उत्तर— । ऽ ऽ ऽ

ऐसे ही और भी जानो।

वर्ण नष्टोदित की एक और सुगम रीति।

उद्दिष्टहिं लघु एक बढ़ाव।

नष्ट प्रश्न ते एक घटाव॥

१२४८
ऽऽऽ। लघु पर ८ है+१=९ वां भेद

ऽऽऽ। प्रश्न ९ वा ९–१=८, ८ को लघु, शेष गुरु

इति श्रीछंदःप्रभाकरे भानु-कवि कृते गणित विभाग वर्णनंनाम द्वितीयो मयूखः॥ २॥

अथ मात्रिक समछंदांसि

षट् चरणनि गति एकसी, सो सम छंद बखानु।
सोई गुरु पद बंदि कै, इति वरणत कवि भानु॥

विदित हो कि १ मात्रा से लेकर ६ मात्राओं के छंद प्रचलित नहीं हैं क्योंकि उनमें कोई रोचकता नहीं अतएव उनका वर्णन यहां नहीं किया जाता।

लौकिक (७ मात्राओं के छन्द भेद २१)

सुगती (अन्त में गुरु ऽ)

अश्व सुगती, गहत सुमती।
राम भजिये, मोद लहिये॥

अश्व = ७

दूसरा उदाहरण

शिव शिव कहौ, जो सुख चहौ।
जो सुमति है, तो सुगति है॥

[अन्य नाम शुभगति]

वासव (८ मात्राओं के छन्द भेद ३४)

छबि] अन्त में ।ऽ।]

बसु छबि मुरारि, मम हिय मँझारि।
तुम हौ रमेश, काटौ कलेश॥

बसु = ८। मुरारि शब्द ।ऽ। का बोधक है। [देखो पृष्ठ ६]

[अन्य नाम मधुभार]

आंक (९ मात्राओं के छन्द भेद ५५)

गंग [अन्त में ऽऽ]

वर गंग भक्ती, दै पूर्ण शक्ती।
अघ ओघ जारै, भवसिंधु तारै॥

भक्ति = ९

निधि [अन्त में ।]

निधि लहौ अपार, भजि राम उदार ।
नर जनम सुधार, प्रभु पद हिय धार ॥
निधि = ९

दैशिक (१० मात्राओं के छन्द भेद ८९)

दीप [अन्त ।।।ऽ।]

धातृ सह दस दीप, रखहु चरण समीप ।
तिहुं लोक अवनीप, दशरत्थ कुलदीप ॥
धातृ = ।।।ऽ। [देखो पृष्ठ ९]

रौद्र (११ मात्राओं के छन्द भेद १४४)

अहीर (अन्त में जगण ।ऽ।)

शिव कल सजौ अहीर, हरत सदा जन पीर ।
भक्तन को सुख कंद, भजौ सदा नँद नंद ॥
शिव = ११ [अन्य नाम अभीर]

शिव [अन्त में स ।।ऽर ऽ।ऽ वा न ।।।]

शिव सगो सदा सरन, गहु सभक्ति दुहुं चरन ।
हैं सुभक्त रंजना, सर्व ताप भंजना ॥
इसकी तीसरी, छठी और नवीं मात्रायें सदा लघु रहती हैं ।

भव [अन्त में ऽ वा ।ऽऽ]

भवहिं गाय भजहु रे, असत कर्म्म तजहु रे ।
पुजहिं आस तुम्हारी, आशुतोष पुरारी ॥

आदित्य (१२ मात्राओं के छन्द भेद २३३)

तोमर [अन्त में ऽ।]

तोमर सु द्वादश पौन, नहिं वीर धारैं मौन ।
प्रचंड कृतांत समान, रण भूमि में रण ठान ॥ यथा—
तब चले बाण कराल, फुकरत जनु बहु व्याल ।
कोप्यो समर श्रीराम चल विशिख निशित निकाम ॥
पौन = ऽ।

कहीं तोमर छंद का लक्षण वर्णवृत्त की भांति 'सजज' भी मिलता है, यथा–सज जाहि तोमर जान-परंतु कवि सम्राट श्री गुसांई तुलसीदास जी ने तोमर को मात्रिक छंद ही माना है और यही उचित भी प्रतीत होता है क्योंकि वर्णवृत्त की अपेक्षा मात्रिक छन्द का क्षेत्र बहुत विस्तृत है।

ताण्डव (आदि लघु अन्त लघु)

रचैं ताण्डव सुखरासि, ललित भावहिं परकासि।
शिवाशंकर कैलास, सदा पूजैं जन आस॥

रासि = १२, का बोधक है।

लीला (अन्त में ।ऽ।)

रवि कल लीला मुरारि, जाहि जपत हैं पुरारि।
जसुमति के लाल सोइ, ध्यावत बहु मोद होइ॥

रवि = १२, मुरारि = ।ऽ।

नित (अन्त में लग ।ऽ वा न ।।।)

नित नव राम सो लगन, लगी रहै दुहूं पगन।
सदा कृपा निधान हैं, सुभक्त जनन प्रान हैं॥

नव = ९ + राम. ३ = १२, लगन = अंत में लघु गुरु व नगण।

इस छंद की लय फारसी के इस बहर से मिलती है-मुफ्त--अलन मफाइलुन यथा –

मुतरिबे खुश नवा बगो। ताज़ा बताज़ा नौबनौ।

विदित हो कि उर्दू भाषा में १ पद को मिसरा, २ पदों को बैत या शेर, तीन पदों को मुलसा, ४ पदों को रुबाई या क़िता, ५ पदों को मुखम्मस और ६ पदों को मुसद्दस कहते हैं। यथा—

इक मिसरा द्वै बैतऽरुशेर, क़िता रुबाई में चौ हेर।
पांच मुखम्मस जान सुजान, षट पद छंद मुसद्दस मान॥

भागवत (१३ मात्राओं के छंद भेद ३७७)

उल्लाला

उल्लाला तेरा कला, दशनंतर इक लघु भला।
सेवहु नित हरि हर चरण, गुण गण गावहु हो शरण॥ यथा—

काव्य कहा बिन रुचिर मति, मति सु कहा बिनही बिरति।
बिरतिउ लाल गुपाल भल, चरणनि होय जु रति अचल॥

यद्यपि इस छंद के अन्त में गुरु लघु का कोई विशेष नियम नहीं है तथापि ११वीं मात्रा लघु ही रहती है।

(अन्य नाम- चन्द्रमणि दो दल वाले उल्लाल छंद को जिसके प्रत्येक दल में १५+१३ मात्राएं होती हैं अर्द्ध सम मात्रिक छन्दों में देखिये।

चंडिका [अन्त में रगण SIS]

बसु गति कल श्री चंडिका, भक्त जनन सुख मंडिका।
सुत जिनके जग बंदना, गणपति शंकर नंदना॥

बसु ८, गति ५। इसका नाम कहीं धरणी भी पाया जाता है।

मानव (१४ मात्राओं के छंद भेद ६१०)

कज्जल [अन्त में SI]

कज्जल भौन मत्ता पौन, मूरख सोइ प्रविसत जौन।
असत माया फंदहिं त्याग, सीताराम चरणहिं लाग॥ यथा—

भौन = भवन = १४, पौन = अंत में SI

प्रभु मम ओरी देख लेव, तुम सम नाहीं और देव।
कस प्रभु कीजे तोरि सेव, पाव न कोऊ तोर भेव॥

सखी [अंत में म SSS वा य ISS]

कल भुवन सखी रचि माया, चह माया पतिहिं लुभाया।
प्रभु तउ अति प्रीति प्रकासी, रचि रास कियो सुखरासी॥

माया = अन्त में मगण वा यगण।

विजाति [आदि में ..]

लहो विद्या विजाती की, कि जैसे लह स्वजाती की।
परस्पर प्रीति सों रहिये, सदा मीठे बचन कहिये॥

इसके दुगने में गज़ल की एक चाल होती है।

लहो = आदि में लघु हो विद्या = १४।

हाकलि [अन्त में S]

शिव दस विद्या हाकलि गा, गिरिवर धारो अरु बलि गा।
संतत जो गुण गाय भजै, तौ सुख साज समाज सजै॥ यथा—

पर तिय मातु समान भजै, पर धन विष के तुल्य तजै।
संतत हरि को नाम रटै, तासु कहा कलिकाल करै॥

पूर्वाचार्य्यों ने इसके पहिले और दूसरे चरण में ११ वर्ण और तीसरे और चौथे में १० वर्ण माने हैं परंतु मुख्य नियम तो यह है [त्रै चौकल गुरु हाकलि है] अर्थात् इसमें तीन चौकल के पश्चात् एक गुरु होता है यथा

राधा कृष्णै गावैं जो उनहीं सों मन लावैं जो।
लहहीं जग में सुख भारी, चारों फल के अधिकारी॥

जहां चारों पदों में तीन तीन चौकल न पड़ें वहां इस छन्द को मानव कहेंगे यथा

मानव देहै धारै जो राम नाम उच्चारै जो।
नहिं तिनको डर जम को है, पुण्य पुंज तिन सम को है॥

मधुमालती ७, ७ [अन्त में ऽ।ऽ]

कल सप्त स्वर, मधुमालती, आदेश पति, प्रतिपालती।
जिहि धाममें, सखि देखिये, ऐसी तिया, धन लेखिये॥

सप्त=७+स्वर ७=१४।

सुलक्षण [अन्त में ऽ।]

मुनि मुनि पौन सुलक्षन तौन, अस को भेद पावै जौन।
सब तजि धार हरि पद प्रीत, सीख हमारि मानौ मीत॥

मुनि ७+मुनि ७=१४, पौन=गुरु लघु।

इसमें चार मात्राओं के पश्चात गुरु लघु रहते हैं। यथा—

हरि हर देव नित उठ सेव, अस को जौन पावहि भेव।
मन में एक यह कर टेव सब तजि राम नामै लेव॥

मनमोहन ८, ६ (अन्त में ।।।)

मनु मोहन, धरयोउ बलय, सपने में मैं भई अभय।
नींद खुली तो, भई विकल, बिन हरि दरसन, परत न कल।

मनु=१४। बलय=कलाई, तीन लघु ।।। (देखो पृष्ठ ६) मनमोहन=अष्टमावतार (श्रीकृष्ण) ८ का बोधक है और दर्शन ६ का बोधक है।

सरस ७, ७

द्वै पांच कल, दुहरे सरस, गोविंद की भक्ती सरस।
सिख मीत यह, हिय धार भल, यहि जन्म में लह चार फल॥

कहीं २ इसका नाम मोहन भी पाया जाता है।

२+५=७, दुहरे १४।

मनोरम (आदि ऽ अन्त ऽ॥ वा ।ऽऽ)

गो मनोरम रत्न भायो, सेवते फल को न पायो ।
कृष्ण गो सेवा करी नित, ताहि सेवौ जानि के हित ॥
गो = आदि गुरु । रत्न=१४ । सेवते = सेवा करते हुए ।

तैथिक (१५ मात्राओं के छन्द भेद ६८७)

चौबोला [अन्त में ।ऽ]

वसु मुनि लग चौबोला रचौ, काहे तपि तपि देही तचौ ।
संत समागम संतत सजौ, शरणागत ह्वै प्रभु को भजौ ॥
वसु = ८, मुनि = ७ । लग = अंत में लघु गुरु ।

गोपी [आदि त्रिकल, अन्त ऽ]

गुणहु भुज शास्त्र वेद गोपी, धरहु हरि चरण प्रीति चोपी ।
जनम क्यों व्यर्थ गमावौ रे, भजन विन पार न पावौ रे ॥
चोपी=उत्साह सहित, गुण ३+भुज २+शास्त्र ६ । वेद ४ = १५ । यथा—
भानु तुव चरणन को चेरो, मातु टुक दया दृष्टि हेरो ।
मिलत ना मुहिं कहुँ अवलंबा, तुम्हैं तजि या जग जगदंबा ॥

चौपई [अन्त में ।ऽ]

तिथि कल पौन चौपई माहिं, अन्त गुरु लघु जहां सुहाहिं ।
यहै कहत सब वेद पुरान, शरणागत वत्सल भगवान ॥
तिथि=१५ [अन्य नाम जयकारी]

गुपाल [अन्त में जगण ।ऽ।]

वसु मुनि कल धरि सजहु गोपाल, सदा दीन पर परम दयाल ।
आरत हरन सरन जन हेतु, सुलभ सकल अघ कुल केतु ॥
वसु ८+मुनि ७ [अन्य नाम भुजंगिनी]

उज्वला मात्रिक (अन्त में ऽ।ऽ)

कल दिसि गति राजत उज्वला, गावत हरि कीरति निर्मला ।
नर लहत सकल शुभ कामना, सुख पावत जग जम त्रासना ॥
दिसि १०, गति ५ ।

पुनीत (अन्त में तगण SSI)

तिथि कल पुनीत है हे तात, मेरी कही जु मानो बात।
हरि पद भजौ तजौ जंजाल, तारै वही नंद को लाल ॥

इसके आदि में सम कल के पीछे विषम कल होता है।
तिथि = १५।

संस्कारी (१६ मात्राओं के छंद भेद १५६७)

पादाकुलक (४ चौकल)

चौकल चार जहां पर आनो, छंद सु पादाकुलक बखानो।
गुरु पिंगल बहु भेद लखाये, तिन महँ भानु कछुक इत गाये ॥

पाद + आकुलक = पदों का संग्रह करने वाला। जिसके प्रत्येक पदमें चार चार चौकल हों उसे पादाकुलक कहते हैं। यथा—

चौकल ४ चारज ४ हांपर ४ आनो ४। चौकल ५ प्रकार के होते हैं अर्थात् SS, IIS, ISI, SII, IIII इन्हीं को मात्रिक डगण कहते हैं।

प्रश्न— राम नाम बिन गिरा न सोहै—यह एक चरण पादाकुलक का है या नहीं? कारण सहित उत्तर देव।

उत्तर नहीं क्योंकि इसमें त्रिकल के पीछे त्रिकल है चार चौकल नहीं बनते।

प्रश्न - फिर यह पद किस छंद का है?

उत्तर चौपाई का, जिसमें त्रिकल के पीछे त्रिकल आ सकते हैं। पादाकुलक के कुछ भेद नीचे लिखे जाते हैं:—

पद्धरि (अन्त में जगण ISI)

वसु वसु कल पद्धरि लेहु साज, सेवहु संतत संतन समाज।
भजिये राधा सह नंद लाल, कटि जैहैं सब भवसिंधु जाल ॥ यथा—

श्रीकृष्णचंद्र अरविंद नैन, धरि अधर बजावत मधुर बैन।
गण ग्वाल संग आगे सु धेनु, वन तें व्रज आवत मोद देन ॥

अरिल्ल (अन्त में II वा ISS)

सोरह जन लल याहु अरिल्ला, पत्र बिहीन न सोह करिल्ला।
ले हरि नाम मुकुन्द मुरारी, राधा बल्लभ कुंज बिहारी ॥

इसके किसी चौकल में 'जन' जगण ISI न हो। करिल्ला=करील।

डिल्ला (अन्त में भगण ऽ।।)

बसु बसु भन्ता डिल्ला जानहु, राम पदाम्बुज हिय महँ आनहु।
सीख हमारी जो हिय लावहु, जन्म मरण के फंद नसावहु ॥

भन्ता = भगण हो अंत में।

उपचित्रा (८+ग+४+ग)

बसु पर गोरस ज्यों उपचित्रा, सिया-रमण गति चित्र विचित्रा।
तातें भजिये संतत रामा, हुइहौ मीता पूरण कामा ॥

इसके किसी एक वा अधिक चौकल में जगण ।ऽ। अवश्य हो जैसे 'सिया-र'।

पज्झटिका (८+ग+४+ग)

बसु गुरु रस जन है पज्झटिका, व्यर्थ न खोवहु एकहु घटिका।
संतत भजिये सीता रामा, हुइहौ मीता पूरण कामा ॥

इसके किसी चौकल में 'जन' जगण ।ऽ। न पड़े।

सिंह (आदि ॥ अंत ॥ऽ)

लल सोरह कल सिंहहिं सरसै, हरि सुमिरत अति आनंद बरसै।
भजिये सादर नित सिय पति को, लहिये निश्चय उत्तम गतिको ॥

इसी के दूने को कामकला कहते हैं।

मत्त समक (९वीं मात्रा लघु)

मत्त समक गंतल नौ बसु द्वै, भजन करहु नित प्रभु शरण ह्वै।
नित्य भजिय तजि मन कुटिलाई, राम भजे किहिं गति नहिं पाई ॥

विश्लोक (५वीं और आठवीं मात्रा लघु)

सर बसु लघु कहिये विश्लोका, राम भजत सब होहिं विशोका।
हिमतें प्रगट अनल बरु होई, राम विमुख सुख पाव न कोई ॥

चित्रा (५, ८ और ९वीं मात्रा लघु)

सर बसु नव लघु रच चित्रा को, हरिपद सुमिरत भलो न काको।
कवि कोविद अस हृदय विचारी, गावहिं हरि गुण कलि मल हारी ॥

वानवासिका (६वीं और १२वीं मात्रा लघु)

ग्रह रवि लघु वानवासिका को, धन्य जु राम भजन महँ छाको।
बुध बरणहिं हरि यश अस जानी, करहिं पुनीत सुफल निज बानी॥

इति पादाकुलक प्रकरणम्।

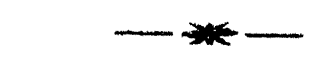

चौपाई (अन्त में ऽ। न हो)

सोरह क्रमन 'जतन' चौपाई, सुनहु तासु गति अब मनलाई।
विकल परे सम कल नहिं दीजै, दिये कहूं तो लय अति छीजै॥
सम सम सम सम सम सुखदाई, विषम विषम सम समहू भाई॥
विषम विषम सम विषम विषम सम, विषम दोय मिलि जानिय इकसम।

सोरह क्रम न जतन चौपाई, सोलह मात्राओं में क्रम न = गुरु लघु का अथवा चौकलों का कोई क्रम नहीं। क्रमन=क्रम पूर्वक। क्रम इतनाही कि सम के पीछे सम और विषम के पीछे विषम कल हो इन्हीं की 'जतन' यत्नपूर्वक योजना करो। जत-न=अन्त में जगण ।ऽ। वा तगण ऽऽ। न पड़े अर्थात् गुरु लघु न हो।

(१) त्रिकल परे समकल नहिं दीजे त्रिकल के पीछे समकल मत रखो यथा—

(अशुद्ध)	(शुद्ध)
सुनत रामा	सुनत राम
सुनत सबहीं	सुनत सबहिं
सुनत शंकर	सुनत शंकरहिं
सुनत सबजन	सुनत सबहिं

(२) सम सम सम सम सम सुखदाई-सम सम प्रयोग अत्युत्तम होते हैं यथा—

गुरु--पद--रज--मृदु--मं--जुल--अं--जन।

(३) विषम विषम सम समहू भाई-यथा—

नित्य भजिय--तजि--मन--कुटि--ला--ई।

(४) विषम विषम सम विषम विषम सम यथा—

कहहु--राम की कथा--सुहा--ई।

(५) विषम दोय मिलि जानिय इक सम यथा—

बं--दौं--राम--नाम--रघु--बर--को।

अभिप्राय यह है कि समकल के पीछे समकल रखते जावो। यदि विषम कल आ पड़े तो एक विषम कल और रखकर समता प्राप्त कर लेव जैसे उदाहरण १, ३, ४ और ५ से विदित है।

स्मरण रहे कि त्रिकल के पीछे चार मात्राओं का एक जगण ।S। आ सकता है क्योंकि उसकी पूर्व की दो मात्राओं में एक त्रिकल पूरा आजाता है। यथा – यहै-हमा-रिवं-ड़ी-सिव-का-ई। चौपाइयां कई प्रकार की होती हैं जिन चौपाइयों में वर्णों की संख्या और उनके स्थान निर्दिष्ट हैं वे सब वर्णवृत्तों में भिन्न२ नाम तथा उदाहरण सहित मिलेंगी। जैसे=विद्युन्माला, चम्पकमाला, शुद्धविराट, मत्ता, पणव, अनुकूला दोधक, भ्रमर विलसिता, स्वागता, तामरस, चंद्रवर्त्म, कुसुम विचित्रा, मालती, मोदक इत्यादि। चौपाई के दो चरणों को अर्द्धाली कहते हैं। चौपाई को रूप चौपाई भी कहते हैं। कोई कोई लोग चौपाई के एक पद को ही चौपाई कहते हैं यह ठीक नहीं एक पद को एक पाई दो पद दो पाई वा अर्द्धाली, तीन पद तीन पाई और चार पद चौपाई जानिये।

चौपाई और पादाकुलक की चाल (गति) एकसी ही है भेद के ल इतना है कि पादाकुलक के प्रत्येक चरण में चार चार चौकल होते हैं। चौपाई में इनकी आवश्यकता नहीं. पादाकुलक और चौपाई के पद आपस में मिल जाते हैं जिस चौपाई के चारों चरणों में चार चार चौकल हों उसे पादाकुलक ही जानों।

पदपादाकुलक (आदि द्विकल)

पदपादाकुलक कला सोला, सम विषम विषम गति अनमोला।
ब्रज में हरि होरी खेलि रहे, गण ग्वाल अबीरहिं मेलि रहे।।

पदपादाकुलक के आदि में एक द्विकल (S वा ।।) अवश्य रहता है आदि में त्रिकल (।S, SI, ।।।) कदापि नहीं आता, समकल तो आदि अन्त तक चलते हैं परन्तु आदि में द्विकल के पीछे त्रिकल आवे तो एक त्रिकल और रखना पड़ता है। पदपादाकुलक की चाल कुछ कुछ तोटक वृत्ति से मिलती है। चौपाई और पदपादाकुलक में यही अंतर है कि चौपाई के आदिमें तो समकलके पीछे समकल और विषमकल के पीछे विषमकल रहता है परन्तु पदपादाकुलक के आदि में सदा एक द्विकल रहता है द्विकल के पीछे त्रिकल आ सकता है। द्विकल के पीछे जो चौदह मात्रा रहती हैं उनमें समकल तो आ सकते हैं परन्तु अन्त तक चौकल नहीं आ सक्ते। शृंगार छन्द का उलटा पदपादाकुलक है। इन सबों के कुछ उदाहरण नीचे देते हैं:—

पादाकुलक (सब चौकल ४+४+४+४)

गुरुपद-रजमृदु-मंजुल-अंजन। नयनअमियदृग-दोषविभंजन।
तिहिकर विमलवि-वेकवि-लोचन। वरणौं-रामच-रितभव-मोचन॥

इसके प्रत्येक पद में चार चार मात्राओं के चार चौकल बनते हैं, अतएव पादाकुलक।

चौपाई (सब समकल या विषम युग्म)

स्वइ-रघु-बर-स्वइ-लछ-मन-सीता। देखि-सती-अति-भइ-सभी-ता।
हृदय-कंप-तन-सुधि-कछु-नाहीं। नयन-मूंदि-बै-ठी-मग-मांहीं॥

इसके प्रथम दो चरणों में तो चौकल बन सकते हैं परन्तु तीसरे और चौथे में नहीं, अतएव यह चौपाई।

शृंगार (आदि ३+२ अन्तऽ'=३)

सजत-सब-ग्वाल-बधू-शृंगार। भजत-नित-सुन्द-र-नं-दकु-मार।
धन्य-वह वृं-दा व-न को-धाम। श्याम-जँह-रास कीन अभिराम॥

इसका एक उपभेद अन्त में ।ऽ सहित और है यथा—

भजिय निज माधव को मन लगा।

पद्पादाकुलक, चौपाई वा शृंगार को विवेचना द्विकल और त्रिकल से ठीक होती है। पादाकुलक और चौपाई के पदों का परस्पर संयोग हो सकता है ऐसे संयोग को भी चौपाई कहते हैं जब तक चारों चरणों में चार चार चौकल न मिलें तब तक वह छन्द पादाकुलक नहीं कहा जा सक्ता उसे चौपाई ही जानो। शृंगार वा पद पादाकुलक के पद पृथक रहते हैं। उनका मेल पादाकुलक वा चौपाई से भी नहीं होता।

महासंस्कारी (१७ मात्राओं के छन्द भेद २५८४)

राम (१, ८ अन्त में यगण ।ऽऽ)

मनु राम गाये, सुभक्ति सिद्धी, विमुख रहै सोइ, लहै असिद्धी।
श्री राम मेरो, शोक निवारो, आयो शरण प्रभु, शीघ्र उबारो॥

मनु १४, राम ३ भक्ति १, सिद्धि ८

चन्द्र (१०-७)

मत्त दस मुनी रचौ रुचिर चन्द्रै, धार मत तू कबौं मलिन तन्द्रै।
शरण जावो प्रभू करहिं दाया, तोर काटैं सबै जाल माया॥

इसके अन्त में गुरु लघु का कोई विशेष नियम नहीं। तन्द्रै = आलस को।

पौराणिक (१८ मात्राओं के छन्द भेद ४१८१)

राजीवगण

नव नव राजिव, गण कल धारिये, माधो गोविन्द, नाम उचारिये।
तन सोहत सुभग, चर्चित चन्दना, चरण सरोज नित, कीजिये बंदना॥

(अन्य नाम माली)

शक्ति (आदि में लघु । अन्त में स ।।ऽ र ऽ।ऽ वा न ।।।)

दुती चौगुनी पंच शक्ती सरन, कहां जाऊँ तजि अंब तोरे चरन ।
लहौ आदि माया घने प्रेम सों, जपत नाम सुन्दर सदा नेम सों ॥

दुती=त्रिकल दो बार, चौ ४, गुणी ३, पंच ५ । लहो आदि=लघु हो आदि में ।

रचना क्रम ३+३+४+३+५=१८

यह छंद भुजंगी और चंद्रिका वृत्तों की चाल पर होता है । वे गणबद्ध हैं, यह स्वतंत्र है । इसकी १, ६, ११ और १६ वीं मात्राएं सदा लघु रहती हैं । यथा मत्पिता श्री बख्शीरामकृत हनुमन्नाटके—

शिवा शंभु के पांव पंकज गहौं, विनायक सहायक सबै दिन चहौं ।
भजौं राम आनंद के कन्द को, दिया जिन हुकुम पौन के नन्द को ॥

यह छन्द उर्दू के इस बहर से मिलता है —

फ़ऊलुन फ़ऊलुन फ़ऊलुन फ़अ़ल यथा —

करीमा बबख्शाय बरहालमा, कि हस्तम असीरे कमन्दे हवा ।

बंदन (अन्त में ऽ।)

दस वसु कल वंदन, साजहु सनंद, सुमिरत, हरि नामहिं, पावहु अनन्द ।
बोलत जय जय श्री, गोपाल लाल, गोपी जन वल्लभ, प्रभु प्रणत पाल ॥

पुरारि (७-११ अन्त ऽ)

मुनिहिं पुरारि, जतायो गहि बहियां ।
अहमिति तात, न भाख्यो हरि पहियां ॥
तउ मुनि जाय, बखानी निज महिमा ।
को नहिं जान, भई जो गति महिमा ॥

पहियां=पास, महिमा=प्रताप, पृथ्वी में, संसार में ।
मुनि=७, नारद । पुरारि ११, शिव ।

महापौराणिक (१९ मात्राओं के छंद भेद ६७६५)

पीयूषवर्ष (१०-९ ल ग)

दिसि निधी, पीयूष, वर्षत झरि लगा ।
राम तजि नहीं आन, है कोई सगा ॥
यह सकल संसार, सपने तूल है ।
सांच नाहीं मीत, भारी भूल है ॥

जहां यति का कोई विशेष नियम नहीं वहां इसी छन्द को आनन्दवर्द्धक कहते हैं यथा—

पाय के नर जन्म क्यों चेते नहीं, ध्यान हरि पद पद्म में देते नहीं ।
घोर कलियुग में नहीं कुछ सार है, रामही का नाम इक आधार है ॥

आनन्दवर्द्धक में अन्तिम गुरु के स्थान में दो लघु आने से भी हानि नहीं । इस छन्द की बहर फ़ारसी के इस बहर से मिलती है (फ़ायलातुन फ़ायलातुन फ़ायलुन) यथा—

मन नमी दानम फ़ऊलुन फ़ायलुन शेर मोगोयम बहअज़ दुर्रे अदन ।

सुमेरु (१२+७ वा १०+९)

लहै रवि लोक सोभा, यह सुमेरू ।
कहूं अवतार पर, ग्रह केर फेरू ॥
सदा जम फन्द सों, रहि हौ अभीता ।
भजो जो मीत हिय सों, राम सीता ॥

इस छंद के आदि में लघु रहता है अन्त में यगण ।SS कर्णमधुर होता है । ध्यान रहे कि इसके अन्त में SS।, S।S, ।S। और SSS ऐसे प्रयोग नहीं आते, उर्दू बहर यों है—मफ़ाईलुन मफ़ाईलुन फ़ऊलुन यथा—
तसव्वर राम का शामो सहर हो, ख़याले जानकी नक्शे जिगर हो ॥

तमाल (अंत में गल S।)

उन्निस कल गल यति है अन्त तमाल ।
कहां गये तुम छांडि हमें नँदलाल ॥
बाट जोहती हैं हम जमुना तीर ।
प्रगटि बेगि किन हरहु बिरह की पीर ॥

सू०—चौपाई के अंत में S। रखने से भी यह छंद सिद्ध होता है ।

सगुण (आदि । लघु अन्त में जगण ।S।)

सगुण पंच चारौं जुगन बंदनीय ।
अहो मीत प्यारे भजो मातु सीय ।
लहो आदि माता चरण जो ललाम ।
सुखी हो मिलै अन्त में राम धाम ।

रहौ आदि लघु हो आदि में।
रचना क्रम (५+५+५+४)

यह छंद उर्दू के इस बहर से मिलता है—फ़ऊलुन फ़ऊलुन फ़ऊलुन फ़ऊल यथा—

बनामे खुदावंद बिसियार बख्शा।

नरहरी (१४-५ अन्त में न ग ।।।ऽ)

मनु सरन गहे सब देवा, नरहरी।
झट आये खंभा फारी, तिहिं घरी।
रिपु हन्यो दीन—सुख भारी, दुख हरी।
सुर जय जय जयति उचारो, शुभ करी॥

नग = अंत में नगण और १ गुरु।

दिंडी (९-१० अन्त में कर्ण ऽऽ)

करण भक्ती की, दोष हरण दिंडी।
घमंडी हो मत, माटी की पिंडी॥
भजहु सीतावर, रामचन्द्र स्वामी।
अन्त होओगे, सुर पुर के धामी॥

इसकी चाल मराठी में बहुत है यथा—

(१) कथा बोलूं हे मधुर सुधा धारा। होय श्रृंगारा करुण रसा धारा।
निषध राजा नल नाम धेय होता। वीर सेना चा तनय महा होता॥

(२) चौगुणींनें जरि पूर्ण शील भानू। नसा ऐसे तरि कला निधी मानूं।
प्रतापा चा जो न मावले भानू। तया सारीखा कोण दुजावानू॥

महादैशिक (२० मात्राओं के छन्द भेद १०९४६)

योग (१२-८ अन्त में य ।ऽऽ)

द्वादस पुनि आठ सुकल योग सुहायो।
मानुष तन पाय सदा रामहिं गायो॥
जप तप तब और कहा शेष रहोरे।
छांडि सकल साधन हरि नाम कहोरे॥

शास्त्र [अन्त में नंद ऽ।]

मुनीके लोक लहिये शास्त्र आनंद।
सदा चितलाय भजिये नंद के नंद॥
सुलभ है मार्ग प्यारे ना लगै दाम।
कहौ नित कृष्ण राधा और बलराम॥

यह छंद उर्दू के इस बहर से मिलता है–मफ़ाईलुन मफ़ाईलुन मफ़ाईल। यथा—

रहे बिर्दै जबां श्रीराम का नाम नमो रामो नमो रामो नमो राम।

हंसगति [११–६]

शिव सु अंक कलहंस, गती भन पिंगल।
बदत ग्राम भाषाहिं, कहुं कहुं डिंगल॥
जगत ईस नर भूप, सिया ढिग सोहत।
गल बैजंती माल, सुजन मन मोहत॥

मंजुतिलका [१२-८ अन्त में जगण ।ऽ।]

रच मंजुतिलकाहिं कल, भानु बसु साज।
सो धन्य नित सेव जो, सन्तन समाज॥
भजु जो सदा प्रेम सों, केशव उदार।
नसिहैं भव फंद लहै, तू सुख अपार॥

अरुण (५, ५, १० अन्त में ऽ।ऽ)

पंच सर, दिसिहिं धर, अरुण शुभ छन्द में।
राम भज, मोह तज, परो कह फन्द में॥
भूल मत, कित भ्रमत, शरण रहु राम के।
मंजु तन, धाम धन, कोउ ना काम के॥

त्रैलोक (२१ मात्राओं के छंन्द भेद १७७११)

प्लवंगम (८-१३ आदि ऽ अन्त में जग ।ऽ।ऽ)

गादि बसु दिसि, राम जगंत प्लवंगमें।
धन्य वही जो, रँगे राम रस रंग में॥
पावन हरि जन, संग सदा मन दीजिये।
राम कृष्ण गुण, ग्राम नाम रस भीजिये॥

गादि=गुरु हो आदि में, बसु ८ दिसि १०, राम ३।

कोई २ ग्यारह और दस पर भी यति मानते हैं। यथा—

राम राम जो जपत, लहत सब कामना।

प्लवंगम के दो उपभेद और देखे जाते हैं अर्थात् तगंत और नगन्त। यथा—

[तगण और एक गुरु अन्त में SSIS]

मैं बूझौं क्यों मित्र भजत ना शंकरै।

[नगण और एक गुरु अन्त में IIIS]

मैं बूझौं क्यों मित्र भजत ना गिरधरै।

(अन्य नाम अरल वा अरिल परन्तु १६ मात्राओं के छन्दों में भी अरिल्ल नामक एक प्रसिद्ध छंद है)

चान्द्रायण [११-१०]

शिव दस जरा सु चन्द्र, अयन कवि कीजिये।
प्रभू जू दया निकेत, शरण रख लीजिये॥
नरवर विष्णु कृपाल, सबहि सुख दीजिये।
अपनी दया विचारि, पाप सब मींजिये॥

जरा=११ मात्रा जगणांत और १० मात्रा रगणांत होती हैं।

सू०—प्लवंगम और चांद्रायण के मेल से अन्त में IS लघु गुरु का तिलोकी नामक छंद माना गया है-यथा-सोरह पर कल पंच तिलोकी जानिये। प्लवंगम चांद्रायण और तिलोकी का अन्तर नीचे लिखा जाता है –

(१) प्लवंगम के आदि में S गुरु रहता है और अन्त में ISIS जगण और एक गुरु रहते हैं। प्लवंगम के उपभेदों में भी आदि गुरु रहता है और उनके अन्त में IS लघु गुरु अवश्य रहते हैं। प्लवंगम का अर्थ बन्दर है इसीसे इसकी चाल समझना चाहिये।

(२) चांद्रायण के आदि में लघु व गुरु समकलात्मक रूप से आते हैं जैसे SS, IIS, SII, वा II यदि कोई पद त्रिकल से प्रारंभ हो तो एक त्रिकल और रखना पड़ता है परंतु ११ मात्रायें जगणांत और दस मात्रायें रगणांत होती हैं, चन्द्र के जैसे २ पक्ष शुक्ल और कृष्ण प्रसिद्ध हैं वैसे ही इसके पूर्वार्ध और उत्तरार्ध पादांत की रीति भी भिन्न भिन्न है।

(३) प्लवंगम और चान्द्रायण के पद जब आपस में मिल जाते हैं तब वह छंद तिलोकी कहाता है। त्रिलोकी = ३ × ७ = २१ मात्रायें। चौपाई पर ५ मात्रायें उपरोक्त नियमानुसार अधिक रखने से ही ये तीनों छंद सिद्ध होते हैं। तिलोकी के अन्त में दो पद हरिगीतिका के रखकर कविजनों ने उसका नाम अमृतकुंडली रखा है। यथा श्रीराधाकृष्ण-चंद्रिकायाम्—

दुर्गा सों अस भाखि कृष्ण आतुर भये।
चाहि षडानन ओर बैन बोलत भये॥
अंश रूपतें वत्स, धरातल जावहू।
जांववती सुत होय, देव सुख पावहू॥
करि अंश सूर समुदाय उर हरषाय भूमि चलैं सबै।
अवतार मानवधारि वसुधा भार मैं हरिहौं सबै॥

सिन्धु (आदि लघु)

लखौ त्रय लोक महिमा सिंधु की भारी।
तऊ पुनि गर्व के कारण भयो खारी॥
लहे प्रभुता सदा जो शील को धारै।
दया हरि सों तरै कुल आपनो तारै॥

त्रय ३ × लोक ७ = २१। इसकी पहली, आठवीं और १५ वीं मात्रायें लघु होती हैं

संत (३, ६, ६, ६)

गुणौ शास्त्र छहो राग सदा संत भजौ।
रहो काल नाचि सीस बुरो संग तजौ॥
भला अब तौ मन देव प्रभू भक्ति गहौ।
सिया राम सिया राम सिया राम कहौ।

सन्त–अन्त में सगण।

भानु (६-१५ अन्त में नन्द ऽ।)

रससानी, कथा भानु कुल मणि रघुनंद।
जगमाहीं, बरणत संत सदा सानंद॥
नित गैये, रामचन्द्र के चरित उदार।
फल पैये, चारों पुनि नहिं यह संसार॥

रस ६, भानु १२। कुल ३ (मुख्य कुल तीन हैं प्रकृत, सहज, कोमल)
(अर्थात् माइका, ससुराल, ममियारा) यथा –

जगदम्बा, तुम्हरी कला न बरणी जाय, जग माहीं, घटघट महिमा रही समाय॥
अपनैये, कर कछु कृपा दृष्टि की कोर, लघु चेरो, भानु सदा शरणागत तोर॥

महारौद्र (२२ मात्राओं के छन्द भेद २८६५७)

रास [८, ८, ६ अन्त सगण ।ऽ]

बसु बसु धारौ पुनि रस सारौ रास रचौ।
तप तप काहे देही दाहे अग्नि पचौ॥

काम तजौ धन धाम तजौ हरि भक्ति सजौ।
राम भजौ बलराम भजौ श्रीकृष्ण भजौ॥

काम = इच्छा।

राधिका [१३-]

तेरा पै सज नव कला, राधिका रानी।
लखि रूप अलौकिक मातु, कीर्ति हरखानी॥
कहुं बर याके अनुहार, अहै ब्रजबाला।
सुनि सब कहतीं ह्वै मुदित, एक नंदलाला॥ यथा—

सब सुधि बुधि गइ क्यों भूलि गई मति मारी।
माया को चेरो भयो भूल असुरारी॥
कटि जैहैं भव के फंद पाप नसि जाई।
रे सदा भजौ श्रीकृष्ण राधिका माई॥

बिहारी [१४-८]

द्वै चार छहौ आठ रच्यो, रास बिहारी।
सुनि संग सखी राधे लै, कुंज सिधारी॥
बंसी सु मधुर श्याम तहां, ज्योंहिं बजाई।
सब गोपि नचैं झूमि झूमि, बलि बलि जाई॥

द्वै चार = दो ब र ४ = ८।

यहां छन्द उर्दू के इस बहर से मिलता है— मफऊल मफाईल मफाईला फऊलुन। यथा—

यों कहके गया दिल तु मुझे याद किया कर।

कुंडल [१२-१० अन्त में SS]

भानु राग कर्ण देखि, कुंडल पहिरायो।
ताहि दै असीस चूमि, हीय सों लगायो॥
दानिन में महा दानि, सुजस छा रहो है।
कर्ण नाम प्रात लेत, पुण्य पुंज सो है॥ यथा—

भानु १२ + ६ + कर्ण SS

तू दयाल दीन हौं तु दानि हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी तु पाप पुंजहारी॥
नाथ तू अनाथ को अनाथ कौन मोसों।
मो समान आरत नहिं आरति हर तोसों॥१॥
जय गणेश जय गणेश सकल विघ्न हारी।
सकल काज सिद्ध करण, भक्तन सुखकारी॥

मस्तक पै चंद्रबाल, चार भुजाधारी।
शंकर सुत गौरि पुत्र, मूषक असवारी ॥२॥
जय महेश जय महेश, जय महेश देवा।
लसत गले मुंडमाल करत सिद्ध सेवा॥
नयन तीन लाल और गरल सरल भेवा।
भूषण सँग करत ख्याल, विधि न पाव भेवा ॥३॥
मेरे मन राम नाम, दूसरा न कोई।
सन्तन ढिग बैठि बैठि, लोक लाज खोई॥
अब तो बात फैल गई, जानत सब कोई।
अँसुवन जल सींचि सींचि प्रेम बेलि बोई ॥४॥
सीतापति रामचन्द्र रघुपति रघुराई।
बिहँसत मुख मंद मंद सुन्दर सुखदाई॥
कीरति ब्रह्मांडखंड, तीन लोक छाई।
हरखि निरखि तुलसीदास, चरननि रज पाई ॥५॥

उदाहरण १ के ३रे पद में यति १२, १० पर नहीं है किंतु प्राचीन कविता के कारण दोष उपेक्षणीय है। यही पद यों निर्दोश हो सक्ता है—

नाथ तू अनाथ केर को अनाथ मोसों।

जिस कुंडल के अंत में एकही गुरुहो उसे उड़ियाना कहते हैं। यह छन्द प्रभाती में भी पाया जाता है। यथा—

ठुमुकि चलत रामचन्द्र बाजत पैजनियां।
धाय मातु गोद लेत दशरथ की रनियां॥
तन मन धन वारि मंजु, बोलती बचनियां।
कमल बदन बोल मधुर, मंदसी हँसनिया॥

सुखदा (१२-१० अन्त में ऽ)

रवि दसहूं दिसि भ्राजै, गति लोकन सुखदा।
पर उपकारी जैसे, स्वप्नहु ना दुखदा॥
नर देही सोने की, परमारथ कर ले।
चाहसि जो भल अपनो, भानु सीख धरले॥

रौद्राक (२३ मात्राओं के छन्द भेद ४६३६८)

उपमान (१३-१० अन्त में ऽऽ)

तेरह दस उपमान रच, दै अन्तै कर्णा।
राम कृष्ण गोविंद भजु, हो उनके शर्णा॥
अबहुं सुमिर हरि नाम शुभ, काल जात बीता।
हाथ जोर बिनती करौं, नाहिं जात रीता॥

अन्त में (कर्ण) ऽऽ का प्रयोग कर्णमधुर होता है परन्तु अन्त में एक गुरु रहने से भी क्षति नहीं। अन्य नाम-दृढ़पट वा दृढ़पद।

हीर (६, ६, ११ आदि में ऽ अन्त में रगण ऽ।ऽ)

आदि गुरु अंतहिं रू, ऋतु रस हर हीर में ।
चित्त लगा पाद पद्म, मोहन बल बीर में ॥
काम तजौ, धाम तजौ, बाम तजौ साथहीं ।
मित्त गहो, नित्त अहो, मंजु-धर्म पाथहीं ॥

जग (१०, ८, ५ अन्त में नन्द ऽ।)

दिसि बसु गति दाखा, नन्द दुलारी, जग मांझ ।
हरि नामहिं प्यारे, भजहु सबेरे अरु सांझ ॥
श्रीराधा माधो, शरण गहौरे, सह प्रीत ।
मानौ जू मानो, सीख हमारी, यह मीत ॥
श्रीराधा माधो, ध्याव सदाही, सह प्रीत ।
मानो जू मानो, सीख हमारी. यह मीत ॥
नर देही नाहीं तोहिं मिलैरे, हरबार ।
सुन सुन रे प्यारे, चरण दुहूं के, उरधार ॥

संपदा (११-१२ अन्त में ।ऽ।)

शिव आभरण सजाय, सकल संपदा सु लेहू ।
इक बेल पत्र देव, हिये धारि कै सनेहू ॥
हैं आसु तोष शीघ्र, द्रवै प्रभु दयानिधान ।
क्यों तू न ध्याय नित्त, तिन्हैं मित्र हूँ अजान ॥

अवतार (१३-१०)

अवतार राम की कथा, सब दोष गंजनी ।
नहिं ता समान आन है, त्रय ताप भंजनी ॥
प्रभु नाम प्रेम सों जपे, हे राम हे हरे ।
गणिकाहु अजामील से, पापी घने तरे ॥
अवतार १०, राम ३, दोष १० ।
अन्त में रगण ऽ।ऽ कर्णमधुर होता है ।

सुजान (१४-९ अन्त में नंद ऽ।)

विद्या सुभक्ति नन्द युक्त, धन्य सो सुजान ।
नहिं तिहि समान बुद्धिमंत, और भाग्यमान ॥

श्री राम नाम ही अधार, और सब असार।
संसार ताप दूर करण, राम नाम सार॥
विद्या १४, भक्ति ६।

निश्चल (१६-७ अंत में नन्द ऽ।)

निश्चल सोला सात कला को, पद सानंद।
जे न भजैं प्रभु श्याम सुन्दरहिं, सो मतिमंद॥
राधा बल्लभ कुंज बिहारी, ध्यावौ मीत।
तिनहीं के पद पंकज सों नित, लावौ प्रीत॥

मोहन (५, ६, ६, ६)

तत्व रस, राग छहौ, छन्द भलो, मोहन को।
गाइये, गान सदा, कृष्ण मदन, मोहन को॥
मीत क्यों, भूल करै, होत कहा, धाम तजे।
क्यों न भव, सिंधु तरै, पाद पद्म, श्याम भजे॥

अवतारी (२४ मात्राओं के छंद भेद ७५०२५)

रोला (११-१३)

रोला को चौबीस, कला यति शंकर तेरा।
सम चरणन के आदि, विषम सम कला बसेरा॥
राम कृष्ण गोविन्द, भजे पूजत सब आसा।
इहां प्रमोद लहंत, अंत बैकुंठ निवासा॥

रचना क्रम विषम पद ४+४+३ वा ३+३+२+३
सम पद ३+२। ४+४ वा ३+२+३+३+२

सूचना जिस रोला के चारों पदों में ११वीं मात्रा लघु हो उसे काव्य छंद कहते हैं। वर्णवृत्त में इसी के एक भेद (भ न ज भ ज ज ल) को रसाला नामक वृत्त माना है यथा (छन्दोमंजरी से)

मोहन मदन गुपाल, राम प्रभु शोक निवारन।
सोहन परम कृपाल, दीन जन पाप उधारन॥
प्रीतम सुजन दयाल, केशि बक दानव मारन।
पूरण करण सुनाम, दीन दुख दारिद टारन॥

बाबा भिखारीदासजी ने रोला में २४ मात्रायें मानकर उसकी गति अनियमित लिखी है परन्तु उनकी पद योजना देखकर यह पाया जाता है कि प्रत्येक पद में उन्होंने छै छै चौकल मानकर बारह बारह मात्राओं पर विश्राम माना है यथा—

रवि छवि देखत घुघ्घू, घुसत जहां तहँ बागत।
कोकनि को ताहीं सों, अधिक हियो अनुरागत॥
त्यों कारे कान्हहिं लखि, मन न तिहारो पागत।
हमको तो वाही तें, जगत उज्यारो लागत॥

सर्व्व सम्मत नियम तो वही है जो आदि में ११, १३, के विश्राम सहित लिखा है।

दिगपाल (१२, १२)

सविता विराज दोई, दिगपाल छन्द सोई।
सो बुद्धिमंत प्राणी, जो राम शरण होई॥
रे मान बात मेरी, मायाहिं त्यागि दीजे।
सब काम छांड़ि मीता, इक राम नाम लीजे॥

सविता = १२। (अन्य नाम मृदु गति । काम = इच्छा।

यह शब्द उर्दू के इस बहर से मिलता है-मफऊल फायलातुन मफऊल फायलातुन, यथा –

क्या क्या मची हैं यारो बरसात की बहारें।

रूपमाला (१४-१० अन्त में ऽ।)

रत्न दिसि कल रूपमाला, साजिये सानन्द।
रामही के शरण में रहि, पाइये आनन्द॥
जातु हौ वन वादिही गल, बांधिके बहु तंत्र।
धामहीं किन जपत कामद, राम नाम सुमंत्र॥

(अन्य नाम-मद)

शोभन (१४-१० अन्त में जगण ।ऽ।)

चौबिस कला विद्या दिसा, मंजु शोभन साज।
तारिबे को दुखद भवनिधि, धन्य संत समाज॥
तिनसों न कोऊ जगत में,-जानिये सुखकन्द।
हरि भक्ति को उपदेश करि, काटहीं भव फन्द॥

(अन्य नाम सिंहिका)

लीला (७-७-१० अंत में सगण)

सुनि सुनि कला, पुनि दस कला, हरि लीला सुखदा।
सुने बिना न, तरत कोऊ, भव वारिधि दुखदा॥
बेदहु जाहि, बखानि थके, नेतिहि नेति भनै।
ऐसे प्रभुहिं, विचारि भजौ, जो सब पाप हनै॥

सुमित्र (१०, १४ आदि ।ऽ। अंत ।ऽ।)

कला सुदस विद्या, भूषित जो सोई सुमित्र।
अनीत नहिं भाखत, चालहु है जाकी पवित्र॥
स्वधर्ध रत संतन, ध्यावै जो शंकर उदार।
सुयोग्य वहि जानो, संगति में ताकी बहार॥

(अन्य नाम=रसाल)

इसी छंद का एक रूप वर्णवृत्तमें इस प्रकार होगा (ज स त य र ल)
यथा—रसाल वहि लेखो जो सत यारी लै निवाह।

सारस (१२-१२ आदि में ऽ)

भानु कला सशि कला, गादि भला सारस है।
राम भजत ताप भजत, शांति लहत मानस है॥
शोक हरण पद्म चरण, होय शरण भक्ति सजौ।
राम भजौ राम भजौ, राम भजौ राम भजौ॥

यह छंद उर्दू के इस बहर से मिलता है—मुफ्तअलन मुफ्तअलन मुफ्तअलन मुफ्तअलन। दिगपाल के आदि में समकल और सारस के आदिमें विषमेकल होता है। अनुप्रास मिले तो अच्छा है न मिले तो हानि नहीं।

महावतारी (२५ मात्राओं के छन्द भेद १२१३९३)

गगनांगना (१६-९ अन्त में रगण ऽ।ऽ)

सोरह नौकल धरि कवि गावत, नव गगनांगना।
प्रभु प्रसाद व्यापत न जरा तऊ, हरि पद रंगना॥
रूप सुभग जउ अर्थ न कछु है, अनरथ मंडती।
नाच रंग महँ रहती निस दिन, मुनि तप खंडती॥

इसमें विशेषता यह है कि इसके प्रत्येक पदमें ५ गुरु और १५ लघु रहते हैं। कहीं २ इसका नाम गगनानंग लिखा है सो भूल है शुद्ध नाम गगनांगना है।

मुक्तामणि (१३-१२ अन्त में कर्ण ऽऽ)

तेरह रवि कल कर्ण सह, मुक्तामणि रचि लीजे।
राम नाम माला सुभग, फेरन में चित दीजे॥
सत संगति कीजे सदा, पाप पुंज सब जारै।
हरि भक्ती है सार जग, ताहि न कबहुं बिसारै॥

सुगीतिका (१४-१०, आदि । अंत नंद ऽ।)

सुगीतिका तिथि औ दिशा शुभ, गाइये सानंद ।
जपौ सदा शुभ नाम पावन, कृष्ण आनँद फंद ॥
लहौ पदार्थ सबै जु दुर्लभ, गाय नित प्रभु गीत ।
पदारविंदहिं सेइये नित, तव मिटै भव भीत ॥ यथा—

हजार कोटि जु होयँ रसना, एक एक मुखम्र ।
मुखहु अरब्बिन होंय ऐसे, तीव्र बैन समग्र ॥
खरो रहै दिग दास तनु धरि, देव परम पुनीत ।
कछुक अहिराज बृजराज कै, कहि सबै यश गीत ॥

सूचना—उदाहरण में 'ह' दग्धाक्षर है परन्तु यहां देवनुति में प्रयुक्त किया गया है इसलिये हकारका अथवा छंद के आदिमें जगणका दोष नहीं है ।

मदनाग (१७-८)

कला दस सात वसु मदनाग में, प्यारे सजिये ।
सिया बर राम को अति प्रेम सों, नितही भजिये ॥
उन्हीं की पावनी लीला सुनौ, कलिमल हरणी ।
यही भव सिंधु में जानो सदा, जनकी तरणी ॥

नाग (१०-८-७ अन्त ऽ।)

मत्ता दस आठै, स्वर गल ठाठै, नागहिं जान ।
इमि गतिन तरंगी, परम उमंगी, जान सुजान ॥
दस कंठ बिदारी, सुर दुख हारी, भजिये धीर ।
सोई रघुबीरा, करि निज तीरा, हरिहैं पीर ।

महाभागवत (२६ मात्राओं के छन्द भेद १९६४१८)

शंकर (१६-१० अन्त में नंद ऽ।)

सोला दोष कलायति कीजै, शंकरै सानंद ।
शिव बम्भोला भजत प्रेम सों, लहत अति आनंद ॥
शंभूके पदमें नहिं दीनों, चित्त तेरो भूल ।
सुख सम्पति धन देह धामको, देखकर मत भूल ॥

विष्णुपद (१६-१० अन्त में गुरु)

सोरह दस कल अंत गहो भल, सबतें विष्णु पदै ।
तिहिं समान प्रतिपाल करै को, जनहिं सकल सुखदै ॥

किमि प्रभु कहौं सहस मुख सों जस, शेषहु कहि न सकै।
नेति नेति कहि वेदहु थाके, तब को बरणि सकै॥

कामरूप (६-७-१० अन्त में ऽ।)

निधि मुनिहिं दिसि धरि, काम रूपहिं, साज गल युत मित्त।
बिन हरि भजन के, कौन काजै, अमित हय गय वित्त॥
दस सीस सम बहु, नष्ट भे सब, गर्व के जे गेह।
तासों कहौं तुहि, मान मेरी, राम सों कर नेह॥
(अन्य नाम–बैताल)

भूलना (७-७-७-५ अन्त में ऽ।)

मुनि राम गुनि, बान युत गल, भूलन प्रथम, मतिमान।
हरि राम विभु, पावन परम, जन हिय बसत, रति जान॥
यदु बंस प्रभु, तारण तरण, करुणायतन, भगवान।
जिय जानि यह, पछिताय फिर, क्यों रहत हौ, अनजान॥

मुनिराम=७ मात्रा तीन बार। बान=५। गल=गुरु लघु।

गीतिका (१४-१२ अन्त में ।ऽ)

रत्न रवि कल धारि के लग, अन्त रचिये गीतिका।
क्यों बिसारे श्याम सुन्दर, यह धरी अनरीति का॥
पायके नर जन्म प्यारे, कृष्ण के गुण गाइये।
पाद पंकज हीय में धरि, जन्म को फल पाइये॥

इसमें कभी कभी यति १२-१४ में भी आ पड़ती है यथा—

रामही की भक्ति में अपनी भलाई जानिये।

मुख्य नियम तो यह है कि इस छन्द की ३री, १०वीं १७वीं और २४वीं मात्रायें सदा लघु रहती हैं। अन्त में रगण कर्णमधुर होता है।

गीता (१४, १२ अन्त में ऽ।)

कृष्णारजुन गीता भुवन, रवि सम प्रगट सानन्द।
जाके सुने नर पावहीं, संतत अमित आनन्द॥
दुहुं लोक में कल्याण कर, यह मेट भव को शूल।
तातें कहौं प्यारे कबौं, उपदेश हरि ना भूल॥

नाक्षत्रिक (२७ मात्राओंके छंद भेद ३१७८११)

सरसी (१६-११ अन्तमें ऽ।)

सोरह शंभु यती गल कीजै, सरसी छन्द सुजान।
श्री कबीर की वाणी उत्तम, सब जानत मति मान॥
झूठो है धन धाम बावरे, अंत न आवत काम।
सांचो प्रभु को नाम बावरे, राम सिया भजु राम॥

यति = विश्राम

सूचना – श्रीकबीरजी की शुद्ध वाणी के पलटे होली में जो कबीर कहे जाते हैं वे इसी ढंग के होते हैं। यथा—

कोई नचावे रंडी मुंडी, कथक भांड़ धन खोय।
आप नचाइय बिद्या देवी मुलक मुलक जस होय॥
(भला यह रीति तुम्हारे कुल की है)
आपस में ना करैं मुकदमा, घूस हजारों देयँ।
डिगरी पावैं खरचा जोड़ैं, लंबी सांसैं लेयँ॥
(भला पंचाइत को नहिं मानेंगे)
बहू बेटियां मातु पिता की कही न मानैं बात।
पढ़े गुने बिन यही फजीहत दाऊजी अकुलात॥
(भला बिन नारि पढ़ाये मत रहियो)
(अन्य नाम कबीर, सुमन्दर)

शुभगीता (१५-१२ अन्त में रगण ऽ।ऽ)

सुधन्य तिथि रवि अर्जुनहिं जब, कृष्ण शुभ गीता कही।
प्रवृत्ति हो निज धर्ममें तब, युद्धमें कीर्ती लही॥
स्वधर्म में अनुकूल जो रह, तासु शुभ परिणाम है।
भजै जु पद गोविंदके नित, सो लहत विश्राम है॥

शुद्धगीता (१४-१३ अन्त में ऽ।)

मत्त चौदा और तेरा, शुद्ध गीता ग्वाल धार।
ध्याय श्रीराधारमण को, जन्म अपनो ले सुधार॥
पायके नर देह प्यारे, व्यर्थ मायामें न भूल।
हो रहो शरणै हरीके, तौ मिटै भव जन्म शूल॥

इस छंद की बहर फारसी के इस बहर से मिलती है–फायलातुन फायलातुन फायलातुन फायलात। यथा—

सूरते गरदद मुजस्सिम सुबह गोयद आशकार।

यौगिक (२८ मात्राओं के छंद भेद ५१४२२६)

सार (१६-१२ अन्त में कर्ण SS)

सोरह रविकल अंतै कर्ण, सार छंद अति नीको।
चरित कहिय कछु बालकृष्ण अरु, सुघर राधिकाजी को॥
धनि वृन्दाबन धनि बंशीबट, धनि सब गोपी ग्वाला।
धनि जमुना तट जहां मुदित मन, रास कियो नँदलाला॥

अन्त में कर्ण SS कर्णमधुर होते हैं।

प्रश्न—यदि अंत में एक गुरु वा दो लघु हुए तो कौन छंद होगा ?

उत्तर—ये दोनों रूपान्तर इसी छंद के हैं अंतमें दो गुरु का नियम तो केवल कर्ण-मधुरता के हेतु है, चाहो तो सब गुरुही गुरु रख सकते हो, यथा—

(१) सादर सुनिये सादर गुनिये मधुर कथा रघुबर की। S)
(२) सार यही नर जन्म लहे को हरि पद प्रीति निरन्तर। (।।)
(३) राधा राधा राधा राधा राधा राधा राधा। (सर्वगुरु)

प्रथम दो पदांतों में दो गुरु न रहने से लयमें कुछ न्यूनता है पर तीसरे पद के अंत में दो गुरु के कारण लय ठीक है। पदों की रचना इच्छानुकूल होने पर भी परस्पर तुकांत का ध्यान अवश्य रहे। हां, बेतुकी कविता का तो ढंग ही निराला है। मराठी भाषा की साकी भी इसी ढंग की होती है। यथा—

श्री रघुबंशी ब्रह्म प्रार्थिन लक्ष्मीपति अवतरला।
विश्व सहित ज्याच्या जनकत्वें, कौशल्या धवतरला॥

अन्य नाम ललितपद और दोवै

हरिगीतिका (१६-१२ अन्त में ।S)

शृंगार भूषण अंत लग जन, गाइये हरि गीतिका।
हरि शरण प्राणी जे भये कहु, है तिन्हें भव भीतिका॥
संसार भव निधि तरण को नहिं, और अवसर पाइये।
शुभ पाय मानुष जन्म दुर्लभ, राम सीता गाइये॥

शृंगार = १६ भूषण १२।

इसका रचनाक्रम यों है—२, ३, ४, ३, ४, ३, ४, ५=२८।

जहां २ चौकल हैं उनमें 'जन' जगण ।S। अति निषिद्ध है, अन्त में रगण SIS कर्णमधुर होना है। यथा—

ये दारिका परिचारिका करि, पालिबी करुणामयी।
अपराध छमियो बोलिपठये, बहुत हौं ढीठी कयी॥
पुनि भानु कुल भूषण सकल सन, मान विधि समधी किये।
कहि जात नहिं बिनती परस्पर, प्रेम परिपूरण हिये।

यह छंद फ़ारसी के इस बहर से मिलता है यथा—

मुस्तफ़अलन मुस्तफ़अलन मुस्तफ़अलन मुस्तफ़अलन वा मुतफ़ायलुन मुतफ़ायलुन मुतफ़ायलुन मुतफ़ायलुन ।

जिस पदके आदिमें गुरु हो वहां मुस्तफ़अलन और जिस पद के आदिमें दो लघुहों वहां मुतफ़ायलुन जानिये यथा —

अय चहरये जेबाय तो रश्के बुताने आजरी ।
हरचंद बरफ़त भी कुनम, दर हुस्न जां जेबातरी ॥
मनतू शुदम् तू मन शुदी मन तन शुदम् तू जांशुदी ।
ताकस न गोयद बादजीं, मनदीगरम् तू दीगरी ॥
ऐ माह अलम सोज़मन, अज़मन चिरा रंजीदई ।
वै शम्मे शब अफ़रोज़मन अज़मन चिरा रंजीदई ॥

विधाता (१४-१४)

लहौ विद्या लहौ रत्नै, लखौ रचना विधाताकी ।
सदा सद्भक्ति को धारे, शरण हो मुक्ति दाताकी ॥
वही सिरजै वही पालै वही संहार करता है ।
उसीको तुम भजौ प्यारे, वही सब दुःख हरता है ॥

यह छन्द उर्दू के इस बहर से मिलता है-मफ़ाईलुन मफ़ाईलुन मफ़ाईलुन मफ़ाईलुन यथा—

न छोड़ा साथ लछमन ने बिरादर हो तो ऐसा हो ।

इसकी पहली आठवीं और पन्द्रहवीं मात्रायें सदा लघु रहती हैं । इसे शुद्धगा भी कहते हैं । यही तर्ज़ गज़ल की भी होती है । गज़ल कई प्रकार की होती हैं उनके लिये देखिये मेरा रचित उर्दू ग्रन्थ गुलज़ारे सखुन ।

विद्या (१४-१४ आदि । अन्त में ।ऽऽ)

लहौ मीत सदा सतसंग, जग विद्या रत्न जु पायो ।
कहौ कौन काज नर देह, जब राम नाम नहिं गायो ॥
करो जन्म सुफल जग माहिं, करि दीनन को उपकारा ।
भनै भानु सदा शुभ छंद, गहि गुरुप्रद बारहिं बारा ॥
अहो क्याही है आनंद, लखि पिंगल ज्ञान प्रचारा ।
भजैं संत सदा नँदनंद, नित रचि रचि भजन अपारा ॥
हिये धारि जुगुल पद कंज, भन छंद अनेक प्रकारा ।
कहैं भानु प्रभू गुण गाय, उतरिय भवसागर पारा ॥

सू० – अन्त में ।ऽऽ रोचक होता है परंतु दो गुरु से अधिक गुरु आने में भी हानि नहीं ।

लहौ=आदि में लघु हो ।

महायौगिक (२६ मात्राओं के छन्द भेद ८३२०४०)

चुलियाला (१३-१६ जुला ।ऽ।।)

तेरह सोरह मत धरि, चुलियाला रच छंद जुलाचित।
हरि हरि भजु नित प्रेम सों, हों माया के फंद पराजित॥

कोई इसके दो और कोई चार पद मानते हैं, जो दो पद मानते हैं वे दोहे के अन्त में एक जगण और एक लघु रखते हैं ।ऽ।।, जो चार पद मानते हैं वे अन्त में एक यगण ।ऽऽ रखते हैं यथा—

पहिला – मेरी बिनती मानिके, हरि जू देखो नेक दयाकर।
नाहीं तुम्हरी जात है, दुख हरिबे की टेक सदाकर॥
दूसरा – हरि प्रभु माधव वीरवर, मनमोहन गोपति अविनासी।
कर मुरलीधर धीर नर, बरदायक काटत भव फांसी।
जन बिपदा हर राम प्रिय, मन भावन संतन घटवासी।
अब मम ओर निहारि दुख, दारिद हरि कीजे सुखरासी॥

सू०– किसी २ के मत में ५ मात्रा सोरठा के अंत में लगाने से भी यह छंद सिद्ध होता है।

मरहटा (१०–८–११अन्त ऽ।)

दिसि बसु शिव यति धरि, अन्त ग्वाल करि, रचिय मरहटा छंद।
भजु मन शिवशंकर, तू निसि वासर, तव लह अति आनन्द॥
निरखत मदनहिं जिन, कदन कियो छिन, रतिहिं दियो बरदान।
मिलिहै द्वापर में, शंबर घर में, प्रदुमन तुव पति आन॥

यति = विश्राम।

मरहटा माधवी (११-८-० अन्त ।ऽ)

शिव बसु दिसि जहँ कला, लगै अति भला, मरहटा माधवी।
अति कोमल चित सदा, सकल कामदा, चरित किय मानवी॥
दस अवतारहिं धरे, अभय सुर करे, धरम किय थापना।
अस प्रभुवर नित भजौ, कुमति सबै तजौ, रहे जम त्रास ना॥

धारा (१५+१४ अन्त ऽ)

तिथि सानंद भुवन गुर्वन्त, गंगाजी की शुभ धारा।
सुमिरणही तें हो आनन्द, मज्जन तें भवनिधि पारा॥
कोटि जन्म के पातक पुंज, होत छनकमें सब भंगा।
मनसा वाचा भजै जु नित्य, हर गंगा श्री हरगंगा॥

इसकी १५ मात्राओं का अन्त ऽ। से और १४ मात्राओं का अन्त ऽ से होता है।

महातैथिक (३० मात्राओं के छंद भेद १३४६२६६)

चवपैया (१०-८-१२ अन्त ऽ

दिसि वसु रवि मत्तन, धरि प्रति पद्दन, सग अंतहिं चवपैया ।
भे प्रगट कृपाला, दीन दयाला, हर्षित छबि लखि मैया ॥
लोचन अभिरामा, तनु घन श्यामा, निज आयुध भुज चारो ।
भूषण बन माला, नयन विशाला, शोभा सिंधु खरारी ॥

इसके अंत में एक सगण और एक गुरु अत्यंत कर्ण मधुर होता है, परन्तु प्रधान नियम तो अंत गुरु का है यों तो ६ गुरु तक आ सक्ते हैं यथा—

रामा रामा रामा ।

ताटंक (१६-१४ अन्त में मगण ऽऽऽ)

सोरह रत्न कला प्रतिपादहिं, ह्वै ताटंकै मो अंतै ।
तिहि को होत भलो जग संतत, सेवत हित सों जो संतै ॥
कृपा करैं ताही पर केशव, दीन दयाला कंसारी ।
देहीं परम धाम निज पावन, सकल पाप पुंजै जारी ॥

लावनी (लावणी) इसी के अंतर्गत है, लावनी के अंत में गुरु लघु का कोई विशेष नियम नहीं है यथा—

ब्रज ललना जसुदा सों कहतीं, अरज सुनो इक नँदरानी ।
लाल तुम्हारे पनघट रोकैं, नहीं भरन पावत पानी ॥
दान अनोखो हमसों मांगैं, करैं फजीहत मन मानी ।
भयो कठिन अब ब्रज को बसिबो, जतन करो कछु महरानी ॥१॥
हंडुलि सीस गिरि ठन ननन मोरी, तुचक पुचक कहुँ ढरकानी ।
चुरिया खनकीं खननननन मोरी, करक करक भुइँ बिखरानी ॥
पायजेब बज छननननन मोरी, टूक टूक सब छहरानी ।
बिछियां झनकैं झननननन मोरी, हेरतहूं नहिं दिखरानी ॥२॥
लालन बरजो ना कछु तरजो, करौ कछु ना निगरानी ।
जाय कहैंगी अब नंदबबा सौं, न्याय कछुक दैहैं छानी ॥
कहि सकुचानी दृग ललचानी, जसुदा मनकी पहिचानी ।
बड़ी सयानी अवसर जानी, बोली बानी नयसानी ॥३॥
भरमानी घर बर बिसरानी, फिरौ अरी क्यों इतरानी ।
अबै लाल मेरो बारो भोरो, तुम मदमाती बौरानी ॥
दीवानी सम पीछे डोलौ, लाज न कछु तुम उर आनी ।
जाव जाव घर जेठन के ढिग, उचित न अस कहिको बानी ॥४॥
उततें आये कुंवर कन्हाई, लखी मातु कछु घबरानी ।
कह्यो मातु ये झूठी सब मुहिं, पकर लेत बालक जानी ॥

माखन मुख बर जोरी मेलत, चूमि कपोलन गहि पानी।
नाच अनेकन मोहिं नचावैं, रंग तरंगन सरसानी ॥ ५ ॥
ए मैया मुँहि दै दै गुलचा, बड़ी करत री हैरानी।
कोउ कहे मोरि गैया दुहिदे, सांझ बेर अब नियरानी ॥
कोउ देवन सों बर बर मांगै, बार बार हिय लपटानी।
जस तस कर जो भागन चाहूं, दूजी आय गहत पानी ॥ ६ ॥
भागत हूं ना पाछों छांड़ैं, बड़ी हिठीली गुन मानी।
मुहिं पहिरावत लहँगा लुगरा, पहिरि चीर कोइ मरदानी ॥
थेइ थेइ थेइ मुहिं नाच नचावत, नित्य नेम मन महँ ठानी।
मनमोहन की मीठी मीठी, सुनत बात सब मुसकानी ॥ ७ ॥
सुनि सुनि बनियां नंदलाल की, प्रेम फंद सब उरझानी।
मन हर लीनों नट नागर प्रभु, भूल उरहनो पछतानी ॥
मानु लियो गर लाय लाल को, तपन हिये की सियरानी।
भानु निरखि तब बालकृष्ण छबि, गोपी गई घर हरषानी ॥ ८ ॥

इस छंद में कई गुरु वर्ण हैं जहां उनका उच्चार लघुवत् है वहां लघु मानो। जिन जिन पदों के अंत में दो गुरु हैं उनको कुकुभ छंद के पद जानों।

कुकुभ (१६-१४ अन्त में ऽऽ)

सोरह रत्न कला प्रति पादै, कुकुभा अंतै दे कर्णा।
पारवती तप कियो अपारा, खाय खाय सूखे पर्णा ॥
सूखेहू पर्णा तजि दीने, नाम अपर्णा तब भाखैं।
तिनके पद जो सेवत हित सों, उनकी पूजत अभिलाखैं ॥

रुचिरा (१४-१६ अन्त में ऽ)

मत्त धरौ मनु और कला, जन गंत सुधारि रचौ रुचिरा।
संत करैं उपकार सदा, जासों सत्कीर्ति रहै सुचिरा ॥
या जन में इक सार यही, नर जन्म लिये कर याहि फला।
राम लला भजु राम लला, भजु राम लला भजु राम लला ॥

कला=१६। इसके चौकलों में जगण का निषेध है। इसका एक रूपान्तर और है अर्थात् समकल के पीछे समकल वा समकलके पीछे दो विषमकल। यथा—

सीताराम भजो भाई, तेरी बिगड़ी हू बनि जाई।

शोकहर (८-८-८-६ अन्त में ऽ)

वसु गुन सजिये पुनि रस धरिये, अंत गुरु पद, शोकहरम्।
मैं बहु दीना, सब गुण हीना, पुनि पुनिबन्दौं, तव चरणम् ॥
शोक नसैये, मुहि अपनैये, अब न घिनैये, भय हरणा।
नमामि शंकर, नमामि शंकर, नमामि शंकर, तव शरणा ॥

अन्त मे १ से अधिक गुरु भी हो सकते हैं। इसके प्रत्येक चरणके दूसरे चौथे और छठे चौकल में जगण न पड़े। (अन्य नाम शुभंगी)

कर्ण (१३-१७ अन्त में SS)

कल तेरा सत्रा साजि, बखानैं कर्ण सरीखे दानी ।
नित प्रात सवा मन सोन, द्विजन कहँ देत महा सुखमानी ॥
जन लेत प्रभात जु नाम, करैं उपकार दया उर धारी ।
तिहि पुण्यहिं के परभाव, जगत में कीर्ति लहैं सो भारी ॥

इसका नाम कहीं सार्थ पाया भी जाता है इसके चौकलों में जगण ।ऽ। का निषेध है।

अश्वावतारी (३१ मात्राओं के छन्द भेद २१७८३०९)

वीर (१६-१५ अंत में नंद ऽ।)

बसु बसु तिथि सानंद सवैया, यारौ वीर पँवारो गाव ।
यहै कहावत आल्ह छंद है, सुनतै मन मां बाढ़े चाव ॥
सुमिरि भवानी जगदंबा का, श्री शारद के चरण मनाय ।
आदि सरस्वती तुमका ध्यावौं, माता कंठ बिराजो आय ॥

इसे मात्रिक सवैया भी कहते हैं।

लाक्षणिक (३२ मात्राओं के छंद भेद ३५२४५७८)

त्रिभंगी (१०-८-८-६ अन्त में ऽ)

दस बसु बसु संगी, जन रस रंगी छंद त्रिभंगी, गंत भलो ।
सब संत सुजाना, जाहि बखाना, सोइ पुराना, पंथ चलो ॥
मोहन बनवारी, गिरवर धारी, कुंजबिहारी पग परिये ।
सब घट घट बासी, मंगल रासी, रासबिलासी उर धरिये ॥ यथा—

सुर काज सँवारन, अधम उधारन, दैत्य बिदारन टेक धरे ।
प्रगटे गोकुल में, हरि छिन छिन में, नंद हियेमें, मोद भरे ॥
धिन ताक धिनाधिन, ताक धिनाधिन. ताक धिनाधिन. ताक धिना ।
नाचत जसुदा को, लखि मन छाको, तजत न ताको, एक छिना ॥१॥
परमत पदपावन, शोक नसावन, प्रगट भई तप, पुंज सही ।
देखत रघुनायक, जन सुखदायक, संमुख ह्वै कर, जोरि रही ॥
अति प्रेम अधीरा, पुलक शरीरा, मुख नहिं आवै, वचन कही ।
अतिशय बड़ भागी, चरणन लागी जुगल नयन जल धार बही ॥२॥

इसके किसी चौकल में 'जन' जगण न पड़े। पादाकुलक के अन्त में एक त्रिभंगी छंद रखकर कविजनों ने उसका नाम हुल्लास छन्द रखा है, यथा—

सोरह सोरह कल चरणन कै, ऐसे पादाकुलक बरनकै ।
आदि सु पादाकुलक बखानौ, तापर छंद त्रिभंगी ठानौ ॥
ठानो तिरभंगी, छंद सुअंगी, है बहु रंगी, मनहिं हरै।
चवसठि कला करि, सो आगे धरि, बसुचरणन कवि, तासु धरै॥
हुल्लास सुछन्दा, आनँद कंदा, जस बर चंदा, रूप रजै।
यों छन्द बखानै, सब मन मानै, जाके बरणत, सुकबि सजै ॥

सूचना कविजन अपनी उमंग में आकर एक छन्द के साथ दूसरे छन्द की भी योजना कर देते हैं। इसमें कोई हानि नहीं परन्तु ध्यान इस बात का रहे कि प्रत्येक छन्द पिंगल के नियमानुसार रहे।

शुद्धद्ध्वनि (१०-८-८-६ अन्त ऽ)

दस आठ सिद्धि रस, शुद्धद्ध्वनि जस, समरभुम्मि महँ खग्ग करै।
पद सुमिरि कालिका, शत्रु घालिका, कटक काटि के, मग्ग भरै॥
कटि परत रुंड जहँ, झुंड झुंड तहँ, मुंड मुंड कहँ, कौन गनै।
अस बीर अभ्युथन, कुद्धित ह्वै रन, सिंह तुल्य तहँ शत्रु हनै॥

अति बल उदग्ग नृप साह अग्ग जब, समर मग्ग चलि, खग्ग करे।
कह कवि चिंतामनि, विकट कटक तहँ, काटि काटिके धरनि भरे॥
रिपु हनत हत्थि तन बमन रुधिर जनु मेरु मेरु युत, झरनि झरे।
खसि परत शैल सों, अहि उदंड जिमि, खंडित सुन्डा, दंड परे॥

त्रिभंगी के विपरीत इसके चौकलों में जगण का प्रयोग होता है। इस छन्द में वीररस का वर्णन उपयुक्त है। यमक तो कर्णमधुर है ही परन्तु उसकी विशेष आवश्यकता नहीं।

पद्मावती (१०-८-१४ अन्त में ऽऽ)

दस बसु मनु मत्तन, धर विरती जन, दै पदमावति इक कर्णा।
अतुलित छबि भारी, श्री हरि प्यारी, वेद पुराणनहूं वर्णा॥
है शक्ति अनादी, मुनि सनकादी, महिमा नाहिं सकत गाये।
ताको नित गैये, सहजहिं लहिये, चारि पदारथ मन भाये॥

विरती = विश्राम

इसके किसी चौकल में जगण न पड़े (अन्य नाम—कमलावती)

सू०—जहां सब पदों के अन्त में यगण ।ऽऽ पड़ता जाय वह बाबा रामदासजी के मत से लीलावती नामक छंद है यथा—दूसरे पदके अन्त में 'वेद पुराणन हूं वर्णा' के बदले 'वेद पुराणन महँ वर्णा'। बाबा भिखारीदासजी लीलावती का लक्षण यों लिखते हैं—

द्वै कल दै फिर तीस कल, लीलावती अनेम।
दुगुन पद्धरिय के किये, जानौ वहै सप्रेम॥

एक महाशय १८+१४ अन्त गुरू का ही लीलावती छंद मानते हैं। बाबा रामदासजी का मत प्रौढ़ प्रतीत होता है।

समान सवैया (१६-१६ अंत में भगण ऽ।।)

सोरह सोरह मत्त धरौं जू, छंद समान सवैया सोभत।
श्रीरघुनाथ चरण नहिं सेवत, फिरत कहा तू इत उत जोहत॥
जब लगि शरणागत ना प्रभु की, तब लगि भव बाधा तुहि बाधत।
पाप पुंज हों छार छनक में, शुभ श्री राम नाम आराधत॥

(अन्य नाम-सवाई)

इसके पहले एक दोहा सिंहावलोकित रीति से रखकर कवियों ने विमलध्वनि नामक छंद माना है। यथा -

थर थर थहरत सकल ब्रज, कोप्यो इन्द्र प्रचंड।
घग्घग्घग्घहराय घन, रहे गगन बिच मंड॥
मंडज्जदि रण घोरग्घन गण, भब्भब्भरि रिस तत्तत्तड़कत।
सस्सस्सुन धुनि जज्जज्जकि जन, ढड्डड्डरि हिय धद्धद्धड़कत॥
दद्दामिनी चच्चमकत, बब्बब्बारिद वर्पज्झरझर।
थत्थत्थलचर खज्जज्जलचर चच्चहिच्चहि कम्पत थरथर॥

सू० - इसी छंदान्तर्गत पदपादाकुलक के दो चरणों का एक चरण मानकर एक उपभेद मत्तसवैया नामक और है यथा—

(मत्त सवैया)

कर भुवन कला कर भुवन कला, सज मत्त सवैया अलबेला।
सत्संगति करले साधुन की, जग चार दिनों का है मेला॥
यह मानुष देही दुर्लभ है, क्यों भूलि परा है संसारा।
सब ठाठ पड़ा रह जावेगा, जब लाद चलेगा बंजारा॥

दंडकला (१०-८-१४ अंत में सगण ।।ऽ)

दस वसु विधा पै, विरती थापै, अन्त सगण जन दंड कला।
रघुनन्दन ध्यावै, चित्र लगावै, एक पला नहिं आध पला॥
भावहि के भूखे, विषयनि रूखे, भक्तहिं तारत शीघ्र हरी।
शवरी के जूठे, बेर अनूठे, खात प्रशंसा बहुत करी॥

इसके किसी चौकल में जगण न हो। यथा—

फल फूलनि ल्यावै हरिहि सुनावै, है या लायक भोगनिकी।
अरु सब गुण पूरी, स्वादनि रूरी हरनि अनेकन रोगनि की॥

हँसि लेहिं कृपानिधि. लखि योगी विधि, निंदहिं अपने योगनकी।
नभ तें सुर चाहैं. भागु सराहैं, बारन दंडक लोगन की॥
हिंदी तर्ज (त य म) तागान यगाना मगाना। दो बार
उर्दू तर्ज · मफ़ऊल फ़ऊलुन् मफ़ऊलुन्। दो बार

दुर्मिल (१०-८-१४ सों गुरु द्वै ॥ऽऽऽ)

दस वसु मनु कल सों, गुरु द्वै पद सों, जन दुर्मिल सबहीं भायो।
जय जय रघुनन्दन, असुर निकंदन, को नहिं जस तुम्हरो गायो॥
शरणागत आयो, ताहि बचायो, राज बिभीषण को दीनों।
दशकंठ विदारो, धर्म सुधारो, काज सुरन जन को कीनो॥
'जन'—इसके किसी चौकल में जगण न पड़े।

कमंद (१५-१७ अन्त में ऽऽ)

मत्ता पंद्रा सत्रा साजि, कमंदा . छन्द सकर्णा कीजे।
रघुबर दशरथजी के लाल, चरणमें मित्र सदा चित्त दीजे॥
संतत ध्यावहु दीनदयाल, जनोंके जो नित मंगलकारी।
कोई नाहीं तिनके तुल्य, जगत में भक्तन के हितकारी॥

खरारी (८-६-८-१०)

द्वै चारहिं छै. आठ दसै मत्त सजावो, लै नाम खरारी।
नरजन्म लहे, वाही सों, प्रीति लगावो, जपजाहि पुरारी॥
सब पापन को, जारो भव सिंधु तरौरे, सिख मोरि गहौरे।
श्री राम भजो, राम भजो, राम भजौरे, श्रीराम भजौरे॥
द्वै चारहि=दो बार ४=८।

यह छन्द फारसी के इस बहर से मिलता है-मफ़ऊल मफ़ाईलुन मफ़ऊल फ़ऊलुन मफ़ऊल फ़ऊलुन यथा—

शाहां च अजब गर बनवाज़ंद गदारा, गाहे बनिगाहे।

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे भानुकवि कृते मात्रिक समछन्द वर्णनंनाम तृतीयो मयूखः॥ ३॥

अथ मात्रिक समांतर्गत दंडक प्रकरणम्।

बत्तिस कल तें अधिक पद, मत्ता दंडक जान।

विदित हो कि ३२ मात्राओं से अधिक मात्रा वाले छंद मात्रिकदण्डक कहाते हैं। इनको दण्डक अर्थात् दण्डकर्ता कहने का प्रयोजन यह है कि इनके कहने में मनुष्य को अधिक काल तक श्वास संभालना पड़ता है।

३७ मात्राओं के छन्द।

करखा।

कल सैंतीसै, वसु भानु वसु अंक यति,
यों रचहु छंद, करखा सुधारि।

टी०—८, १२, ८ और ९ के विश्राम से इसमें ३७ मात्रायें होती हैं। 'यो' अन्त में यगण होता है।

उ०—नमो नरसिंह, बलवन्त नरसिंह प्रभो, सन्त हितकाज, अवतार धारो।
खम्भते निकसि, भू हिरण्यकश्यप पटक, झटक दै नखन झट उर बिदारो॥
ब्रह्मरुद्रादि, सिरनाय जय जय कहत, भक्त प्रहलाद, निज गोद लीनो।
प्रीति सों चाटि, दै राज सुख साज सब, नरायनदास, वर अभय दीनो॥

हंसाल।

बीसे सत्रह यति धरि निःसंक रचौं,
सबै यह छंद हंसाल भायो।

टी०—२० और १७ मात्राओं के विश्राम से ३७ मात्रायें होती हैं। अंतमें यों यगण होता है।

उ०—तोसो ही चतुर सुजान परवीन अति, परे जिन पींजरे मोह कूआ।
पाय उत्तम जनम जायके चपल मन, गाय गोविंद गुन जीत जूआ॥
आपही आप अज्ञान नलिनी बँधो, बिना प्रभु भजे इक बार मूआ।
दास सुन्दर कहै परम पद ते लहै, राम हरि राम हरि बोल सूआ॥

द्वितीय झूलना।

सैंतिस यगंत यति, दोष दस दोप मुनि,
जानि रचिये द्वितिय झूलना को॥

टी०—१०, १०, १० और ७ के विश्राम से ३७ मात्रायें होती हैं। अन्त में यगण होता है।

उ०–जैति हिम बालिका, असुरकुल घालिका, कालिका मालिका, सुरन हेतू।
छमुख हेरम्बकी, अम्ब जगदम्बिके, प्राणप्रिय बल्लभा, वृषभ केतू।
सिद्धि औ ऋद्धि सुख, खान धन धान्य की, दानि सुभगांगना, सुत निकेतू।
भक्ति मुक्ति प्रदे, वाणि महारानी, प्रणत ईश्वरी कहँ, शरणदे तू॥

सू०–मुक्तिप्रदे, को यों पढ़ो 'मुक्तिप्प्रदे"। किसी किसी कवि ने इसके दो ही पद मानकर तीसरा भेद मान लिया है। यथा—

तीन दस भूलना अंत मुनि भूल ना दोय पद तीसरो भेद भायो।
राम भजु बावरे राम भजु बावरे राम के नाम को बेद गायो॥

४० मात्राओं के छन्द।

मदनहर।

दस बसु मनु यामा, गंत ललामा, आदि लला दै,
मंजु गहौ पद मदन हरै।

टी०– १०, ८, १४, ८ के विश्राम से ४० मात्राएं होती हैं। 'आदि लला' आदि में दो लघु होते हैं। 'गन्त' अंत में १ गुरु होता है।

उ०–सखि लखि यदुराई छबि अधिकाई भाग भलाई जान परै, फल सुकृति करै।
अति कांति सदन मुख होतहिं सन्मुख दास हिये सुख भूरि भरै दुखदूरि करै॥
छबि मोर पखन की पीत बसनकी, चारु-भुजनकी चित्त अरै, सुधि बुधि बिसरै।
नवनील कलेवर, सजल भुवनधर, वर इन्दीवर छवि निदरै, मद मदन हरै॥

सू०–कहीं २ इस छंद में ३२ और ८ परभी यति कही गई है परंतु वह अशुद्ध है। इसका नाम मदनगृह भी।

उद्धत।

दस दस दस दस कल, पुनि अंत धरौ गल,
मन राखि अचंचल, साज उद्धत छंद,

टी०–१०, १०, १० और १० के विश्राम से ४० मात्राएं होती है। 'गल' अंत में गुरु लघु होते हैं।

उ०-प्रभु पूरन रघुबर, सुन्दर हरि नरवर, विभु परम धुरंधर, रामजू सुखसार।
मम आशय पूरन बहुदानव मारन, जन दीनन तारन, कृष्णजू हर भार॥
बहु दैत्य निकंदन, जन मन चख अंजन कलिमल सब गंजन संत मन आधार।
रवि बंसहिं मंडन दुख दारुन खंडन, अग जग नित बंदन, वेगि दीजिय तार॥

शुभग।

दुइ नख धरहु मत्त, कह पिंगल जु सत्त,
यति दोष गुन तत्त, शुभगै रचौ मित्त।

टी०—दुइनख (२०) अर्थात् ४० मात्रा दस दस के विश्राम से होती हैं मित्तका 'त' सार्थक है। अन्त में तगण होता है।

उ०-जब चलत दशरत्थ, सुत राम समरत्थ बलजुत्थ सिलहत्थ, मदमत्त गर्जन्त।
वरसुंड फुंकार, धौंसाहि धुंकार, सुनि धनुष टंकार, हुंकार सामन्त॥
रथ चक्र घहरानि, धराधर हहरानि वर वाजि पदरेणु. उठि सूर ढापन्त।
सटपटत लंकेश अटपटत दिग्गजरु, चटपटत चपि शेष फणिकमठ कापन्त॥

विजया।

दिसन चहुं छा रही, फिरति विजया मही,
दनुज कुल घालही, जननकुल पालही।

टी०—दस दस मात्राओं के चार समूह का विजया छन्द होता है अन्त में रगण रखने से कर्णमधुर होता है। यथा छन्दोऽर्णवे—

उ०—सित कमल बंशसी, शीतकर अंशसी, विमल विधि हंससी हीरवर हारसी।
सत्य गुण सत्वसी, सांतरस तत्वसी, ज्ञान गौरत्वसी, सिद्धि विस्तारसी॥
कुन्दसी काससी, भारतीश्वाससी. सुरतरुनिहारसी, सुधारस सारसी।
गंगजल धारसी, रजत के तारसी, कीर्ति तव विजय की, शंभु आगारसी॥

सू०—ध्यान रहे कि इसके चारों पद में वर्ण संख्या समान न रहे। यदि समान हो तो यह वर्ण दंडकों के भेदों में से एक भेद हो जायगा।

४६ मात्राओं के छंद।

हरिप्रिया।

सूरज गुन दिसि सजाय, अन्तै गुरु चरण ध्याय,
चित्त दै हरि प्रियाहिं, कृष्ण कृष्ण गावौ।

टी० सूरज १२ गुण तीन बार अर्थात् १२, १२, १२ और दिसि १० मात्राओं के विश्राम से ४६ मात्राओं का हरिप्रिया छन्द होता है। इसके पदान्त में गुरु होता है। हरिप्रियाकी 'रि' को गुरुवत् पढ़ो यथा-हरिप्प्रिया—

उ०-सोहने कृपानिधान, देव देव रामचन्द्र, भूमि पुत्रिका समेत, देव चित्त मोहै।
मानो सुरतरुसमेत कल्पबेलि छविनिकेत, शोभाशृंगार किधौं, रूप धरे सोहै॥
लछमीपति लछमीयुत, देवी युत ईश किधौं, छायायुत परमेश, चारुवेश राखैं।
बन्दौं जगमात तात चरणयुगलनीरजात, जाकोसुर सिद्धविद्य मुनिजन अभिलाखैं॥

सू०- भिखारीदासजी ने इसका नाम चंचरी लिखा है।

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे भानु कविकृते मात्रिक समांतर्गत दंडक वर्णनंनाम चतुर्थो मयूखः॥ ४॥

अथ मात्रिकार्द्धसम प्रकरणम्।

विषम विषम सम सम चरण, तुल्य अर्द्धसम छन्द।

जिस मात्रिक छन्द के पहिले और तीसरे अर्थात् विषम चरणों के और दूसरे और चौथे अर्थात् सम चरणों के लक्षण मिलते हों उसे मात्रिक अर्द्धसम कहते हैं।

मात्रिक अर्द्धसम छन्दों की संख्या जानने की यह रीति है कि विषम अर्थात् प्रथम चरणके मात्राओंकी छन्द संख्या को द्वितीय अर्थात् सम चरण के मात्राओं की छन्द संख्या से गुणा करे जो गुणनफल आवे उसी को उत्तर जानो। यथा—

मात्रिक-अर्द्धसम छन्द प्रस्तार संख्या।

	पहिला चरण (विषम)	दूसरा चरण (सम)	तीसरा चरण (विषम)	चौथा चरण (सम	रीति और भेद	व्याख्या
मात्रा	४	५	४	५		इन ४० भेदों में से जिस किसी भेदसे छंद का प्रारम्भ हो सो मुख्य भेद है शेष उपभेद हैं अर्थात प्रत्येक मुख्य भेद के लिये ३९ उप-भेद विद्यमान हैं।
छंद संख्या	५	८	५	८	५×८=४०	
		रूपांतर				
मात्रा	५	४	५	४		
छंद संख्या	८	५	८	५	८×५=४०	
मात्रा	६	७	६	७		इन २७२ भेदोंमें से जिस किसी भेदसे छंद का प्रारंभ हो सो मुख्य भेद है शेष उपभेद है। अर्थात् प्रत्येक मुख्य भेद के लिये २७२ उप-भेद विद्यमान है ऐसे ही और भी जानो।
छंद संख्या	१३	२१	१३	२१	१३×२१=२७३	
		रूपांतर				
मात्रा	७	६	७	६		
छंद संख्या	२१	१३	२१	१३	२१×१३=२७३	

ये प्रस्तार संख्यम केवल कौतुकरूप हैं इससे विशेष लाभ नहीं। विद्यार्थियों को केवल सिद्धांत जानना ही बस है।

प्रश्न—बतावो जिस मात्रिकार्द्धसम छंद के विषम चरणों में ३ मात्राएं और सम चरणों में ४ मात्राएं हों उसके कितने भेद होंगे? क्रिया सहित सब रूप लिखो।

उत्तर—३ मात्राओं के ३ भेद और ४ मात्राओंके ५ भेद होतेहैं इसलिये ३×५=१५ भेद हुए जिनके रूप प्रस्तार क्रमासार नीचे लिखे हैं—

	पहिला चरण (विषम)	दूसरा चरण (सम)	तीसरा चरण (विषम)	चौथा चरण (सम)
१	।ऽ	ऽऽ	।ऽ	ऽऽ
२	।ऽ	।।ऽ	।ऽ	।।ऽ
३	।ऽ	।ऽ।	।ऽ	।ऽ।
४	।ऽ	ऽ।।	।ऽ	ऽ।।
५	।ऽ	।।।।	।ऽ	।।।।
६	ऽ।	ऽऽ	ऽ।	ऽऽ
७	ऽ।	।।ऽ	ऽ।	।।ऽ
८	ऽ।	।ऽ।	ऽ।	।ऽ।
९	ऽ।	ऽ।।	ऽ।	ऽ।।
१०	ऽ।	।।।।	ऽ।	।।।।
११	।।।	ऽऽ	।।।	ऽऽ
१२	।।।	।।ऽ	।।।	ऽ।।
१३	।।।	।ऽ।	।।।	।ऽ।
१४	।।।	ऽ।।	।।।	ऽ।।
१५	।।।	।।।।	।।।	।।।।

प्रश्न बताओ जिस मात्रिकार्द्धसम छंद के विषम चरणों में तीन मात्राएं और सम चरणों में भी ३ मात्राएं हों उसके कितने भेद होंगे।

उत्तर—ऐसा छन्द मात्रिकार्द्धसम छन्द हो ही नहीं सक्ता वह तो मात्रिक सम छन्द होगा जिसके केवल ३ भेद हो सकते हैं।

प्रश्न— ऽ। ।।ऽ ऽ। ।।ऽ
राम भजिये काम तजिये
यह छन्द मात्रिकार्द्धसम छन्द हुआ या नहीं?

उत्तर—नहीं, क्योंकि इसमें विषम और सम चरणों का वर्णक्रम एकसा है यह तो वर्णिकार्धसम वृत्त हुआ। मात्रिकार्द्धसम छन्द के विषम या सम चरणों में वर्णक्रम एकसा नहीं रहता इसीलिये तो एक भेद के

साथ दूसरे भेद की आवश्यकता रहती है यही छन्द इस प्रकार लिखा जाय तो मात्रिकार्द्ध सम छन्द होगा।

।।। ।।ऽ ऽ। ।।ऽ
प्रभुहिं भजिये काम तजिये

अब इसके आगे छन्दों का वर्णन किया जाता है—

चारों पद मिलकर ३८ मात्राओं के छंद।

बरवै।

ल०—विषमनि रविकल बरवै, सम मुनि साज।

टी०—विषम अर्थात् पहिले और तीसरे पदों में (रवि) १२ मात्राएं होती हैं। और सम अर्थात् दूसरे और चौथे पदों में (मुनि) ७ मात्राएं होती हैं। अन्त में जगण रोचक होता है परंतु तगणका प्रयोग भी देखा जाता है। यह बरवै छंद है।

उ०—बाम अंग शिव शोभित शिवा उदार।
सरद सुवारिद में जनु. तड़ित बिहार॥

अथवा

कवि समाज को बिरवा, चले लगाइ।
सींचन को सुधि लीजो मुरझि न जाय॥

सू०—इसे ध्रुव और कुरंग भी कहते हैं।

मोहिनी।

ल०—सुफल मोहनी बारा, सम मुनि लसै।

टी०—मोहनी छंद के विषम पद में १२ और सम पद में ७ मात्राएं होती हैं। अन्त में सगण होता है।

उ०—शंभु भक्तजन त्राता, भव दुख हरैं।
मन वांछित फलदाता, मुनि हिय धरैं॥

चारों पद मिलकर ४२ मात्राओं के छंद।

अतिबरवै।

ल०—विषमनि रवि अति बरवै, सम कलनिधि साज।

टी०—इस छन्द के विषम पद में १२ और सम पद में ९ मात्राएं होती हैं।

उ०—कवि समाज को बिरवा, भल चले लगाय।
सींचन की सुधि लीजो, कहुं मुरझि न जाय॥

चारों पद मिलकर ४८ मात्राओं के छंद।

दोहा।

ल०-जान विषम तेरा कला, सम शिव दोहा मूल।

टी०—विषम चरणों में १३ और सम चरणों में (शिव ११ मात्राएं होती हैं। 'जान विषम' पहिले और तीसरे अर्थात् विषम चरणों के आदि में जगण नहीं होना चाहिये। अन्त में लघु होता है।

उ० श्रीरघुबर राजिव नयन, रमारमण भगवान।
धनुष बाण धारण किये, बसहु सु मम उर आन॥

सू०—जो छन्द दो पंक्तियो में लिखे जाते हैं जैसे-दोहा सोरठा इत्यादि उनकी प्रत्येक पंक्ति को दल कहते हैं। दोहे की रचना के लिये इस दोहे को याद रखना चाहिये।

जान विषम राखैं सरन, अन्त सु सम हूँ 'जात'।
संकट तेरो शिव हरैं, सुनि. दोहा अवदात॥

टी० - जो महादेव ऐसे दयालु हैं कि हम संसारी जीवों को अल्पज्ञ अल्पसामर्थ्य अल्पमति जानकर अपनी शरण में रख लेते हैं और शरण में रख लेने का यह प्रभाव है कि विषम दशा नष्ट होकर समता अर्थात् सुगति प्राप्त होती है ऐसे महादेव इस सुन्दर दोहे को श्रवणकर तेरे सर्व्व संकट हरण कर लें। पिंगलार्थ—विषम चरण के आदि में जगण न होकर १३ मात्रा रहें और अंत में 'सरन' सगण (।।S) वा रगण (S।S) अथवा नगण (।।।) हो और सम चरण में ११ मात्रा इस प्रकार हो कि उनके अन्त में 'जात' जगण (।S।) अथवा तगण (SS।) हो परन्तु दोनों (विषम और सम चरणों) में विषम और सम मात्राओं के प्रयोग का ध्यान रक्खो जो नीचे लिखा जाता है।

दोहे के त्रयोदशकलात्मक विषम चरणों की बनावट दो प्रकार की होती है यथा:

(१) जिस दोहे के आदि में (।S) वा (S।) अथवा (।।।) हों उसे विषम-कलात्मक दोहा जानो। इसकी बनावट ऐसी ३+३+२+३+२ होती है अर्थात् त्रिकल के पश्चात् त्रिकल फिर द्विकल फिर त्रिकल और फिर द्विकल होता है चौथा समूह जो त्रिकल का है उसमें (। S) रूप नहीं पड़ना चाहिये. यथा 'राम राम गाव भाई'' किन्तु राम राम गावहु सदा' वा 'राम राम गावो सदा' ऐसा चाहिये।

(२) जिस दोहे के आदि में (।।S) या (SS) अथवा (।।।।) हो तो उसे सम-कलात्मक दोहा जानो। इसकी बनावट ४+४+३+२ होती है अर्थात् चौकलके पीछे चौकल, फिर त्रिकल और द्विकल हों परन्तु त्रिकल इस (।S) रूपसे न आवे जैसे 'सीता सीता पती को' किन्तु. ऐसा चाहिये 'सीता सीता नाथ को'।

दोहे के एकादशकलात्मक सम चरणों की बनावट भी दो ही प्रकार की होती है:—[१] ४+४+३ यथा–'राखो मेरी लाज'। अन्त का त्रिकल इस रूप से [ऽ।] आवे। [२] ३+३+२+३ यथा–'वेद न पावहिं पार' अन्त का त्रिकल इस रूप से [ऽ।] आवे। कभी कभी भगण के पीछे जगण आता है ऐसी अवस्था में गुरु लघु आदि में रहने पर भी वह दोहा समकलात्मक माना जाता है। यथा 'सोचिय यती प्रपंचरत'।

[३] इन नियमों से यह प्रतिपादित हुआ कि दोहे के आदि में सम के पीछे सम और विषम के पीछे त्रिषम कलका प्रयोग होता है इसका नाम इसी कारण दोहा है कि यह दुहरा दुहरा चलता है और इसमें दोही दल होते हैं। विषम चरणों के अन्त में सगण, रगण अथवा नगण पड़े और सम चरणों के अन्त में जगण अथवा तगण पड़े अर्थात् गुरु लघु अवश्य हों [ऽ।]

[४] विषम चरण के आदि में जगण न हो। यदि देव काव्य है, अथवा देव वा मंगलवाची शब्द है तो दोष नहीं। दोष केवल नर काव्य में माना जाता है देवकाव्य के विषय में कहा भी है यह; प्रयोजन गण अगण और द्विगण को काहि। एकै गुण रघुबीर गुण त्रिगुण जपत हैं जाहि'।

[५] भूषण चन्द्रिका में दोहे की चाल के सम्बन्ध में यह दोहा लिखा है—

षट कल द्वैकल द्विकल पुनि, इक लघु द्वैकल जोय।
सम पद षट कल द्विकल गुरु, इक लघु दोहा होय॥

यदि यह ठीक माना जाय तो "सीतापती न भूलिये" में यह लक्षण घटित नहीं होता, अतएव यह नियम अपूर्ण है। इसकी अपूर्णता देखकर दूसरे कवि ने यों लिखा है—

आठ तीन द्वै प्रथम पद, दूजे पद बसु ताल।
बसु में त्रय पर दो न गुरु, यह दोहा की चाल॥

यदि यही ठीक माना जाय तो "मुरारि मुरारि गावहीं" अथवा "गोविंद नाम जाहि में" इन पदों में भी तो ८+३+२ का क्रम मिलता है फिर लय क्यों बिगड़ी है? अतएव यह नियम भी पूर्ण नहीं है।

इन्हीं कठिनाइयों को पहिले से ही विचार कर पूर्व्व आचार्यों ने रचना प्रणाली (षट कल व आठ तीन द्वै इत्यादि) को मुख्य न समझ केवल लय को ही प्रधानता दी है। मुख्य विचार तो जगण, सम वा विषमकल का है जो ऊपर लिख आये हैं। नीचे दो पद विचारणीय है:—

ऽ ऽ । ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ ।
अरोचक गोविंद नाम जाहिमें संगीत भलो जान। ८+३+२+८+३
ऽ ऽ । ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ ।
रोचक–सीतापती न भूलिये जौलौं घटमें प्रान॥ ८+३+२+८+३

उक्त उभय पदों में गुरु, लघु का क्रम एकसा होने पर भी प्रथम क्यों अरोचक है और दूसरा क्यों रोचक है? कारण उसका यह है कि पहिले में पद योजना ठीक नहीं है आदि में 'गोविंद' शब्द विषम और पंचकलात्मक है। इसके आगे एक लघु विभक्ति की अपेक्षा है। 'संगीत' शब्द भी वैसाही है। यदि ये ही पद ऐसे होते तो रोचक हो जाते:—

गोविंदहिं को नाम जहँ, सोइ भलो संगीत।

इन सब दोषों का परिहार सम्यक् पद योजना से हो जाता है। विदित हो कि विभक्ति सहित शब्द को पद कहते हैं जैसे 'राम यह केवल शब्द है और 'रामहिं' यह पद है। दोहे की लय इतनी सरल है कि रामायणादि सद्ग्रन्थोंके पठन पाठन से सहज ही सिद्ध होकर ये कठिनाइयां आपही आप दूर हो जाती है। आगे के दोहे में जगण के निषेध का वर्णन है—

दोहा (चंडालिनी)

ल०—जहां विषम चरणनि परै, कहूं जगन* जो आन।
बखान ना चण्डालिनी, दोहा दुख की खानि॥

टी०—गणागणका विचार प्रधानतः छन्द के आदि में ही देखा जाता है अतएव दोहे के पहले और तीसरे चरण के आदि में कोई ऐसे शब्दका प्रयोग न करे कि जिसके तीनों वर्ण मिलकर जगणका रूप (ISI) सिद्ध हो जाय। यदि ऐसा हो तो ऐसे दोहे को चन्डालिनी कहते हैं। यह दूषित है अतएव त्याज्य है। जगण से अभिप्राय यह है कि प्रथम तीन वर्णोंमें (लघु गुरु लघु) मिलकर एक शब्द पूर्ण हो (अर्थात् जगण पूरित शब्द जैसे तीसरे चरण में 'बखान' लिखा है) यदि प्रथम के तीन वर्ण मिलकर जगण तो सिद्ध होता हो परंतु शब्द प्रथम और दूसरे अथवा दूसरे और तीसरे वर्ण के मिलनेसे ही पूर्ण होता हो तो ऐसा शब्द दूषित नहीं हैं। जैसे प्रथम चरणमें 'जहां वि' इन तीन वर्णोंके मेल से जगण तो सिद्ध होता है पर शब्द दो वर्णों में ही पूर्ण होगया। यथा—'जहां' तो यह अदूषित है। परंतु जहां तक हो सके वहां तक ऐसे प्रयोगों का भी बचाव अत्युत्तम है। जगण पूरित शब्द के प्रयोग से दोहे की साहजिक लय में न्यूनता आ जाती है अतएव दोष माना जाता है। परन्तु देव अथवा मंगलवाची शब्दों में इसका दोष नहीं है। आदि में दो जगण का प्रयोग अत्यन्त दूषित है। नीचे कुछ उदाहरण दिये जाते हैं—

---

*भाषा में बहुधा 'ण' के स्थान में 'न' का भी प्रयोग देखा जाता है। जैसे-'जगन जो आन' इसके अन्त के चार वर्ण 'न जो आन' सार्थक हैं। 'न जो' अर्थात् नगण जगण 'आन' अर्थात् अन्य (Exception) अर्थात् नगण के पीछे यदि जगणपूरित शब्द आवे तो दोष नहीं परन्तु जगण के पीछे एक लघु अवश्य हो जैसे-'भजत गुपालहिं प्रेम सों'।

(१) 'महान महान पापतें' दो जगण महादूषित हैं क्योंकि प्रथम जो नियम दोहे के लिख आये हैं उनके अनुसार इसमें त्रिकल के पश्चात् त्रिकल नहीं आये।

(२) 'सुधारि भारत की दशा' 'सुधारि' शब्द जगणपूरित है अतएव लय में कुछ न्यूनता आगई है।

(३) 'भले भलाई पै लहहिं' आदि में जगण है परन्तु शब्द प्रथम और दूसरे वर्ण के मेल से ही पूर्ण हो गया, अतः दोष नहीं है।

विषम चरण में जगण अन्यत्र आने से भी दोष होता है जैसे 'मांगत इनाम दीन ह्वै' 'इनाम' जगणपूरित शब्द है अतः लय बिगड़ीसी जान पड़ती है। इसी प्रकार और भी जानो।

सू०—दोहे के अनेक भेद होते हैं पर यहां उनमें से मुख्य जो २३ हैं वे ही दिये जाते हैं:—

(छप्पय)

भ्रमर १ सुभ्रामर २ शरभ ३ श्येन ४ मंडूक ५ बखानहु।
मर्कट ६ करभ ७ सु और नरहिं ८ हंसहिं ९ परिमानहु॥
गनहु गयंद १० सु और पयोधर ११ बल १२ अवरेषहु।
वानर १३ त्रिकल १४ प्रतच्छकच्छपहु १५ मच्छ १६ विशेषहु॥
शार्दूल १७ सुअहिवर १८ व्याल १९ जुतवर बिडाल २० अरुस्वान २१ गनि
उदाम उदर २२ अरु सर्प २३ शुभ तेइस विधि दोहा बरनि॥

१ भ्रमर (२२ ग + ४ ल)

सीता सीतानाथ को, गावौ आठौ जाम।
सर्व्वेच्छा पूरी करैं, औ देवैं विश्राम॥

२ सुभ्रामर (२१ ग + ६ ल)

माधो मेरे ही बसो, राखो मेरी लाज।
कामी क्रोधी लंपटी, जानि न छांड़ो काज॥

३ शरभ (२० ग + ८ ल)

हर से दानी कहुं नहीं, दीन्हें केते दान।
कैसे को भाषै तिन्हें, बानी एकै जान॥

४ श्येन (१९ ग + १० ल)

श्रीराधा श्रीनाथ प्रभु, तुमहीं सों है काज।
सेवौं तो पदकंज को, राखो मेरी लाज॥

मंडूक (१८ ग + १२ ल)

मेरी ओरै देखिये, करिकै दाया साज।
कामी मनमें हौं महा, सब विधि राखौ लाज॥

६ मर्कट (१७ ग + १४ ल)

ब्रज में गोपन संग में राधा देखे श्याम।
भूली सुधि बुध प्रेम सों, मोही मानहु काम॥

करभ (१६ ग+१६ ल)

भये पशू तारे पशू, सुनी पशुन की बात।
मेरी पशु मति देखि कै, काहे मोहि घिनात॥

अथवा

और दीन कै दारिदै, कैसे हरौ मुरारि।
दै सर्वस द्विज दीन लखि, दियो सुदामा टारि॥

८ नर (१५ ग+१८ ल)

विश्वंभर नामै नहीं, महीं विश्व में नाहिं।
दुइ महँ झूठी कौन है, यह शंसय जिय माहिं॥
लघुता तें प्रभुता मिलै, प्रभुता तें प्रभु दूर।
चींटी शक्कर खात हैं, कुंजर के मुख धूर॥

९ हंस (१४ ग+२० ल)

मोसों औरौ है नहीं, अघ की खानि मुरारि।
चरण शरण प्रभु दीजिये, यह भौनिधि तें तारि॥

१० गयन्द वा मदुकल (१३ ग+२२ ल)

राम नाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरहु जो चाहसि उजियार॥

११ पयोधर (१२ ग+२४ ल)

यथा सु अंजन आंजि दृग, साधक सिद्ध सुजान।
कौतुक देखहिं शैल बन, भूतल भूरि निधान॥

१२ चल वा बल (११ ग+२६ ल)

जन्म सिंधु पुनि बंधु विष, दिन मलीन सकलंक।
सिय मुख समता पाव किमि चन्द्र बापुरो रंक॥

१३ बानर (१० ग+२८ ल)

जड़ चेतन गुण दोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुण गहहिं पै, परिहरि वारि विकार॥

१४ त्रिकल (९ ग+३० ल)

अति अपार जे सरित बर, जो नृप सेतु कराहिं।
चढ़ि पिपीलिका परम लघु, बिन श्रम पारहिं जाहिं॥

१५ कच्छप (८ ग+३२ ल)

एक छत्र इक मुकुट मणि, सब बरनन पर जोय।
तुलसी रघुबर नाम के, बरण विराजत दोय॥

१६ मच्छ (७ ग+३४ ल)

सरल कवित कीरति विमल, सोइ आदरहिं सुजान।
सहज बैर बिसराय रिपु, जो सुनि करहिं बखान॥

शार्दूल (६ ग+३६ ल)

बंदौं पद धरि धरणि शिर विनय करहुं करजोरि।
बरणहु रघुबर विशद यश, श्रुति सिधांत निचोरि॥

१८ अहिवर (५ ग + ३८ ल)

कनक बरण तन मृदुल अति कुसुम सरिस दरसात।
लखि हरि दृग रस छकि रहे, बिसराई सब बात॥

१६ व्याल (४ ग + ४० ल)

हम सन अधम न जग अहै, तुम सन प्रभु नहि धीर।
चरन सरन इहि उर गह्यो, हरहु सु हरि भव पीर॥

२० बिडाल (३ ग + ४२ ल)

बिरद सुमिरि सुधि करत नित, हरि तुव चरन निहार।
यह भव जलनिधि तें तुरत, कब प्रभु करिहहु पार॥

२१ श्वान (२ ग + ४४ ल)

तुव गुन अहिपति रटत नित, लहि न सकत तुव अंत।
जग जन तुव पद सरन गहि, किमि गुनि सकहिं अनंत॥

२२ उदर (१ ग + ४६ ल)

कलुपहरण भवभयहरण सदा सुजन सुख अयन।
मम हित हरि सुरपुर तजत, धनि धनि सरसिज नयन॥

२३ सर्प (४८ लघु)

अरुण चरण कलिमल हरण, भजतहिं रह कछु भयन।
जिनहिं नवत सुर मुनि सकल, किन भज पयनिधिसयन॥

सू०-२२वें और २३ वें भेद केवल प्राचीन परिपाठी की मर्यादा के आदर से उदाहरणार्थ लिखे हैं। ऐसे दोहे बहुत कम पाये जाते हैं इनके बनाने में मेरी सम्मति नहीं है। अन्त के शब्द अयन, नयन, भयन. सयन ऐसे पढ़े जाते हैं जैसे– ऐन, नैन, भैन और सैन। यदि ऐसे ही लिखे भी जावें तो दोहे के लिये अनुचित नहीं है।

तुलसीकृत रामायण में कहीं कहीं विषम चरण १२ मात्राओं के ही पाये जाते हैं। जैसे "तात चरण गहि मांगौं" परन्तु यह दोष पाठान्तर का है गुसाईं तुलसीदासजी का नहीं। किसी २ कवि ने ऐसे दोहों को भी प्रमाणिक मानकर उनका नाम दोहरा रक्खा है। परन्तु यह शास्त्र नियम के विरुद्ध है, यह दोहा प्रसिद्धही है।– सतसैया को दोहरा, ज्यों नाविक को तीर। देखत को छोटो लगै अर्थ बड़ो गंभीर॥' यहां दोहरा शब्द से दोहे का ही प्रयोजन है इसी प्रकार दोहे के अन्त के लघु का लोप करके किसी २ ने २३ मात्राओं का विदोहा नामक छन्द माना है।

सोरठा।

ल०-सम तेरा विषमेश,, दोहा उलटे सोरठा।

टी०-सम अर्थात् दूसरे और चौथे चरणों में १३ और विषम अर्थात् पहिले और तीसरे चरणों में ईश=महादेव अर्थात् ११ मात्राएं होती हैं। दोहे का उलटा सोरठा है। दोहे के अनुसार सोरठे के भी २३ भेद हो सक्ते हैं।

उ०—जिहि सुमिरत सिधि होय गणनायक करिवर बदन।
करहु अनुग्रह सोय बुद्धि रासि शुभ गुण सदन॥

सू०-इसके सम चरणों में जगण का निषेध है। रोला के और सोरठा के विषम पद एक से होते हैं। सोरठा सम पद के (अर्थात् दोहे के विषम पद के) आदि में त्रिकल के पश्चात् दो गुरु नहीं आते परन्तु रोला के समपद के आदि में त्रिकल के पश्चात् दो गुरु आ सक्ते हैं। दोनों के समपदों की रचना यों होती है, सोरठा सम पद ३+३+२+३+२ वा ४+४+३+२, रोला सम पद ३+२+४+४ वा ३+२+३+३+२। 'जिहि सुमिरत" यह सोरठा रामायण के आदि में है। इसी का उलटा दोहा होता है। दोहे के जो भेद कहे हैं, उनमें यह ६ गुरु और ३६ लघु वाला शार्दूल नामक दोहा है। इसमें श्री गुसांई तुलसीदासजी ने गणों के नायक प्रति प्रार्थना की है। इस मोरठे के लिखने से यह अभिप्राय है कि इस ग्रन्थ में रघुकुल शार्दूल श्रीरामचन्द्रजी का परम पावन चरित्र कथित किया गया है। सूक्ष्म दृष्टि से देखिये तो इसमें म, न, भ, य, ज, र, स, और त आठों गणों के बोधक वर्ण विद्यमान हैं। गुसांईजी की विलक्षण बुद्धि को धन्य है। आपने रामायण में आद्योपांत पिंगल का निर्व्वाह जैसा सांगोपांग किया है वैसा कदाचित् ही दूसरोंसे बन पड़ा हो॥ ग्रन्थारम्भ में "वर्णानाम्" * संस्कृत श्लोक में पहिले मगण का प्रयोग किया। ग्रन्थ के आदि में व कार वर्ण संस्कृत कोषानुसार महाकल्याणवाची है और जब भाषा का प्रारम्भ किया तब 'जिहि सु' मगण का प्रयोग किया। ये दोनों गण "म न" स्वामि-सेवक भाव से महामंगल के कर्त्ता हैं। तभी तो उनका अनुपम ग्रन्थ इतना समादृत होकर घर घर विराजमान और पूज्य है। (गुसांईजी का पिंगल विषयक विशेष चमत्कार मेरी निर्मित 'नवपंचामृत रामायण' में देखिये)।

चारों पद मिलकर ५२ मात्राओं के छंद।

दोही।

ल०—विषमनि पन्द्रा साजो कला, सम शिव दोही मूल॥

टी०-जिसके पहिले और तीसरे चरण में १५ और दूसरे और चौथे में ११ मात्राएं हों अन्त में लघु हो उसे दोही कहते हैं।

उ०-विरद सुमिरि सुधि करत नितही हरि तुव चरन निहार।
यह भव जलनिधि तें मुहिं तुरत, कब प्रभु करिहहु पार॥

---

* वर्णानामर्थ" में मगण का आद्यक्षर 'मङ्' तत्पश्चात् 'अर्थ' का 'ग ल' होने से मङ्गल ऐसा रूप सिद्ध होता है इसी को श्रीगुसांईजी ने दूसरे पद में ध्वनित किया है यथा—

"मङ्गलानाञ्चकर्त्तारौ"।

चारों पद मिलकर ५४ मात्राओंके छन्द।

हरिपद।

ल०-विषम हरीपद कीजिय सोरह, सम शिव दै सानन्द।

टी०-विषम अर्थात् पहिले और तीसरे पदों में १६ और सम अर्थात् दूसरे और चौथे पदों में ११ मात्राएं होती हैं। अन्त में 'नंद' गुरु लघु होते हैं।

उ०- रघुपति प्रभु तुम हौ जगमें नित, पालौ करके दास।
परम धरम ज्ञाता परमानहु, येही मनकी आस॥

मराठी

राम भजावा राम सदोदित, राम भजावा राम।

सू०- यह छन्द सरसी छन्द का आधा है अर्थात् सरसी के दोही चरणों में इसके चारों चरण पूर्ण होते हैं।

चारों पद मिलकर ५६ मात्राओं के छन्द।

उल्लाल।

ल०-विषमनि पन्द्रह धरिये कला, सम तेरा उल्लाल कर।

टी०-पहिले और तीसरे पद में १५ और दूसरे और चौथे पद में १३ मात्राएं होती हैं। यथा छन्दोऽर्णवे—

उ०-कह कवित कहा बिन रुचिर मति, मति सु कहा बिनहीं विरति।
कह विरतिव लाल गुपालके, चरण न होय जु प्रीति अति॥

चारों पद मिलकर ६० मात्राओं के छन्द।

रुचिरा (द्वितीय)

ल०-विषम चरण कल धारहु सोला, रुचिराविय सम मनु कर्णा—

विषम चरणों में १६ और सम चरणों में १४ मात्राएं होती है अन्त में दो गुरु होते हैं। रुचिराविय अर्थात् रुचिरा दूसरी।

उ०- हरि हर भगवत सुन्दर स्वामी, सबके घटकी तुम जानो।
मेरे मन की कीजे पूरी, इतनी हरि मेरी मानो॥

चारों पद मिलकर ६२ मात्राओं के छन्द।

धत्ता।

ल०-दीजे धत्ता इकतिस मत्ता द्वै, नौ तेरा अन्तहिं नगन।

टी०—विषम चरणों में १८ और सम चरणों में १३ मात्राएं होती हैं। अन्त में तीन लघु होते हैं। यह छन्द द्विपदी धत्ता कहाता है और दोही पंक्तियों में लिखा जाता है।

उ०—कृष्ण मुरारी कुँजबिहारी पद, भजु जन मन रंजन करन।
श्यावो बनवारी जन दुखहारी, जिहि नित जप गंजन मदन॥

धत्तानंद।

ल०—इकतिस मत्तानंद, धत्तानंद, शंकर मुनि तेरह वन्य।

टी०—११, ७ और १३ के विश्राम से धत्तानन्द की प्रत्येक पंक्ति में १३ मात्राएं होती हैं। अन्तमें तीन लघु होतेहैं। यह भी धत्ता के सदृश दोही पंक्तियों में लिखा जाता है। यथा (छंदोमंजरी)—

उ०—जय कंदिय कुल कंस, बलि विध्वंस, केशिय बक दानव दरन।
सो हरि दीन दयाल, भक्त कृपाल, कवि सुखदेव कृपा करन॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे भानु-कवि कृते मात्रिकार्द्धसम वर्णनन्नाम पंचमो मयूखः॥५॥

अथ मात्रिक विषम प्रकरणम्।

ना सम ना पुनि अर्द्ध सम, विषम जानिये छंद।

मात्रिक विषम छन्द उसे कहते हैं कि जिसके चारों चरणों की मात्रा अथवा नियम भिन्न २ होते हैं वा जिसके सम सम और विषम विषम पाद न मिलते हों अथवा सम सम मिलते हों, परंतु विषम विषम न मिलते हों। इसी प्रकार जिसके विषम विषम पाद मिलते हों, परंतु सम सम न मिलते हों अर्थात् जो छन्द मात्रिक सम अथवा मात्रिक अर्द्ध सम न हो वही मात्रिक विषम है।

चार चरणों से कम अर्थात् तीन वा चार चरणों से अधिक चरण जिन छन्दों में हों उनकी गणना भी विषम छन्दों में है।

मात्रिक विषम छन्दों की संख्या जानने की यह रीति है कि प्रत्येक पाद की मात्राओं की छन्द संख्या को आपस में गुणा करो जो गुणनफल आवे उसी को उत्तर जानो यथा—

मात्रिक-विषम छन्द प्रस्तार की रीतिः—

चरण चरण के मत्त जो, तिनकी संख्या छंद।
गुणे परस्पर लहिये सब, विषम छंद स्वच्छंद॥

	पहला चरण (विषम)	दूसरा चरण (सम)	तीसरा चरण (विषम)	चौथा चरण (सम)	व्याख्या
मात्रा	२	२	२	३	
छन्द संख्या	२	२	२	३	२×२×२×३=२४
मात्रा	४	५	६	७	
छन्द संख्या	५	८	१३	२१	५×८×१३×२१=१०९२०

अट बड़े चरणोंमें इसी रीतिसे संख्या निकल सक्ती है रूपान्तर से इसके अनेक उपभेद हो सकते हैं परन्तु वे सब केवल कौतुक हैं।

उदाहरणार्थ २, २, २, ३ मात्राओं वाले विषम छन्द का प्रस्तार नीचे लिखते हैं:—

	पहिला पद विषम	दूसरा पद सम	तीसरा पद विषम	चौथा पद सम
१	ऽ	ऽ	ऽ	।ऽ
२	॥	ऽ	ऽ	।ऽ
३	ऽ	॥	ऽ	।ऽ
४	॥	॥	ऽ	।ऽ
५	ऽ	ऽ	॥	।ऽ
६	॥	ऽ	॥	।ऽ
७	ऽ	॥	॥	।ऽ
८	॥	॥	॥	।ऽ
९	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ।
१०	॥	ऽ	ऽ	ऽ।
११	ऽ	॥	ऽ	ऽ।
१२	॥	॥	ऽ	ऽ।
१३	ऽ	ऽ	॥	ऽ।
१४	॥	ऽ	॥	ऽ।
१५	ऽ	॥	॥	ऽ।
१६	॥	॥	॥	ऽ।
१७	ऽ	ऽ	ऽ	।।।
१८	॥	ऽ	ऽ	।।।
१९	ऽ	॥	ऽ	।।।
२०	॥	॥	ऽ	।।।
२१	ऽ	ऽ	॥	।।।
२२	॥	ऽ	॥	।।।
२३	ऽ	॥	॥	।।।
२४	॥	॥	॥	।।।

प्रस्तार द्वारा विषम छंदों के असंख्य भेद प्रगट होते हैं। परन्तु प्राचीन मतानुसार यह केवल कौतुक ही है, और यथार्थमें इससे कोई विशेष लाभभी नहीं किन्तु वृथा समय नष्ट होता है। विद्यार्थियों को मुख्य २ नियम ही समझ लेना बस है, क्योंकि यदि हम इन सब भेदों को निकालने बैठें तो सम्पूर्ण आयु व्यतीत होने पर भी पार नहीं पा सकेंगे। अब इसके आगे छन्दों का वर्णन किया जाता है।

चारों पद मिलकर ५७ मात्राओं के छन्द।

लक्ष्मी वा बुद्धि।

ल०--आदौ धारै मत्ता तीसै, दूजै पुरान नौ रूरो।
लक्ष्मीनाथा बुद्धी दीजे, ग्रन्थहिं करौं पूरो॥

टी०-प्रथम दलमें ३० और दूसरे दलमें २७ मात्राएं होती हैं। यति कवि की इच्छा पर है परन्तु आर्या छन्दके सदृश इसमें यति १२, १८, और १२, १५ पर न होनी चाहिये।

उ०--गौरी बाएं भागे सोहत, आछे सुरा पगा माथे।
काटौ माया जालै मोरे। शंभो करिय दाया॥

चारों पद मिलकर ६२ मात्राओं के छन्द।

गाहिनी।

ल०--आदौ बारा मत्ता, दूजै द्वै नौ सजाय मोद लहो।
तीजे भानू कीजे, चौथे बीसे जुगाहिनी सुकवि कहो॥

टी०-पहिले दल में १२+१८ और दूसरे दल में १२+२० मात्राएं होती हैं अन्तमें गुरु होता है। बीस बीस मात्राओं के पीछे एक जगण होता है। लक्षण से ही उदाहरण समझ लो। इसके उलटे को सिंहनी कहते हैं।

सू०--बीस मात्राओं के उपरान्त चार लघु रहने से भी दोष नहीं है।

सिंहनी।

ल०--आदौ बारो मत्ता, कल धरि बीस जु सगन्त दूजे चरना।
तीजे प्रथमै जैसे, सिंहनि दस बसु चतुर्थ पद धरना॥

टी०--पहिले दल में १२+२० और दूसरे दल में १५+१८ मात्राएं होती हैं। २० मात्राओं के पीछे एक जगण रहता है। अन्त में गुरु होता है। इसके उलटे को गाहिनी कहते हैं। लक्षण से ही उदाहरण समझ लो।

सू०--इसमें और गाहिनी में चार चार मात्राओं का एक एक समूह रहता है। आर्या प्रकरण देखने पर यह शीघ्र समझ में आ जायगा। इस छन्द में २० मात्राओं के उपरांत चार लघु रहने से भी दोष नहीं है।

चारों पद मिलकर ६७ मात्राओं के छन्द।

मनोहर।

ल०--कला तेरा त्रय चरणा, बहुरि सोरा रवि धरणा।
मनोहर कुँवरिकुँवर हैं, बीसौ बिसै जानकी नायक रामचन्द्रही बर हैं॥

टी०—कहीं २ तेरा तेरा मात्राओं के पांच पद भी आते है। अंतिम पद २८ मात्राओं का होता है। पहिले पद का तुकांत दूसरे पद से और तीसरे पद का तुकांत चौथे से मिलता है। अन्य नाम-दौर, दौड़।

६ पद मिलकर १४४ मात्राओं के छन्द।

अमृतधुनि।

ल०-अमृतधुनि दोहा प्रथम, चौबिस कल सानन्द। आदि अन्त पद एक धरि, स्वच्छचित रच छन्द॥ स्वच्छचित रच छन्ददृध्वनि लखि पद्दलि धरि। साजज्जमक*तिवाजज्झमक सुजाममद्धरि॥ पद्धरि सिर विद्वज्जन कर युद्धदृध्वनि गुनि। चित्तस्थिर करि सुद्धिद्धिरि कह यो अम्मृतधुनि॥

टी०—अमृत धुनि में प्रथम एक दोहा रहता है। प्रतिपद में २४ मात्राएं होती हैं। आदि अन्त में जो पद हों वे एकसे ही हों। इस प्रकार स्वच्छ चित्त से छन्दकी रचना करो। परंतु छन्द की ध्वनि की ओर ध्यान रक्खो। 'अलिपद' भँवरे के ६ पद होते हैं। इसीलिये वह षट्पद कहाता है सो ६ पद रखकर जमक अर्थात् यमक को तीन बार झमकाव के साथ (जाम अर्थात् याम-मत्त) आठ आठ मात्रा सहित साजो। विद्वज्जनों के पादारविंदों में सिर धरकर युद्ध के प्रसंग को विचार चित्त को स्थिर कर और अच्छी बुद्धि धारण करके अमृत धुनि छन्द को कहो, इस छन्द में प्रायः बीररस वर्णन किया जाता है।

उ०—प्रति भट उद्भट विकट जहँ लरत लच्छ पर लच्छ।
श्री जगतेश नरेश तहँ अच्छच्छबि परतच्छ॥
अच्छकच्छबि परतच्छ कच्छटनि विपच्छच्छय करि।
स्वच्छच्छिति अति कित्तिस्थिर सुअमित्तिम्भय हरि॥
उज्झिज्झहरि समुज्झिज्झहरि विरुज्झिज्झटपट।
कुप्पप्पगट सु रुप्पप्पगनि विलुप्यप्पतिभट॥

* आजकल बहुधा यही परिपाटी देखनेमें आता है कि सब प्रकारके अनुप्रासों को केवल भाषा जाननेहारे 'यमक' अथवा 'जमक' कहते हैं। जमक' शब्द जिस प्रकार प्रचलित है वैसा 'अनुप्रास' शब्द प्रचलित नहीं है, परंतु यथार्थमें 'यमक' अनुप्रासके अनेक भेदोंमें से एक भेद है। यहां जो जमक' शब्द का प्रयोग किया गया है उसे जन परिपाटी के अनुसार अनुप्रासका बोधक समझना चाहिये।

कुंडलिया।

ल०-दोहा रोला जोरिकै, छै पद चौबिस मत्त। आदि अन्त पद एक सो, कर कुंडलिया सत्त॥ कर कुंडलिया सत्त, मत्त पिंगल धरि ध्याना। कविजन वाणी सत्त, करै सब को कल्याना॥ कह पिंगल को दास, नाथजू मो तन जोहा। छन्द प्रभाकर मांहि, लसैं रोला अरु दोहा॥

टी०—आदि में एक दोहा उसके पश्चात् रोला छन्द को जोड़कर ६ पद रक्खो। प्रति पदमें २४ मात्राएं हों और आदि अन्तका पद एकसा मिलता रहे। श्रीमत्पिंगलाचार्य्यके मतको ध्यान में रखकर कुंडलिया की रचना करो। यह सत्य मानो कि कविजनो की वाणी कल्याणकारिणी होती है। पिंगल का दास (ग्रन्थकर्त्ता) कहता है कि श्रीमत्पिंगलाचार्य्य महाराज ने मुझ पर कृपादृष्टि की है कि जिसके प्रभाव से इस छन्दःप्रभाकर संज्ञक ग्रन्थ में दोहा रोला प्रभृति छंद विलसित हो रहे हैं।

उ०—मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोय।
जातन की झांई परे, श्याम हरित दुति होय॥
श्याम हरित दुति होय, कटै सब कलुष कलेसा।
मिटै चित्त को भरम, रहै नहिं कछुक अंदेसा॥
कह पठान सुलतान, काटु यम दुख की बेरी।
राधा बाधा हरहु, हहा बिनती सुन मेरी॥

सू०—किसी २ कवि ने दूसरे पद का तीसरे के साथ और चौथे का पांचवें के साथ सिंहावलोकन दर्शाया है, परंतु यह बहुमत नहीं है और गिरधरदासजी ने जिनकी कुंडलिया प्रसिद्ध है, केवल दूसरे का तीसरे के साथ ही सिंहावलोकन प्रदर्शित किया है जैसा कि लक्षण और उक्त उदाहरण दोनों से प्रगट होता है। गिरधरदासजी की भी एक कुंडलिया नीचे लिखी जाती है।

बसिबो वृन्दावन करौ, यह चाहत जिय मोर।
सुनिबो करौ गुपाल की, कर मुरली की घोर॥
कर मुरली की घोर, भोर जमुना को अन्हैबो।
बंसीबट तरु छाह, बहुरि कहुँ अन्त न जैबो॥
कह गिरधर कविराय, कोटि पापन को नसिबो।
मन में यही विचारि, करौ वृन्दावन बसिबो॥

६ पद मिलकर १४८ मात्राओं के छन्द।

छप्पय।

ल०—रोला के पद चार, मत्त चौबीस धारिये। उल्लाला पद दोय, अन्त माहीं सु धारिये॥ कहुँ अट्ठाइस होयँ, मत्त छब्बिस कहुँ देखौ। छप्पय के सब भेद, मीत इकहत्तर लेखौ॥ लघु गुरु के क्रम तें भये, बानी कवि मंगल करन। प्रगट कवित की रीति भल, भानु भये पिंगल सरन॥

टी०—इस छन्द के आदि में रोला के चार पद चौबीस २ मात्राओंके रक्खो। तदुपरांत उल्लाला के दो पद रक्खो। उल्लाला में कहीं २६ और कहीं २८ मात्राएं होती हैं। हे मित्र! लघु गुरु के क्रम से कविजनों की वाणी मंगल करने के हेतु इस छन्द के ७१ भेद होते हैं। ग्रन्थकर्त्ता (उपनाम भानु) का कथन है कि श्रीमत्पिंगलाचार्य्य महाराज की शरण लेने से छंद की रीति भलीभांति विदित होती है। इस छप्पय के अन्त में उल्लाला २६, २६ मात्राओं का है।

सू०—जैसे दोहे बिहारी जी के चौपाई श्रीगोस्वामी तुलसीदास जी की, कुंडलिया गिरधरदास जी की और कवित्त पद्माकरजी के प्रसिद्ध हैं, उसी प्रकार छप्पय नाभादास जी के अत्यन्त ललित है. छप्पय के जो ७१ भेद हैं वे ये हैं:—

छप्पय-अजय विजय बल कर्ण वीर बेताल विहंकर।
मर्कट हरि हर ब्रह्म इन्द्र चन्दन जु शुभंकर॥
श्वान सिंह शार्दूल कच्छ कोकिल खर कुंजर।
मदन मत्स्य ताटंक शेष सारंग पयोधर॥
शुभ कमल कन्द वारन शलभ भवन अजंगम सर सरस।
गणि समर सु सारस मेरु कहि मकर अली सिद्धिहि सरस॥१॥
बुद्धि सुकरतल और सु कमलाकार धवल यर।
मलय सुध्रुव गनि कनक कृष्ण रंजन मेघाभर॥
गिद्ध गरुड़ शशि सूर्य शल्य पुनि नवल मनोहर।
गगन रच्छ नर हीर भ्रमर शेखर शुभ गौहर॥
जानिये सुकुसुमाकर पतिहिं दीप शंख बसु शब्द मुनि।
छप्पय सुभेद शशि मुनि बरन गुरु लघु घट बढ़ रीति गुनि॥

इन छप्पयों के अन्त में उल्लाला २८, २८ मात्राओं का है।

विदित हो कि जिस छप्पय में उल्लाला के दो पद २६, २६ मात्राओं के होते हैं, उसमें १४८ मात्राएं होती हैं। अर्थात् २४×४=६६+२६×२=५२ कुल

१४८ और जिस छप्पय में उल्लालाके दो पद २८, २८ मात्राओं के होते हैं, उसमें १५२ मात्राएं होती हैं। अर्थात् २४×४=६६+२८×२=५६ कुल १५२।

इसी हिसाब से यदि इनका प्रस्तार निकालना हो तो क्रमानुसार एक एक गुरु घटाकर और दो दो लघु बढ़ाकर पूरे ७१ भेद प्रगट हो सकते हैं। यथा—

	१४८ मात्रा वाले				१५२ मात्रा वाले			
	गु.	ल.	वर्ण	मात्रा	गु.	ल.	वर्ण	मात्रा
१ अजय	६८	१२	८०	१४८	७०	१२	८२	१५२
२ विजय	६७	१४	८१	१४८	६६	१४	८३	१५२

इसी रीति से अंतिम भेद का रूप यों होगा—

७१ मुनि	०	१४८	१४८	१४८	०	१५२	१५२	१५२

इति श्री छन्दःप्रभाकरे भानु-कवि कृते मात्रिक विषम वर्णनंनाम षष्ठो मयूखः ॥ ६ ॥

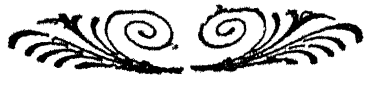

अथ मात्रिकार्द्धसम वा विषमांतर्गत आर्य्या प्रकरणम् ।

विदित हो कि आर्या छंद का प्रयोग विशेषकर संस्कृत और महाराष्ट्रीय भाषा में ही पाया जाता है । भाषा में इसका प्रयोग बहुत कम है परंतु यहां विषयक्रमानुरोध से सर्व्व साधारण जनोंके बोधार्थ, इसका संक्षिप्त रीति से सोदाहरण वर्णन किया जाता है ।

आर्या के मुख्य ५ भेद हैं जिनकी संज्ञा और मात्राएं नीचे लिखी जाती हैं -

भेदकी अनुक्रम संख्या	नाम	मात्रा				योग	दूसरे नाम	अर्द्धसम वा विषम
		प्रथम पाद	द्वितीय पाद	तृतीय पाद	चतुर्थ पाद			
१	आर्य्या	१२	१८	१२	१५	५७	गाहा	विषम
२	गीति	१२	१८	१२	१८	६०	उग्गाहा उद्गाथा	अर्द्धसम
३	उपगीति	१२	१५	१२	१५	५४	गाहू	अर्द्धसम
४	उद्गीति	१२	१५	१२	१८	५७	विग्गाहा विगाथा	विषम
५	आर्यागीति	१२	२०	१२	२०	६४	स्कंधक, खंधा साहिनी	अर्द्धसम

(१) आर्य्या के छंद में चार मात्राओं के समूह को गण कहते हैं । ऐसे चतुष्कलात्मक सात गण और एक गुरु के विन्यास से आर्या का पूर्वार्द्ध होता है ।

(२) आर्यागण

प्रथम गण	ऽ ऽ ४ मात्रा	चतुर्थात्रिक आर्या गणों के ५ भेद होते हैं ।
द्वितीय गण	।ऽ ऽ ४ मात्रा	
तृतीय गण	। ऽ । ४ मात्रा	
चतुर्थ गण	ऽ । । ४ मात्रा	
पंचम गण	। । । । ४ मात्रा	

(३) आर्या की रचना करते समय इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिये कि आर्या के चतुष्कलात्मक सात गणों में से विषम गणों में (अर्थात् पहिले, तीसरे, पांचवें और सातवें में) जगण न हो ।

(४) छठवें चतुष्कलात्मक समूह अर्थात् गण में जगण हो अथवा चारों लघु हों ।

(५) आर्यादल में जहां २७ मात्राएं होती हैं वहां छठवां गण एक लघु मात्रा का ही मान लिया जाता है।

आर्य्या।

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ग

आदो तीजे बारा, दूजे नौनौ कलान कोजुध रौ

१ २ ३ ४ ५ ६ल ७ ग

चौथे तिथिआ र्यासो, विषमग णैजन सु गंतक रौ

टी० जिसके पहिले और तीसरे चरणमें बारह बारह दूसरे में अठारह और चौथे में (तिथि) १५ मात्राएं हों उसे आर्य्या कहते हैं। इसके विषम गणों में (१, ३, ५ और ७ में 'जन') जगण का निषेध है। और अन्त में गुरू वर्ण होता है यथा—

रामा रामा रामा, आठौ यामा जपौ यही नामा।
त्यागौ सारे कामा, पैहौ बैकुन्ठ विश्रामा॥

यथा श्रुतबोधे—यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि।
अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पंचदश सार्य्या॥

गीति।

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ग

मानुवि षमगण जनहो, नौनौ कल सम पदैष टजगी ती

टी०— जिसके विषम पदों में १२ और सम पदों में १८ मात्राएं हों उसे गीति कहते हैं। विषम गणों में जगण न हो। छठवेंमें जगण हो और अन्त में गुरु हो यथा—

रामा रामा रामा, आठौ यामा जपौ यही नामा।
त्यागौ सारे कामा, पैहौ अन्तै हरीजु को धामा॥

यथा श्रुतबोध—आर्यापूर्वार्द्धसमं द्वितीयमपि भवति यत्र हंसगते।
छन्दोविदस्तदानी गीतिंतामसृतवाणि भाषन्ते॥

उपगीति।

१ २ ३ ४ ५ ६ल ७ ग

मानुअ युकगण जनहो, योगरु मुनिसम हिं उपगी ती

टी० जिसके (अयुक) विषम चरणों में १२ और सम चरणों में योग (८+मुनि ७) १५ मात्राएं हों, परन्तु विषम गणों में 'जन' जगण न हो, अन्त में गुरु हो उसे उपगीति कहते हैं। यथा—

रामा रामा रामा, आठौ यामा जपौ रामा ।
छांड़ौ सारे कामा, पैहौ अन्तै सुविश्रामा ॥

यथा श्रुतबोधे-आर्य्योत्तरार्धतुल्यं प्रथमार्द्धमपि प्रयुक्तचेत् ।
कामिनि तामुपगीतिं प्रतिभाषन्ते महाकवयः ॥

उद्गीति ।

१ २ ३ ४ ५ ६ल ७

भानुवि षमगण ज न हो, योगमु निलखुवि य पदरीती ।

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ग

तूर्यच रणवसु दोषा, या विधि पंडित रचौ जु उद्गी ती ।

टी०—जिसके विषम अर्थात् पहिले और तीसरे चरणों में बारह बारह मात्राएं हों, दूसरे चरण में योग (८+मुनि ७) १५ मात्राएं और चौथे चरण में (वसु ८ + दोष १०) १८ मात्राएं हों उसे उद्गीति कहते हैं, विषम वर्णों में 'जनहो' अर्थात् जगण न हो अन्त में गुरु हो । यथा—

राम भजहु मन लाई, तन मन धन के सहित प्रीता ।
रामहिं निसिदिन ध्यावौ, राम भजे तबहिं जान जग जीता ॥

यथा—आर्याशकल द्वितये विपरीते पुनरिहोद्गीतिः ।

आर्यागीति ।

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८

भानुअ युग गण ज न हो, सममें बीसव रमत्त आर्या गीती ।

टी०—जिसके विषम चरणों में १२ और सम चरणों में २० मात्राएं हों उसे आर्यागीति कहते हैं, विषम गणों में जगण न हो और अन्त में गुरु हो । यथा—

रामा रामा रामा, आठौ यामा जपौ यही नामा को ।
त्यागौ सारे कामा, पैहौ सांची सुनौ हरी धामा को ॥

यथा—आर्य्याप्राग्दलमतेऽधिकगुरुताद्दग्परार्द्धमार्यागीतिः ।

आर्य्याओं के अनेक उपभेद हैं परन्तु भाषाकाव्य के रसिकों को मुख्य २ भेदों का जानना ही अलम (बस) है ।

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे भानु-कवि कृते मात्रिकार्द्धसमविषमांतर्गतार्या वर्णनंनाम सप्तमो मयूखः ॥ ७ ॥

अथ वैतालीय प्रकरणम्।

वैताली छंद भी आर्या के सदृश अपने ढंग का निराला होता है और बहुत करके संस्कृत में ही पाया जाता है। इसका प्रयोग भाषा में बहुत कम है, परन्तु हम छन्दःक्रमानुरोध से अपने पाठकों को इस छन्द से भी परिचित होने के हेतु इसका समास वर्णन यहां कर देते हैं।

इसकी मात्रा वा इसके लक्षण नीचे के उदाहरणों में दर्शाये गये हैं। इसमें विशेष नियम यह है कि विषम चरणों में दूसरी मात्रा तीसरी मात्रासे वा चौथी पांचवां से न मिली हो अर्थात् उनके मिलने से गुरु वर्ण न हो जाय। जैसे 'विशाल' शब्द में 'वि' की एक मात्रा है और 'शा' में दूसरी और तीसरी मात्रा मिली है ऐसा न होना चाहिये। इसी प्रकार सम पादों में छठवीं मात्रा सातवीं से न मिली हो अर्थात् छठवीं और सातवीं मिलकर एक दीर्घाक्षर न हो और यह भी नियम है कि दूसरे और चौथे चरण के आदि में ६ लघु न हों, पहिले और तीसरे पाद में चाहे हों चाहे न हों।

वैताली।

ल०—कल मनु धरि आदि तीसरे। औ सोला सम रे लगा सही।
विषम छ उपरे ल गा धरौ। वैताली वसु पै समै वही॥

टी०—जिसके पहिले और तीसरे चरणों में (मनु) १४, और दूसरे और चौथे चरणों में सोलह २ मात्राएं हों उसे वैताली कहते हैं। इसके विषम चरणों में ६ मात्राओं के उपरांत 'रे लगा' एक रगण और लघु गुरु होते हैं। और सम चरणों में आठ मात्राओं के उपरांत वही अर्थात् 'रलग' होते हैं। यथा—

हर हर भज जाम आठहूं। जंजालहि तजिकै करौ यही।
तन मन धन दे लगा सबै। हर धामहिं जइहौ सखा सही॥

सू०—वैताली के अन्त में एक गुरु अधिक करने से औपच्छन्दसिकम् नामक छंद सिद्ध होता है। यथा—

हर हर भज जाम आठहूं। जंजालहिं तजिकै यहै करौ जू।
तन मन धन दे लगा सबै। हर धामहिं जैहौ हिये धरौ जू॥

वैतालों के निम्नांकित ६ भेद हैं।

उदीच्यवृत्ति।

वैताली छन्द के विषम पादों में दूसरी और तीसरी मात्रा मिलकर एक गुरु वर्ण होने से 'उदीच्यवृत्ति' छंद सिद्ध होता है। यथा—

हरैहिं भज जाम आठहूं। जंजालहिं तजि कै करौ यही।
तनै मनै दे लगा सबै। पाइहौ परम धामहीं सही॥

प्राच्यवृत्ति ।

वैताली छंद के सम पादों में चौथी और पांचवीं मात्राओं के एकत्रित होने से 'प्राच्यवृत्ति' छन्द बनता है । यथा –

हर हर भज जाम आठहूं । तज सबै भरम रे करौ यही ।
तन मन धन दे लगा सबै । पाइहौ परम धामहीं सही ॥

प्रवर्त्तक ।

वैताली छंद के विषम पादों में दूसरी और तीसरी और सम पादों में चौथी और पांचवीं मात्राओं के एकत्रित होने से 'प्रवर्त्तक' छन्द बनता है । यथा –

हरैहिं भज जाम आठहूं । तज सबै भरम रे करौ यही ।
तनै मनै दे लगा सबै । पाइहौ परम धामहीं सही ॥

आपातलिका ।

वैताली छन्द के विषम चरणों में ६ और सम चरणों में ८ मात्राओं के उपरांत एक भगण और दो गुरु रखनेसे 'आपातलिका' छन्द बनता है । यथा–

हर हर भज रात दिना रे । जंजालहि तज या जग माहीं ।
तन मन धन सों जपिहौ जो । हर धाम मिलब संसय नाहीं ॥

अपरांतिका ।

जिसमें वैताली छंद के सम चरणों के सदृश चारों पाद हो और चौथी और पांचवीं मात्रा मिलकर एक दीर्घाक्षर हो उसे 'अपरांतिका' कहते हैं यथा –

प्रभु को भजहु रे सबै घरी । तज सबै भरम रे हिये धरी ।
त्यागिये सबहिं झूठ जालही । पाइहौ परम धामही सही ॥

चारुहासिनी ।

जिसमें वैताली के विषम चरणों के समान चारों पाद हों परंतु दूसरी और तीसरी मात्रा मिलकर एक दीर्घाक्षर हो, उसे 'चारुहासनी' कहते हैं । यथा –

प्रभुहिं जप सर्व्व काल रे । तजौ सबै मोह जाल रे ।
जपौ यही रे सबै घरी । हरी हरी रे हरी हरी ॥

सोरठा–पूरण पूरब अर्द्ध, छंदप्रभाकर जिमि भयो ।
तैसहि उत्तर अर्द्ध, सम्पूरण प्रभु कीजिये ॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे भानु-कवि कृते मात्रिक समार्धसमान्तर्गत वैतालीय छन्द वर्णनंनाम अष्टमो मयूखः ॥ ८ ॥

॥ इति मात्रिक छंदांसि–पूर्वार्धंच ॥

अथ

छंदःप्रभाकरोत्तरार्द्धं प्रारभ्यते।

तत्रादौ वर्णिक गण तथा गणागण विचारः।

दोहा—श्रीगुरु पिंगलराय के, पद जुग हिय महँ आ
छन्द प्रभाकर को कहौं, उत्तरार्द्ध सुखदानि ॥ *

सोरठा—विनय करौं कर जोरि, उत्तम दीजे बुद्धि मुहि।
मति अति भोरी मोरि, तुम्हरोही बल है सदा॥

मात्रिक छन्दों तक छन्दःप्रभाकर का पूर्वार्द्ध हुआ अब उसका उत्तरार्द्ध लिखा जाता है। वर्णवृत्तों में गणों का काम पड़ता है, अतएव यहां पर उनका वर्णन किया जाता है। तीन वर्णों के समूह को गण कहते हैं। ये गण ८ हैं इनके नाम और लक्षण नीचे लिखे जाते हैं: —

सोरठा आदि मध्य अवसान, 'यरता' में लघु जानिये।
'भजसा' गुरु प्रमान, 'मन' तिहुं गुरु लघु मानिये॥

जिस त्रिवर्णात्मक समुदाय के आदि में मध्य में और (अवसान) अन्तमें लघु वर्ण हो उसे यथा क्रम से 'य र त' यगण रगण और तगण कहते हैं। वैसेही जिस त्रिवर्णात्मक समूह के आदि में मध्य में और अन्तमें गुरू वर्ण हो उसे यथा-क्रम से 'भ ज सा' भगण जगण और सगण कहते हैं। और जिस त्रिवर्णात्मक समूह के तीनों वर्ण गुरू और लघु हों उसे यथा क्रम से 'म न' मगण और नगण कहते हैं। इसके लिए यहां संस्कृत का प्रमाण भी लिखते हैं। यथा —

SSS ||| S|| |SS
मस्त्रि गुरुस्त्रि लघुश्च न कारो, भादि गुरुः पुनरादि लघुर्यः।
|S| S|S ||S SS|
जो गुरु मध्य गतो रल मध्यः सोऽन्त गुरुः कथितोऽन्त लघुस्तः॥

सूत्रकार भगवान् पिंगलाचार्य्य ने इन गणों की परिभाषा इतनी उत्तमताके साथ की है कि पहिले ही गणकी व्याख्या में छन्दःशास्त्र के

* इस दोहे में पिंगल के दशाक्षरों (म य र स त ज भ न ग ल का स्मरण है।

प्रधान २ सिद्धांतों को झलका दिया है अर्थात् पहिले सूत्र* द्वारा छन्दोवर्ग दशवर्णात्मकता तथा षण्मात्रत्वादिका सूक्ष्म रूपसे उल्लेख कर शेष गणोंकी परिभाषाके सूत्रों द्वारा गुरु शिष्य संवादके व्याजसे उस सर्वोत्कृष्ठ गंभीराशय रूप मोतियों की माला बनाई है कि जिसके कंठमें धारण करते ही छंदःशास्त्रके अध्ययन की आवश्यकता तथा तज्जन्य लाभ का मनुष्य को तुरन्त ही बोध हो जाता है। यह भाषा-प्रधान ग्रन्थ होने के कारण यहां उन सबका विस्तृत वर्णन नहीं कर सकते पर अपने प्रिय पाठकों से उनके विशेष लाभार्थ, छन्दस्सूत्र के अवलोकन का अनुरोध अवश्य करते हैं। गणोंके लक्षण, नाम और लक्ष्य नीचे लिखे जाते हैं:—

धी श्री स्त्रीम्-यहां अन्तिम म से मगण जानो धी श्रीस्त्रीमे तीनों गुरु हैं
वरासाय—य से यगण जानो वरासा में आदि लघु है।
कागुहार—र से रगण जानो कागुहारमें मध्य लघु है।
वसुधासः—स से सगण जानो वसुधामें अन्त गुरु है।

प्रथम सूत्र धी श्रीस्त्रीम के ३ वर्णों से यह ध्वनित होता है कि-

(१) वर्ण तीन प्रकार के होते हैं अर्थात् ह्रस्व (लघु) दीर्घ (गुरु) और प्लुत। यथा—

एकमात्रो भवेद् ह्रस्वो, द्विमात्रो दीर्घ उच्यते।
त्रिमात्रस्तु प्लुत ज्ञेयो, व्यंजनं चार्द्ध मात्रकम॥
चाषश्चैकां वदेन्मात्रां, द्विमात्रं वायसो वदेत्।
त्रिमात्रंतु शिखी ब्रूते, नकुलश्चार्ध मात्रकम॥

पद्य में लघु और गुरु का ही काम पड़ता है प्लुत का काम संगीत शास्त्र में पड़ता है। नीलकंठ का शब्द एक मात्रा वाला, काक का दो मात्रा वाला और नेवलेका अर्द्ध मात्रिक होता है।(प्लुतः) दूराद्धाने च गाने च रोदने च प्लुतो मतः। (अर्द्ध मात्रा) व्यंजनं चार्द्ध मात्रकम्। व्यंजन हल कहाते हैं क्योंकि बिना स्वर के उनका पूर्ण उच्चारण नहीं हो सकता। अन्वग्भवति व्यंजनम्। कहा भी है-अर्द्ध मात्रा लाघवेन पुत्रोत्सवं मन्यन्ते वैयाकरणाः।

(२) छन्दों के तीन वर्ग होते हैं अर्थात् गण छन्द, मात्रिक छन्द और वर्णवृत्त। यथा—

आदौ तावद्गणच्छन्दो मात्रा छंदस्ततः परम्।
तृतीयमक्षरश्छंदश्छंदस्त्रेधा तु लौकिकम्॥

इस ग्रन्थमें भाषा परिपाटीके अनुसार गणछन्द (आर्याछन्द) को मात्रिक छन्दान्तर्गत ही मानकर छन्दोंके मात्रिक और वर्णिक दो मुख्य भेद रक्खे हैं।

(३) मात्रिक छन्द वा वर्णिक वृत्तों के तीन तीन भेद सम अर्द्धसम और विषम होते हैं, तीन तीन वर्णोंका एक एक गण होता है यह तो इससे स्पष्टही है,

सातेकत्— त से तगण जानो सातेक में अन्त लघु है।
कदासज—ज से जगण जानो कदास में मध्य गुरु है।
किंवदभ—भ से भगण जानो किंवद् में आदि गुरु है।
नहसन—न से नगण जानो नहस में तीनों लघु है।

तीन वर्णों का प्रस्तार निकाल के उक्त गणों का स्पष्टीकरण किया जाता है। वक्र रेखा से (S) गुरु और सरल रेखा से (I) लघु का बोध होता है।

नाम	रेखारूप	वर्णरूप	लघुसंज्ञा	उदाहरण
मगण	SSS	मागाना	म	माधोजू
यगण	ISS	यगाना	य	यचौरे
रगण	SIS	रागना	र	रामको
सगण	IIS	सगना	स	सुमिरौ
तगण	SSI	तागान	त	तूईश
जगण	ISI	जगान	ज	जपैन
भगण	SII	भागन	भ	भावत
नगण	III	नगन	न	नजन

छन्द शास्त्रमें सम्पूर्ण कार्य गुरु लघु से ही चलता है मात्रिक तथा वर्णिक गणभी इन्हीं के मेलसे सिद्ध होते हैं गुरु और लघु मिलकर तीनही मात्राएं होती हैं। यथा—राम ३ मात्रा।

(४) इस सूत्र में 'थ ई श र ई स् त र ई म' ये दशाक्षर 'म न भ य ज र स त ग ल' के भी सूचक हैं।

(५) ये दशाक्षर सम और अर्द्धसम छन्दों के चार चार पद और विषम छन्दों के छै पद मिलकर दश पदों को भी व्यंजित करते हैं।

(६) इस सूत्रकी छै मात्राएं हैं (अंतिम हलन्त म् की कोई अलग मात्रा नहीं मानी जाती) मात्रिक गणों में सबसे बड़ा गण टगण की छै ही मात्राएं हैं तथा वर्णिक गणों में सबसे बड़ा गण मगण की भी छै ही मात्राएं हैं। यद्यपि विषय स्पष्टीकरणार्थ कवियों ने कहीं ६ और कहीं १० प्रत्यय माने हैं तथापि शास्त्रोक्त ६ ही मूल प्रत्यय हैं। यथा—

प्रस्तारो नष्ट मुद्दिष्ट मेकद्व्यादि लग क्रिया।
संख्यानमध्व योगश्च षडेते प्रत्ययाः स्मृताः॥

अर्थात् प्रस्तार, नष्ट उद्दिष्ट, मेरु, पताका और मर्कटी।

शास्त्र के प्रारम्भमें ही इस सूत्र को लिखकर सूत्रकार ने गुरु शिष्य संवाद

अष्टगणात्मक दोहा।

मायामें भूलहु नभ्रमि यहैमा नपर तीत।
सुखजो तूचाहु सिसदा, रामनाम भजमीत॥

माया में मगण, भूलहु भगण, नभ्रमि नगण, यहैमा यगण, ये चार गण शुभ हैं और सुखजो सगण, तूचाहु तगण, रामना रगण, जमीत जगण ये चार गण अशुभ हैं।

पिंगल के दशाक्षर।

'म य र स त ज भ न ग ल' सहित, दस अक्षर इन सोंहि।
सर्व्व शास्त्र व्यापित लखौ, विश्व विष्णु सों जोंहि॥

"म्यरस्त जभ्न गै र्लान्तै रेभिर्दशभिरक्षरैः।
समस्तं वाङ्मयं व्याप्तं त्रैलोक्यमिव विष्णुना।

जैसे विष्णु से सम्पूर्ण विश्व व्याप्त है वैसे ही इन दशाक्षरों से सम्पूर्ण काव्यरूपी सृष्टि व्याप्त है। इस दशाक्षरी विद्याका माहात्म्य भी स्मरणीय है। ये दशों अक्षर विष्णु के दशावतारों से सम्बन्ध रखते हैं। यथा—

रूप से यह सूचित किया है—

गुरु-शास्त्राध्ययन से धी अर्थात् बुद्धि बढ़ती है और जिसकी बुद्धि बढ़ी हुई होती है वही श्री अर्थात् लक्ष्मी को प्राप्त कर गृहस्थाश्रम के पूर्ण सुख देने वाली स्त्री के आनन्द को प्राप्त कर सका है और धनोपार्जन के उपायों में (वराखा) वह बुद्धिही श्रेष्ठ है।

शिष्य-(का गुहा) वह बुद्धि कहां प्राप्त हो सकती है।

गुरु-(वसुधा) वसुधा तल पर।

शिष्य-(सातेक) पर कब ?

गुरु- धादिपरः) धारणा अर्थ और अवबोधनशील होने पर (पूर्व्वापर सम्बन्धार्थ यहां पर इस सूत्र को भी लिख दिया है)।

शिष्य-(कदास) वह कैसे प्राप्त हो सक्ती है ?

गुरु-(नहसन) हास्यादि चपलता का त्याग कर विनीत भाव पूर्व्वक अध्ययन करने से मनुष्य उक्त बुद्धि को प्राप्त कर सकता है।

क्रम	गणाक्षर	अवतार	स्वामी	फल	व्याख्या
१	म SSS	आद्यौ-मीन (मत्स्य)	पृथ्वी	श्री	आठ गणों में मगण ही राजा है पृथ्वी-आधार फल उसका भी है, नगण मित्र है, मी से मगण और न से नगण का संकेत है।
२	य	द्वितीयः गुह्य (कच्छ)	जल	वृद्धि	जल ही वृद्धि का कारण है।
३	र SIS	तृतीयः शूकर (वाराह)	अग्नि	दाह	वाराहजीका तेज अग्निवत् है।
४	स IIS	चतुर्थ नृहरिः (नरसिंह)	वायु	भ्रमण	सिंहका भ्रमण तथा वायु का प्रवाह स्वभाव सिद्ध है।
५	त SSI	पंचम तन्वंग (वामन)	व्योम	शून्य	वामनजीने अपने छोटे शरीर को बढ़ाकर आकाश को भी आच्छादित कर दिया।
६	ज IS	षष्ठ-द्विजेश (परशुराम)	सूर्य	मय	जामदग्न्य परशुरामजीने अपने सूर्यवत् तेजसे २१ बेर पृथ्वी को निःक्षत्रिय करके भयभीत कर दिया और अब चिरंजिव हो कर महेन्द्रगिरि में तपस्या कर रहे हैं।
७	भ SII	सप्तम-भानुज (रामचन्द्र)	शशि	यश	भानुवंशी रामचन्द्रजी का शीतल यश संसारमें विदित है।
८	न III	अष्टम-निगम (कृष्ण)	स्वर्ग	सुख	वेदमूर्ति कृष्णावतार भक्तों को सुख और स्वर्ग का दाता है।

वर्ण

९ ग S बौद्ध ये गुरुवत् है, पंचदेवात्मक वर्ण. बौद्ध शास्त्र संस्थापन कर्त्ता बृहस्पतिः।

१० ल। कल्कि ये लघुवत् है, पंचदेवात्मक वर्ण, कल्कि कल्क विनाशार्थ मार्विभूत विदुर्बुधाः॥

इन दशाक्षरों में आठ गणों के पश्चात् ही ग ल का प्रयोग है इससे यही प्रतिपादित होता है कि वर्णवृत्तमें आदि से लेकर तीन तीन अक्षरों में गण घटित किये जायँ अन्त में जो वर्ण शेष रहेंगे वे गुरु अथवा लघु होंगे। यह शुद्ध शास्त्रोक्त प्रथा है। वर्ण प्रस्तारों में भी इन्हीं आठों गणों के तथा गुरु लघु के रूप म य र स त ज भ न ग ल) क्रमपूर्वक आते जाते हैं गुरु वा लघु को

आदि में वा अन्यत्र मनमाने मानकर गणों का क्रम बिगाड़ना शास्त्र प्रथा के अत्यन्त विरुद्ध और अनधिकार चेष्टा है। यथा—

शुद्धगण	अशुद्धगण
नयन यही तें तुम बदनामा।	(१) एक लघु, नगण तगण नगण, दो गुरु।
नगण यगण, नगण, यगण।	(२) दो लघु, सगण, भगण, सगण एक गुरु।
	(३) चार लघु, दो गुरु, नगण, यगण।

विदित हो कि जहां 'म य र स त ज भ न' पाठ है वहां प्रस्तार के क्रमानुसार है और जहां 'म न भ य ज र स त' पाठ है वहां शुभाशुभ गणोंके क्रमानुसार है।

शुभाशुभ गण।

मो भूमिः श्रियमातनोति यजलं वृद्धिं र वन्हिमृतिं।
सो वायुः परदेश दूर गमनं त व्योम शून्यं फलम्॥
जः सूर्यो भयमाददाति विपुलं भेंदुर्यशा निर्म्मलम्।
नो नाकश्च सुख प्रदः फलमिदं प्राहुर्गणानां बुधाः॥
मनौ भवेता मथ मित्र संज्ञौ भयौच भूतौ कथितो गणज्ञैः।
जताबुदासीन गणो प्रदिष्टो रसावरा नाम समप्रभावौ॥
दोषो गणानां शुभ देव वाच्ये नस्यात्तथैवाक्षर वृक्त संज्ञे।
मात्रौत्थपद्येतु विचारणीयो न्यासाद्गुरोश्चैवलघोर नित्यात्॥
पद्यादौ नैव कर्त्तव्या श्चादयो बहुधा बुधैः।
दग्ध वर्णा अपित्याज्या, झहराश्च भपावपि॥

गण	रूप	स्वामी	फल
मगण	SSS	पृथ्वी	श्री
यगण	ISS	जल	वृद्धि
रगण	SIS	अग्नि	दाह
सगण	IIS	वायु	भ्रमण
तगण	SSI	व्योम	शून्य
जगण	ISI	भानु	भय
भगण	SII	शशि	यश
नगण	III	स्वर्ग	सुख

पुनः उपरोक्त अभिप्राय नीचे लिखा जाता है:—

मन भय सुखदा, जरसत दुखदा, अशुभ न धरिये, नर जु वरणिये।

भावार्थ-मन में, ईश्वर का भय रखना सदा सुख का दाता है और माया जो जड़ है उसे सत्य मानकर उसी में लिप्त रहना दुखदायी है इसलिये

हे भाई! तूने जो नर देही पाई है तो अशुभ कर्मोंका परित्याग कर॥

पिंगलार्थ–आठ गणोंमें मगण, नगण भगण और यगण से चार शुभ हैं और जगण, रगण, सगण और तगण ये चार अशुभ हैं। नर–कविताके आदि में श्रेष्ठ कविजन अशुभ गणोंका प्रयोग नहीं करते। पद्य (छन्द) के आदिमें अशुभ गणोंका प्रयोग न करो, अनेक पंडितों का ऐसा मत है कि ग्रन्थ वा काव्यके आदिमें ही अशुभ गण वर्जित हैं वैसेही आदिमें झ ह र भ ष ये पांच दग्धाक्षर भी त्याज्य हैं क्योंकि ये कर्ण कटु हैं। हां ये ही वर्ण यदि गुरुहों तोदोष नहीं। यदि काव्य करनेमें कहीं अशुभ गण आ जावे तो उसके पश्चात् एक दूसरा शुभगण रखने से दोष का परिहार हो जाता है। द्विगण विचार यों है –

मगण नगण ये मित्र हैं, भगण नगण ये दास।
उदासीन 'जत' जानिये, 'रस रिपु करत विनास॥

इनके संयोगका फलाफल नीचे लिखा जाता है—

(मित्र)		(दास)	
मगण नगण	फल	भगण यगण	फल
मित्र + मित्र	सिद्धि	दास + मित्र	सिद्धि
मित्र + दास	जय	दास + दास	हानि
मित्र + उदासीन	हानि	दास + उदासीन	पीड़ा
मित्र + शत्रु (उदासीन)	प्रियनाश	दास + शत्रु (शत्रु)	पराजय

जगण तगण	फल	रगण सगण	फल
उदासीन + मित्र	अल्पफल	शत्रु + मित्र	शून्य
उदासीन + दास	दुःख	शत्रु + दास	प्रियनाश
उदासीन + उदासीन	विफल	शत्रु + उदासीन	शंका
उदासीन + शत्रु	दुःख	शत्रु + शत्रु	नाश

गणागण के विषय में संस्कृत ग्रन्थों में ये प्रमाण भी मिलते हैं:—

नायको वर्ण्यते यत्र फलं तस्य समादिशेत।
अन्यातु कृते काव्ये, कवेर्दोषा वहं फलम्॥
देवता वर्ण्यते यत्र, क्वापि काव्ये कवीश्वरैः।
मित्रामित्र विचारो वा, न तत्र फल कल्पना॥
देवता वाचकः शब्दा येच भद्रादिवाचकाः।
ते सर्वे नैव निन्द्यासु लिंपितो गण तोपिवा॥

भावार्थ–नरकाव्य (नायिका भेदादि) में गणागर का विचार अवश्य करना चाहिये न करने से कवि दोष का भागी होता है। कहा भी है—

कीन्हें प्राकृत जन गुण गाना। शिर धुनि गिरा लगति पछिताना॥

देववाची शब्दों में, मंगलवाची शब्दों में, देव कथा के प्रसंग में तथा वर्णवृत्तों में गणागण वा मित्रा मित्र के विचार करने की आवश्यकता नहीं। किसी महात्मा का वचन है कि—

इहां प्रयोजन गण अगण, और द्विगण को काहि।
एकै गुण रघुबीर गुण, त्रिगुण जपत हैं जाहि॥

दोष केवल मात्रिक छन्दों के आदि में ही माना जाता है वर्णवृत्तों में नहीं क्योंकि यदि वर्णवृत्तों में भी माना जावे तो जिन जिन वृत्तों के आदि में जगण, रगण, सगण वा तगण हैं वे निर्दोष बनही न सकेंगे इससे यह समझना चाहिये कि जहां जिसका विधान है वहां दोष नहीं। इसका विचार मात्रिक छन्दों के आदि में ही होना चाहिये क्योंकि मात्रिक छन्द स्वतन्त्र हैं उनमें गुरु अथवा लघु वर्ण का न्यास अनित्य है अर्थात् अनियमित है और उनमें शुभ गणों का प्रयोग करना वा न करना कवि के स्वाधीन है।

जगण से जगणपूरित एक शब्द का रगण से रगणपूरित एक शब्द का, सगण से सगणपूरित एक शब्द का और तगण से तगणपूरित एक शब्द का अभिप्राय है, परंतु जहां शब्द गण से न्यून वा अधिक हो वहां दोष वहीं है। जैसे—बखान मोसों राम की, कथा मनोहर मीत। यहां आदि में बखान शब्द जगणपूरित होने के कारण दूषित है। भले भलाई पै लहहिं लहहिं निचाई नीच। यहां 'भलेभ' यद्यपि जगण है परन्तु स्वयं खंडित होने के कारण दूषित नहीं ऐसे ही और भी जानिये।

अब यह प्रश्न हो सकता है कि 'ज र स त' गण अशुभ क्यों माने गये, शास्त्र प्रमाण तो ऊपर लिख ही चुके हैं युक्ति प्रमाण से भी देखिये तो 'म न भ य' इन चार शुभ गणों में ध्वनि का जैसा स्वाभाविक प्रवाह है वैसा 'ज र स त' में नहीं। वर्णवृत्तों में तो अन्य नियमित गणों के योग से ध्वनि सुधर जाती है परन्तु मात्रिक छन्दों में वर्णों का न्यास अनियमित होने के कारण आदि में ही 'ज र स त' के प्रयोग से ध्वनि में कुछ न कुछ न्यूनता आही जाती है इसका स्पष्टीकरण नीचे लिखते हैं—

(शुभ)

गण	रूप	व्यवस्था
म	SSS	यहां तीनों दीर्घ स्वरों का एक समान बल है
न	III	यहां तीनों लघु स्वरों का एक समान बल है
भ	SII	यहां एक दीर्घ स्वरके पश्चात् दो लघु स्वरका समान बल है
य	ISS	यहां एक लघु स्वरके पश्चात् दो ऊंचे स्वर का समान बलहै

अशुभ

गण	रूप	व्यवस्था
ज	ISI	यहां एक लघुस्वर से ऊंचे स्वर में जाकर फिर लघु स्वर में गिरना पड़ता है अतएव बल न्यून है।
र	SIS	यहां दीर्घ स्वर से लघु स्वर में गिरकर फिर दीर्घ स्वर में चढ़ना पड़ता है अतएव बल न्यून है।
स	IIS	यहां दो लघु स्वरों से एकदम ऊंचे स्वर पर चढ़ना होता है अतएव बल न्यून है।
त	SSI	यहां दो ऊंचे स्वरों से एकदम लघु स्वर में उतरना होता है अतएव बल न्यून है।

परन्तु नवीन विद्यार्थियों के समक्ष यह कठिन समस्या उपस्थित हो जाती है कि गणागण वा द्विगण का विचार प्रत्येक मात्रिक छन्द के आदि में किया जाय वा ग्रन्थके आरंभमें ही करना अलम् है इस विषयमें हमें प्राचीन प्रमाण ये मिलते हैं: –

(१) ग्रन्थस्यादौ कविना बोद्धव्यः सर्वथा यत्नात्-अन्यत्रापि।

(२) दुष्टा र स त जा यस्माद्धनादीनां विनाशका।
काव्यस्यादौ न दातव्य इतिच्छन्दविदो जगुः॥
यदा दैववशदाद्यो गणो दुष्ट फलो भवेत्।
तथा तद्दोष शांत्यर्थं शोध्यः स्यादपरोगणः॥

यहां 'ग्रन्थस्यादौ' और 'काव्यस्यादौ' पदोंसे तो ग्रन्थ वा काव्यके आदि में ही शुभ गणोंका प्रयोग लिखा है इन प्रमाणों से यह नहीं पाया जाता कि प्रत्येक छन्दके प्रारंभमें शुभ गणों का प्रयोग परमावश्यक है। पहिले प्रमाण के अन्तमें 'अन्यत्रापि' पद आया है वह बहुत विस्तीर्ण और असाध्य प्रतीत होता है इससे तो यह अभिप्राय निकलता है कि ग्रन्थारम्भके अतिरिक्त प्रत्येक अध्याय के आरंभमें, प्रत्येक प्रसंग के आरंभमें, प्रत्येक मात्रिक छन्दके आरंभमें शुभ गणों का प्रयोग किया जाय। दूसरे प्रमाणमें 'काव्यस्यादौ' पद स्पष्ट लिखा है जिसका अर्थ है काव्य के आदि में, इसमें यह उपदेश किया है कि काव्य के आदि में अशुभ गण (ज र स त) का प्रयोग न करो यदि दैववशात् कोई अशुभगण पड़ जावे तो उसके परे एक शुभगणकी योजना करो जैसा कि ऊपर लिख चुके हैं यहां तक तो हुई नियम की बात अब यह विचारणीय है कि श्रेष्ठ कविजनोंने इन नियमोंके रहते किस मार्गको अंगीकार किया है उसी मार्ग से हम सबोंको चलना श्रेयस्कर है क्योंकि 'महाजनो येनगतः स पंथाः' दूर न जाकर हम यहां कवि कुल सम्राट् श्रीगुसाईं तुलसीदासजी के अनुपम काव्य रामायण को ही देखते हैं तो ग्रन्थके आदिमें ही उन्होंने संस्कृत श्लोकमें तो 'वर्णानाम्' मगणका

प्रयोग किया है और भाषा का जहां से प्रारंभ है वहां 'जिहि सु' नगणका प्रयोग किया है ये दोनों गण महामंगल तथा सिद्धि के दाता हैं, अब क ड कांड प्रति गुसांईजी की पद योजना देखिये तो प्रत्येक कांडके आदिमें आपको शुभ गणका ही प्रयोग मिलेगा।

(बालकांड)

(म) वर्णानामर्थ संघानां अनुष्टुप् वर्णवृत्त।

(अयोध्याकांड)

(म) वामांकेच विभाति भूधर सुता, देवापगा मस्तके-शा० वि० वर्णवृत्त।

(आरण्यकांड)

(म) मूलंधर्म तरोर्विवेक जलधेः पूर्णेन्दुमानन्ददम शा० वि० वर्णवृत।

(किष्किन्धाकांड)

(म) कुंदेंदीवर सुन्दरावतिबलौ विज्ञान धामावुभौ शा० वि० वर्णवृत्त।

(सुन्दरकांड)

(म) शांतं शाश्वतमप्रमेय मनघं निर्वाण शांतिप्रदम्--शार्दूल विक्रीड़ित।

(लंकाकांड)

(म) रामं कामारि सेव्यं भव भय हरणं काल मत्तेभसिंहं स्रग्धरा वर्णवृत्त

(उत्तरकांड)

(म) केकी कंठाभनीलं सुरवर विलसद्विप्रपादाब्जचिन्हं स्रग्धरा वर्णवृत्त।

यद्यपि वर्णवृत्तों में गणोंका दोष नहीं तथापि देखिये गुसांईजीने प्रत्येक कांडका आरंभ ऐसे वर्णवृत्तों से किया कि जिन सबों के आदि में मगण ही मगण है। अब ग्रन्थ के भीतर देखिये तो चौपाई वा अन्य मात्रिक छंदोंके एक नहीं सैकड़ों ऐसे उदाहरण हैं कि जिनके आदिमें वर्जितगण कहीं पूर्णरूप से और कहीं खंडितरूप से आये हैं नीचे कुछ उदाहरण देते हैं।

(स) सरिता सब पुनीत जल बहहीं।
(स) बिकसे सरसिज नाना रंगा।
(त) बैठारि आसन आरती करि निरखि बर सुख पावहीं।
(त) आचार करि गुरु गौरि गणपति मुदित विप्र पुजावहीं।
(र) जानकी लघु भगिनि जो सुन्दरि शिरोमणि जानिकै।
(र) भाग छोट अभिलाष बड़ करहुं एक विश्वास।
(ज) यथा सु अंजन आंजि दृग, साधक सिद्ध सुजान।
(ज) भले भलाई पै लहहिं लहहिं निचाई नीच। इत्यादि

अब ग्रन्थस्यादौ, काव्यस्यादौ इन प्रमाणों से और श्रेष्ठ कवियों के अवलम्बित मार्गसे यही प्रतिपादित होता है कि ग्रन्थ वा काव्य के आदि में ही शुभगणका प्रयोग आवश्यक अन्यत्र शुभ गणों का प्रयोग हो सके तो उत्तमही है नहीं तो कोई हानि नहीं।

अब विद्यार्थियों को यहां यह शंका हो सकती है कि श्रीगुसांईजी की रामायण तो देवकाव्य है उसमें जो गणागण का दोष हो तो भी दोष नहीं माना जा सकता। प्रिय मित्र! यह कथन सत्य है देवकाव्य में गणागण का दोष नहीं अब विचारने का स्थान है कि दोष यद्यपि नहीं माना जाता है तथापि गुसांईजी ने अपने ग्रन्थों में आद्योपांत पिंगल का जैसा विचारपूर्वक विर्वाह किया है। वैसा कदाचित्ही किसी दूसरे ने कियाहो ऐसा करने से उन्होंने सोनेमें सुगन्ध की कहावत चरितार्थ कर दिखाई है और हम लोगों के लिये मार्ग भी सुगम कर दिया है। गुसांईजी का पिंगल संबन्धी विशेष चमत्कार मेरी रचित "नवपंचामृत रामायण" में देखिये। अब हम नायिकाभेदादि ग्रन्थों की ओर दृष्टिपात करते हैं तो उनमें भी कवियों ने प्रायः इसी प्रथा को अंगीकार किया है। कुछ नमूने नीचे लिखते हैं—

जगद्विनोद (पद्माकर) ग्रन्थारंभ में भ) सिद्धि सदन सदन सुन्दर वदन, अंत में (न) जगतसिंह नृप हुकुम तें, बीच में सगणादि कई प्रयोग हैं आद्योपांत रचना अत्यंत मनोहर है।

रसप्रबोध (सैयद गुलाम नबी) ग्रन्थारंभ में (म) दोहा में यह ग्रंथ को। अंत में (भ) पूरन कीनों ग्रंथ में। बीच में सगणादि अनेक दोहे हैं। रचना मधुर है।

रसविलास (देव कवि) ग्रन्थरंभामें (भ) पायनि नूपुर मंजु बजै कटि किंकिणि के धुनि की मधुराई। अन्त में (म) रानी राधा हरि सुमिरि। यद्यपि वर्णवृत्त में गणागण का दोष नहीं तथापि कवि ने ऐसा वर्णवृत्त (सवैया) ग्रन्थारंभ में लिखा है जिसकी प्रारंभ शुभ गण भगण से है। कहीं २ सगणादि दोहे में शब्द काठिन्य दोष आ गया है जैसे—

श्रवणोत्कण्ठा दरशन, लाज प्रेम करि भाष।

हिततरंगिणी (कृपाराम)–ग्रन्थारंभ में (भ) वेद पुरान विरंचि शिव। अन्त में (न) सिधि निधि शिव मुख चन्द्र लखि। सगणादि दोहे कई हैं परंतु कहीं २ दोहे के आदि में नगण जगणवत् खटकता है जैसे जड़ स्मृति व्याधि प्रलाप पुनि, उनमद अरु अभिलाख।

रसिकप्रिया (श्रीकेशवदास)-ग्रन्थारम्भ में 'भ' एक रदन गज बदन सदन बुधि मदन कदन सुत। अंत में (त) बाढ़ै रति मति अति परे। तगण खंडित है अतएव निर्दोष है।

व्यंग्यार्थ कौमुदी (प्रताप कवि)-ग्रन्थारंभा में (न) गणपति गिरा मनाइकै— अन्त का भाव अच्छा नहीं। यथा –

बिगरो देत सुधार जे, ते गनि सुकवि सुजान।
बनो बिगारत जे मुखनि, ते कवि अधम समान॥

भावविलास (देवकवि)–ग्रन्थारंभ मे (म) राधाकृष्ण किशोरजुग । अन्त में स्वाभिमान सहित यह दोहा है—

दिल्ली पति अवरंग के, आजमशाह सपूत ।
सुन्यो सराह्यो ग्रन्थ यह, अष्ट जाम संयूत ॥

ग्रन्थ के बीच में सगणादि प्रयोग कई है परंतु कहीं २ जगणादि दोहा अति निषिद्ध है । यथा—

सुहाग रिस रस रूप तें बढ़ै गर्व अभिमान ।
थोरेई भूषण जहां सो विच्छित्ति बखान ॥

रसराज (मतिराम)–ग्रन्थारंभमें (भ) ध्यावैं सुरासुर सिद्ध समाज महेशहिं आदि महा मुनि ज्ञानी । यद्यपि वर्णवृत्त में गणागण का दोष नहीं तथापि कवि ने ऐसा वर्णवृत्त (सवैया) आदिमें लिखा है जिसका प्रारंभ शुभ गण भगण से है । ग्रन्थांत में (न)

समुझि समुझि सब रीझिहैं, सज्जन सुकवि समाज ।
रसिकन के रस को कियो, नयो ग्रन्थ रस राज ॥

उपरोक्त उदाहरणों से यह भलीभांति विदित हो गया कि इन ग्रन्थोंके आदि में कवियों ने शुभगण ही का प्रयोग किया है तत्पश्चात् ग्रंथमें गणागणके विचार की आवश्यकता न रखी जो थोड़े बहुत दोष दिखाये गये हैं वे उन कवियों के दोष बताने के हेतु नहीं वरन इसलिए कि पाठकवृन्द उनको समझकर गुण का ग्रहण करें और दोष को परित्याग करें । इन सबों का सिद्धांत यही है कि ग्रन्थ वा काव्यके आदिमें यदि कोई मात्रिक छंद रखा जावे तो उसके आदिमें 'म न भ य' में से किसी एक शुभ गण की योजना अवश्य की जाय यदि वर्णिकवृत्त रखा जावे तो ऐसे वर्णवृत्त की योजना हो जिसके आदिमें 'म न भ य' में से कोई एक शुभगण हो तत्पश्चात कवि की जैसी इच्छा हो वैसा प्रयोग करे अन्यत्र शुभगण आते जावें तो उत्तम ही है न आवे तो कोई हानि नहीं । हां इतना तो अवश्य है कि छंदोंकी रचना पिंगल के नियमानुसार हो । अब इसके आगे वर्णवृत्तों का वर्णन किया जाता है—

अथ वर्णवृत्तानि-तत्रांतर्गत समवृत्त भेदाः ।

क्रम अरु संख्या बरण की, चहुं चरणनि सम जोय ।
वर्णिक सम वृत्तहि सरस, भाषत सब कवि लोय ॥

वृत्त का नाम	लक्षण	पहिला	दूसरा पद	तीसरा पद	चौथा पद	अन्य नाम
		† उक्था	एकाक्षरी वृत्तिः (२)			
श्री	ग	गो	श्री	धी	ह्री	
		अत्युक्था-	द्वाक्षरा वृत्तिः (४)			
कामा	गग	गंगा	ध्यावौ	कामा	पावौ	स्त्री
मही	लग	लगो	मही	सही	न ही	
सार	गल	ग्वाल	धार	कृष्ण	सार	ग्वाल
मधु	लल	ललि	चल	मधु	भल	
		मध्या-	त्र्यक्षरा वृत्तिः [८]			
नारी	म	माधो ने	दीतारी	गोपों की	है नारी	तारी ताली
शशी	य	यशोदा	हरी को	बतावै	शशी को	
प्रिया	र	री प्रिया	मान तू	मान ना	ठान तू	मृगी
रमण	स	सब तो*	शरणा	गिरिजा	रमणा	
पंचाल	त	तू छांड़	पंचाल	ये सर्व	जंजाल	
मृगेन्द्र	ज	जु खेल	नरेन्द्र	शिकार	मृगेंद्र	
मंदर	भ	भावत	मंदर	राजत	कंदर	
कमल	न	नबन	भजन	कमल	नयन	

* तो = तुम्हारी ।

† सामवेदोक्त—उक्था, अन्यमते–उक्ता ।

प्रतिष्ठा (चतुराक्षरावृत्तिः १६)

कन्या (म ग)

मांगै कन्या ।

मांगै कन्या । माता धन्या । बोल्यो कंसा । नासौं बंसा ॥

यह एक मगण और एक गुरु का कन्या नामक वृत्त है ।

अन्य नाम-तीर्णा, तिन्ना ।

धार (म ल)

मूला धार

मूला धार । ही में धार राधेश्याम । अठौं याम ॥

यह एक मगण और एक लघु का 'धार' नामक वृत्त है।
ही में=हृदय में। (अन्य नाम–तारा)

क्रीड़ा (य ग)

युगी क्रीड़ा।

युगै चारों । हरीतारो । करो क्रीड़ा । रखो व्रीड़ा ॥

यह एक यगण और एक गुरु का 'क्रीड़ा' नामक वृत्त है।
व्रीड़ा=लाज, इसीके दुगुने को शुद्धना वृत्त कहते हैं। यथा—

अरी कान्हा कहां जै है। सु तेरो दास ह्वै रै है।
करै री ना अंदेसा तू। किदारा शुद्ध गावे तू॥

उर्दू की एक बहर भी इससे मिलती है। जैसे मफाईलुन् मफाईलुन् मफाईलुन् मफाईलुन् यथा—

अलग हम सबसे रहते हैं, मिसाले तार तंबूरा।
जरा छेड़े से मिलते हैं, मिलाले जिसका जी चाहे।

इसी से मिलता हुआ विधाता नामक मात्रिक छन्द को भी देखिये।

उषा (य ल)

उषा यालि।

युँला धीर । उषाबीर । पती तोर । मिलै भोर ॥

यह एक यगण और एक लघुका 'उषा' नामक वृत्त है।
यालि=या अलि। युँला=यों लाओ। उषा बाणासुर की कन्या। अन्य नाम-मुद्रा

रंगी (र ग)

राग रंगी।

राग रंगी श्याम संगी । नित्य गावौ । मुक्ति पावौ ॥

यह एक रगण और एक गुरुका 'रंगी' नामक वृत्त है।

धारि (र ल)

रोलि धारि।

री ! लखौ न । जात कौन । वस्त्र हारि । मौन धारि ॥

यह एक रगण और एक लघुका 'धारि' नामक वृत्त है।
रोलि=रोली कुमकुम। हारि=हरण करके।

देवी (स ग)

सग देवी ।

सग देवी ! । तुव सेवी । सुख पावै । तर जावै ॥

यह एक सगण और एक गुरु का 'देवी' नामक वृत्त है ।

तुव सेवी = तुम्हारा सेवक (अन्य नाम–रमा)

पुंज (स ल)

सिल पुंज ।

सिल पुंज । कल कुंज । जहँ जाव । हरि गाव ॥

सिल = शिला । पुंज = समूह । कल = सुन्दर ।

धरा (त ग)

तुंगाधरा ।

तू गा हरी । क्यों ना अरी । जाने खरा । शैले धरा ।

तुंगा = बड़ी । धरा = पृथ्वी । खरा = सत्य ।

कृष्ण (त ल)

कृष्णातुल ।

तू ला मन । गोपी धन । तृष्णै तज । कृष्णै भज ॥

कृष्णातुल = कृष्ण अतुल ।

सुधी (ज ग)

जगै सुधी ।

जगै सुधी । भली बुधी । छमा करै । दया करै ॥

सुधी = अच्छी बुद्धि वाला ।

धर (ज ल)

जलंधर ।

जलंधर । पुरंदर । दयाकर । हराकर ॥

जलंधर = एक राक्षस मेघ । पुरंदर = इन्द्र, शिव, विष्णु । हरा = हरियाली (अन्य नाम हरा)

कला (भ ग)

भाग कला ।

भाग भरे । ग्वाल खरे । पूर्ण कला । नन्द लला ॥

निसि (भ ल)

भूल निसि ।

भूल तज । शूलि भज । सर्व दिसि । द्यौस निसि ॥

शूल = शिव, द्यौस निसि = दिन रात ।

सती (न ग)

नगसती ।

नगपती । वरसती । शिव कहौ । सुख लहौ ॥

नगपती = कैलासपति । वर सती = महादेव । (अन्य नाम तरणिजा)

हरि (न ल)

नल हरि ।

न लखत । भव रत । भ्रम तज । हरि भज ॥

नल=एक प्रधान बंदर का नाम । हरि=बंदर, प्रभु ।

सुप्रतिष्ठा (पंचाक्षरावृत्तिः ३२)

सम्मोहा (म ग ग)

मा गंगा कासी, सम्मोहा नासी । २ पद

मांगे गोपाला । बंसीरी वाला । पेखें सो नेहा । छांड़ो सम्मोहा ॥

पेखें = देखते हैं । सम्मोहा = मोह ।

रति (स ल ग)

सु लगै रती ।

सुलगै रती । इकहूं रती । बलराम सों घनश्याम सों ॥

सु = अच्छी । रति वा रती = शुद्ध प्रेम । इकहूं रती = एक रत्ती भर भी ॥

नायक (स ल ल)

सुलला यक, = वहिनायक । २ पद

सुललो चल । यमुना थल । जहँ गायक यदुनायक ॥

यक=एक । सु ललो=अच्छी कन्या ।

हारी (त ग ग)

तो गौ गुहारी ।

तू गंग मैया । कै पार नैया । मो शक्ति हारी । लागौ गुहारी ॥

तो=तेरी । कै=कर । गुहारी प्रार्थना । (अन्य नाम-हारीत)

यशोदा (ज ग ग)

जगौ गुपाला कहैं यशोदा । २ पद

जगौ गुपाला । सुभोर काला । कहै यशोदा । लहै प्रमोदा ॥

प्रमोदा=आनन्द । यहवृत्त उर्दू के इस बहर से मिलता है फ़ऊल फ़ालन् ४ बार· यथा —

रहा सिकंदर यहां न दारा न है फ़रीदूं यहां न जम है ।
मुसाफ़िराना टिके हो उट्ठो मुकाम फ़रदोस है अरम है ॥
सफ़र है दुश्वार राह कब तक बहुत बड़ी मंज़िले अदम है ।
नसीम जागो कमर को बांधो उठाव बिस्तर कि रात कम है ॥

पंक्ती (भ ग ग)

भागग पंक्ती।

भाग गुनै को! नारि नरा को। नाहिं लखंती। अच्छर पंक्ती॥

भागन=भाग्य में गई हुई अर्थात् लिखी हुई (अन्य नाम-हंस)

करता (न ल ग)

नलग मता। भजु करता। २ पद

न लग मना। अधम जना। सिय भरता। जग करता॥

यम (न ल ल)

नलल यम।

न ललचहु। भ्रम तजहु। हरि भजहु। यम करहु।

नलल-न कर खेल कूद। अन्य नाम-यमक। यम=नियमपूर्वक इन्द्रिय निग्रह।

गायत्री (षडक्षरावृत्तिः ६४)

विद्युलेखा (म म)

मोमे विद्युलेखा।

मैं माटी ना खाई। झूठे ग्वाला माई।

मू बायो माँ देखा। जोती विद्युलेखा॥

कृष्णोक्ति यशोदा प्रति। मूबायो=मुँह खोला, जोती=प्रकाश, विद्युलेखा=विद्युत् पटल। यह 'मम' का विद्युलेखा वृत्त है। अन्य नाम शेषराज।

सोमराजी (य य)

यय्यू सोमराजी।

ययू बाल देखो। सुरंगी सुभेखो। धरैं याहि आजी। कहैं सोमराजी॥

ययू=मेध्याश्व, सुरंगी=सुडौल, सोमराजी=चंद्रावली सदृश।

(अन्य नाम-शंखनारी)

विमोहा (र र)

क्यों विमोहा ररौ।

रार काहे करौ। धीर राधे धरौ। देवि मोहा तजौ। कंज देहा सजौ॥

ररौ=कहते हौ, रार=तकरार, कंज देहा=कमल सदृश देह।

(अन्य नाम-जोहा, विजोहा, द्वियोधा और विज्जोदा)

तिलका (स स)

ससि को तिलका।

ससि बाल खरो। शिव भाल धरो। अमरा हरखे। तिलका निरखे।

ससि को=शशि का। ससिबाल=बालचन्द्र। अमरा=देवगण।

(अन्य नाम-तिल्ला, तिलना, तिल्लना।

मन्थान (त त)

तत्ताहि मन्थान ।

ताता धरौ धीर । मैं देत हौं चीर । जाने न नादान । धारयो जु मंथान ॥

तत्ता = गरम, ताजा । मन्थान = मथानी ।

तनुमध्या (त य)

ती ये तनुमध्या ।

तू यों किमि आली । घूमैं मतवाली । पूछै निशि मध्या । राधा तनु मध्या ॥

ती = स्त्री । तनुमध्यमा = सुमध्यमा । (अन्य नाम-चौरस)

वसुमती (त स)

तोसी वसुमती ।

तो सों वसुमती । धारै, जु कुमती । ते सर्व नसि हैं । धर्म्मिष्ठ बसि हैं ॥

वसुमती = पृथ्वी ।

मालती (ज ज)

जु जोहिं न अन्य । सुमालति धन्य । २ पद

जुदो करि मान । भजौ भगवान । प्रभू हिय धार । सुमालति हार ॥

जोहिं = देखती हैं । जुदो करि = अलग करके [जगण दो] सुमालती = अच्छी युवती । मालती के अच्छे फूल ।

अपरभा (ज स)

जसै अपरभा ।

जसै अपरभा । उदार जन को । सुखी करत हैं । दुखी जनन को ॥

जसै = जसही । अपरभा = श्रेष्ठ प्रकाश ।

अम्बा (भ म)

भूमिहि है अम्बा ।

भूमिहि है अम्बा । जानिय आलम्बा । सेवत जो कोई । पाव फलै सोई ॥

अम्बा = माता, देवी । आलम्बा = आधार ।

शशिवदना [न य]

शशिवदनाऽन्या

नय धरु एका । न भजु अनेका । गहु पन खासो । शशि बदना सो ॥

यह 'नय' का शशिवदना वृत्त है ।

शशिवदना = चंद्रमुखी । अन्या = दूसरी । नय = न्याय । पन = प्रण ।

[अन्य नाम = चण्डरसा]

उष्णिक् (सप्ताक्षरावृत्तिः १२८)

शिष्या [म म ग]

मां मांगे हैं ये शिष्या।

मां ! मांगौं मैं दाना ना। काहे पूछौ ग्वाला ना।
मानौं ना तेरी ए रे। ग्वाला हैं शिष्यै तेरे॥

कृष्णोक्ति यशोदा प्रति। शिष्यै = चेलेही [अन्य नाम-शीर्षरूपक]

मदलेखा [म स ग]

मो संगी मद लेखा।

मोसी गोप किशोरी। पैहौ ना हरि जोरी।
बोले श्याम सु भेखा। ना तेरो मद लेखा॥

मदलेखा=गर्भ का अन्त वा परिमाण।

समानिका [र ज ग]

रोज गा समानिका।

रोज गोप औ हरी। रास मोद सों करी।
ग्वाल ती गँवारिका। धन्य ते समानिका॥

यह 'रजग' का समानिका वृत्त है। दूसरी व्युत्पत्ति = ग्वालतीग=गुरु लघु तीन बार और एक गुरु।

हंसमाला [स र ग]

सुर गौ हंसमाला।

सुर गौ के सहाई। जमुना तीर जाई।
हरषे री गुपाला। लखि कै हंसमाला॥

हंसमाला = हंसों के समूह। सहाई = सहायक।

सुमाला [स स ग]

ससिगंत सुमाला।

ससि गंत सुमाला। जय कृष्ण कृपाला।
कटिये भव जाला। प्रभु होहु दयाला॥

ससिगंत = शशि में गई हुई अर्थात् उसके चारों ओर।

भक्ती [त य ग]

तो योगहिं में भक्ती।

तू योगहिं में फूलो। भक्ती प्रभु की भूलो।
कामा तजुरे कामा। रामा भजु रे रामा॥

कामा = इच्छा।

सूर [त म ल]

तो मोल जानै सूर ।

तो मोल जानै सूर। का जान जो है कूर ।
तौहूं हरी को गाव । जासों सु धामै पाव ॥

तो मोल = तेरी कीमत । सूर = योद्धा । तौहूं = तोभी । कूर = कुबुद्धि, कमअक्ल । सुधामैं = अच्छे धाम को ।

कुमारललिता [ज स ग]

जुसंग कलिता है । कुमार ललिता है । २ पद

जु सोगहिं नसावै । प्रमोद उपजावै ।
अतीव सुकुमारी । कुमार ललिता री ॥

यह 'जसग' का कुमार ललिता वृत्त है । कलिता = शोभित । सोग = शोक प्रमोद = आनंद ।

लीला [भ त ग]

भू तगि लीला लखौ ।

भूतगणै नेमसों । पाल प्रभू प्रेमसों ।
रूपहु नाना धरैं । अद्भुत लीला करैं ॥

भूतगि = पृथ्वी में घूम फिर कर । भूत गणै = समस्त प्राणियों को । पाल = पालते हैं ।

तपी [भ भ ग]

भो भगवान तपी ।

भो भगवान तपी। रामहिं राम जपी ।
धन्य तुम्हार कला । वृत्ति सदा अचला ॥

भो = हे । वृत्ति = नियम ।

सबास [न ज ल]

नजल सबासन ।

न जु लख रामहिं । तजि सब कामहिं ।
कह जन तासन । अपजस बासन ॥

बासन = पात्र, [अन्य नाम-सुबास]

करहंस [न स ल]

नसल करहंस ।

निसि लखु गुपाल । ससिहिं मम बाल ।
लखत अरि कंस । नखत कर हंस ।

नखत करहंस = नक्षत्रों का राजा चन्द्र [अन्य नाम-करहंत, वीरवर]

मधुमती (न न ग)

न नग मधुमती।

न नगधर हरी। बिसर नर घरी।

लहत न मुकती। भजत मधुमती॥

मधुमती=स्त्री। नगधर=गिरधारी। इसके दूने को प्रहरणकलिका कहते हैं।

अनुष्टुप् (अष्टाक्षरावृत्तिः २५६)

विद्युन्माला (म म ग ग) ४, ४

मों मे गंगा, विद्युन्माला।

मों में गंगा,! थारी भक्ती। बाढ़ै ऐसा दीजे शक्ती।

यारी वारी बीचा जाला। देखे लाजै विद्युन्माला॥

यह 'म म ग ग' का विद्युन्माला वृत्त है। गंगा=चारों फल देने हारी चतुर्भुजी गंगाजी। थारी=तुम्हारी। वारी=पानी। वीची जाला=तरंग समूह। विद्युन्माला=बिजली की चमक। इसीके दुगने को रूपा कहते हैं।

वापी (म य ग ल) ४, ४

मां! या गैल, वापी सोह।

माँ! या गैल, वापी सोह। जाही देखि, लागै मोह।

कीजै बैठि ह्यां विश्राम। नीको स्वच्छ, है या धाम॥

माँ या गैल=हे माँ इस मार्ग में। वापी=बावली। धाम ४ का वाचक है।

लक्ष्मी (र र ग ल)

रे रंगीली सु लक्ष्मीहि।

गार ग्वाला वधू ठान। कृष्ण जू सों करैं मान।

जाहि पावैं नहीं सन्त। खेल सो लक्ष्मी कन्त॥

मल्लिका (र ज ग ल)

राज गैल मल्लिकानि।

रोज गौ लिये प्रभात। काननै गुपाल जात।

ग्वाल चारि संग धारि। मल्लिका रचैं सुधारि॥

यह 'र ज ग ल' का मल्लिका वृत्त है। काननै=बन को। मल्लिका=चमेली [माजा]। दूसरी व्युत्पत्ति = ग्वाल चारि=गुरु लघु चार बार।

[अन्य नाम-समानी]

वितान (स भ ग ग)

सुभ गंगाहि विताना।

सुभ गंगा जल तेरो। सुख दाता जन केरो।
नसि कै भौ-दुखनाना। जसको तान विताना॥

वितान=मंडप।

ईश (स ज ग ग)

सजि गंग ईश ध्यावौ।

सजि गंग ईश ध्यावौ। नित ताहि सीस नावौ।
अघ ओघहू नसैहैं। सब कामना पुजैहैं॥

अघ ओघहू=पापों के समूह भी।

नराचिका (त र ल ग)

तोरी लगै नराचिका।

'तोरी लगै नराचिका। मोरी कटैं भवाधिका'।
मारीच याहि ठानली। ह्वै कांचनौ मृगा छली॥

नराचिका=बाण। भवाधिका=संसारी आधि व्याध्यादि क्लेशः।
कांचनौ=सुवर्णमय।

रामा (त य ल ल)

तू या ललि रामा कहु।

तूयों ललचावै मत। ह्वावै मत माया रत।
कामा तजु कामा तजु। रामा भजु रामा भजु॥

रामा=सुन्दर, राम। मायारत=माया में लिप्त।

प्रमाणिका (ज र ल ग)

जरा लगा प्रमाणिका।

जरा लगाय चितहीं। भजो जु नन्द नन्दहीं।
प्रमाणिका हिये गहौ। जु पार भौ लगा चहौ॥

यह 'ज र ल ग' का प्रमाणिका वृत्त है। प्रमाणिका=प्रमाणिक।
दूसरी व्युत्पत्ति=लगा चहौ=।ऽ चार बार। यथा—
नमामि भक्त वत्सलं कृपालु शील कोमलं।
भजामिते पदांबुजं, अकामिनां स्वधामदम्॥

इसके दूने को पंचचामर कहते हैं [अन्य नाम-प्रमाणी और नगस्वरूपिणी]

विपुला (भ र ल ल)

है विपुला भरी ललि ।
भोर लला, जगे जब । आय गये, सखा सब ।
माँ विपुला मया करि । चूमि कह्यो, चलो हरि ॥

विपुला=पृथ्वी अत्यन्त । ललि=हे सखी । मया=प्यार

चित्रपदा (भ भ ग ग)

चित्रपदा भ भ गा गा ।
भू भगुगो अघ सारो । जन्म जबै हरि धारो ।
सोइ हरी नित गैये । चित्र पदारथ पैये ॥

भ=शुक्राचार्य तेज । चित्रपदारथ=अर्थ चतुष्टय ।

माणवक (भ त ल ग) ४, ४

भूतल गो माणवकम् ।
भूतल गौ, विप्र सबै । रक्षन को, जन्म जबै ।
लीन हरी, शैल धरी । माणवकी, क्रीड़ करी ॥

माणवकी क्रीड़=मनुष्यों की लीला । विप्र=चतुर्वेदपाठी
(अन्य नाम–माणवकाक्रीड़)

तुंग (न न ग ग)

न नग गुनहु तुंगा ।
न नग गुनहु तुंगा । मुन हरि नर पुंगा ।
नर तनकर चंगा । नित लह सत संगा ॥

नग=पर्व्वत । तुंग=ऊंचा । पुंगा=श्रेष्ठ । अन्य नाम–तुरंग)

गजगती (न भ ल ग)

न भल गा गजगती ।
न भल गोपिकनसों । हसन लाल छलसों ।
वदत मातु ! युवती । असत ई गजगती ॥

असत=झूठ । ई=ये । गजगती=गजगामिनी ।

पद्म (न स ल ग)

निसि लगत पद्म हूं ।
निसि लगन नैन री । दिन कछु न चैन री ।
कब पहुंचि सद्मरी । लखहुँ पद पद्मरी ॥

सद्म=भवन [अन्य नाम–कमल]

श्लोक अनुष्टुप्।

जामें पंचल षड् गुरु, सप्तौला सम पाद को।
श्लोक अनुष्टुपै सोई, नेमना जहँ आन को॥
पंचमं लघु सर्वत्र, सप्तमं द्वि चतुर्थयोः।
गुरु षष्ठन्तु पादाना, मन्येष्व नियमी मतः॥

टी०—जिसके चारों पदों में पांचवां वर्ण लघु और छठा वर्ण दीर्घ हो और सम पदों में सातवां वर्ण भी लघु हो इनके अतिरिक्त अन्य वर्णों के लिये कोई नियम न हो उसे श्लोक कहते हैं।

वागर्था विवसंपृक्तौ वागर्थ प्रति पत्तये।
जगतः पितरौ वंदे पारवती परमेश्वरौ॥
वर्णानामर्थ संघानां, रसानां छन्द सामपि।
मंगलानाच कर्त्तारौ, वन्देवाणी विनायकौ॥
राम रामेति रामेति, रमे रामे मनोरमे।
सहस्र नाम तत्तुल्यं, राम नाम वरानने॥

भिखारीदासजी ने इसकी गणना मुक्तक छंदों में की है यथा—

अक्षर की गिनती यदा, कहुं कहुं गुरु लघु नेम।
वर्ण वृत्त में ताहि कवि, मुक्तक कहैं सप्रेम॥

वर्णवृत्तों में यह अपवाद है जिसे फारसी में मुस्तसना और अंग्रेजी में Exception कहते हैं। अनुष्टुप के कई भेदोपभेद इस भाषा ग्रन्थ में देना आवश्यक नहीं समझे गये।

बृहती (नवाक्षरावृत्तिः ५१२)

रलका (म स स)

मो सों संकित है रलका।
मोसों संकित है रलका। ना जाने यहि हैं भलका।
प्राणों तुल्य रखावतु हौं। मीठो कंद खवावतु हौं॥

रलका=हरिण। अन्य नाम रत्नकरा।

वर्ष (म त ज)

मीता जीवौ वर्ष हजार।
मीता जीवौ वर्ष हजारैं। कीनो भारी मो उपकार।
दीनी शिक्षा मोहि पवित्र। गाऊं सीताराम चरित्र॥

पाईता (म भ स)

पाईता है जहँ 'म भ सा'

मो भासै है जग सपना। सांचौ एकै सिय रमना।
बुद्धी जाकी अस जाती। पाई तानै रुचिर गती ॥

रुचिर = सुन्दर (अन्य नाम-पादाताली, पवित्रा, ग्रथिता)

हलमुखी (र न स) ३, ६

रैनसी वह हलमुखी।

रादिसी धरि हिय हरी। ना तजै, तिहिं इक घरी।
होहिंगी हम सब सुखी। जो तजै, वह हलमुखी ॥

रैनसी = रात्रिके समान, रात्रि ३ का सूचक यथा— त्रिरात्रमशुचिर्भवेत्।
रानिसी = रानी के तुल्य। हलमुखी = कुरूपा।

महालक्ष्मी (र र र)

रात्रि ध्यावौ महालक्ष्मी।

रात्रि द्यौसौ रहै कामिनी। पीव की जो मनो गामिनी।
बोल बोले जु बोरे अमी। जानिये सो महालक्ष्मी ॥

यह तीन रगणका महालक्ष्मी वृत्त है। रात्रिद्यौसौ=रात्रि और दिन में भी। रात्रि = रगण तीन। मनोगामिनी = इच्छानुरूप चलने वाली। अमी = अमृत। (यस्य भार्या शुचिर्दक्षा भर्त्तारमनुगामिनी। नित्यं मधुर वक्त्री च सारमा (न रमा रमा इति भावः)

भद्रिका (र न र)

रैन रंध्रा नहिं भद्रिका।

रानि रंच नहि कान्ह री। देत गोपि मग जानरी।
सत्य मान यह मातरो। भद्रिका न यह बात री ॥

रंध्र = छिद्र। रंच = जरा भी। भद्रिका = कल्याणकारिणी।

भुजंगसंगता (स ज र)

सजरी सुजंग संगता।

सजुरी करै अबेर क्यों। चल श्याम बंसि टेर ज्यों।
तट में भुजंग संगता। रच रास मोद संगता ॥

भुजंगसंगता = कालीसंयुता।

भुआला (ज य य)

जियै यह नीको भुआला।

जियै यह नीको भुआला। जपै नित नामै गुपाला।
मिटावत हीको कसाला। करै दुखियों को निहाला ॥

ही को=हृदय का। कसाला=दुःख। निहाला=खुश।

महर्षि (ज ज य)

जुजीय महर्षि अनासा।

जु जीय महर्षि अनासा। अहै चिरजीव सुव्यासा।
पुराण अनेक बखाने। सुभक्ति सुधारस साने॥

अनासा = नहीं है नाश जिसका।

मणिमध्या (भ म स)

है मणिमध्या भूमि सही।

भाम सु पूजा कारज जू। प्रात गईं सीता सरजू।
कंठ मणी मध्ये सु जला। टूट परी खोजैं अवला॥

भाम=सूर्यनारायण। मणिमध्य=मणिबन्ध।

शुभोदर (भ भ भ)

भो गुणवन्त शुभोदर।

भो गुणवन्त शुभोदर। लेखत दीन सहोदर।
तो सम कौन सहायक। तूहि सदा सुखदायक॥

भो=हे। शुभोदर=अच्छे पेट वाला। भोगुण=भगण तीन।

निवास (भ य य)

भाय यह तेरो निवासा।

भाय यह तेरो निवासा। रम्य अति नीको सुपासा।
वृन्द तुलसी के विराजैं। भक्त जन सानन्द राजैं॥

रम्य=रमणीक।

सारंगिक (न य स)

नय सुख सारंगिक है।

नय सुखदाता भजुरे। मद अरु मोहा तजुरे।
नहिं हितु सारंगिक सो। जग पितु सीतावर सो॥

नय सुखदाता = न्याय जन्य सुख के दाता। सारंगिक = शारंगपाणि।

बिम्ब (न स य)

न सिय प्रतिबिम्ब पैये।

न सियवर राम जैसे। बहु यदपि भूप वैसे।
इक इकन बार बारी। कह अधर बिम्बवारी॥

वैसे = बैठे। अधर बिंबवारी = बिंबाधरोष्ठी।

रतिपद (न न स)

न निसि रति पद सजौ ।

न निसि घर तजि घरी । कबहुं जग कुलनरी ।

धरति पद परघरा । सुमति युत सति वरा ॥

सतिवरा=सती श्रेष्ठा । (अन्य नाम-कमला, कुमुद)

कामना (न त र) ६, ३

न तर को शुद्ध कामना ।

न तरु की डार काटरे । रहत तू जाहि, आसरे ।

तजहुरे दुष्ट, वासना । धरहुरे शुद्ध, कामना ॥

न तर को शुद्ध कामना=नहीं तरता है कौन शुद्ध मनोरथ से ।

दुष्ट वासना=षड् विकार ।

भुजगशिशुसुता (न न म) ७, २

भुजगशिशुसुतान्नौमी ।

न नमहुं भुज मैं, तोको । किमि कट लिखना, मोको ।

'तजि तव पितु ना, कोई' । भुजगशिशुसुता, रोई ॥

भुज दो का बोधक है । भुजगशिशुसुता=नाग की अल्प वयस्क कन्या सुलोचना । तव पितु=तेरे पिता शेष अर्थात् लक्ष्मण (अन्य नाम-युक्ता)

अमी (न ज य)

निज यश गान अमीसो ।

निज यश गान अमी सो । सुजनहिं लाग तमीसो ।

हरि यश गावत संता । लहत प्रमोद अनंता ॥

अमी=अमृत । तमी=अंधियारा । प्रमोद=आनन्द ।

श्याम (न य य)

नय यहि श्यामै रिझैये ।

नय यहि श्यामै रिझैये । कित भ्रम भूले खिजैये ।

निज निज भागै जगैये । पद रज माथे लगैये ॥

नय=नीति । रिझैये=प्रसन्न कीजिये ।

पंक्तिः (दशाक्षरावृत्तिः १०२४)

पणव (म न य ग) ५, ५

मानौ ये गति, पणवै नीकी ।

मानौ योग सरस जो मोरा । जीतौ कौरव रण कै घोरा ।

हर्षे अर्जुन सुनि श्री बानी । संग्रामै हित पणवै हानी ॥

कै=करके । पणव=रणवाद्य । हानी=हनन किया, बजवाया । गति ५ का बोधक है

हंसी (म भ न ग)

हंसी मो भा नग छबि हरै ।

मैं भीनी गा तुव गुण हरी । तोरे नेहा किमि परिहरी ।
माधो ! मोसों बहु विधी खरी । बोली हंसीतुव दुखभरी ॥

मो भा=मेरी समझ में । भीनी=पग वा रंग गई । हंसी=एक सखी का नाम ।

शुद्धविराट् (म स ज ग)

मोसों जोग विराट धारिये ।

मैं साजो गिरि पूजनो अली । खायो जाय मुरारि औ हली ।
रोक्यो धाय दुहून पूत को । देख्यो शुद्ध विराट रूप को ॥

गिरि='गोवर्धन' पर्वत । मुरारि=श्रीकृष्ण । हली=हलधर । (अन्य नाम विराट)

मत्ता (म भ स ग) ४, ६

मो भा संगा, ब्रज तिय मत्ता ।

मो भा संगा, ब्रज तिय रामा । ध्यावैं माधो, तजि सब कामा ।
मत्ता ह्वै कै, हरि रस सानी । धावैं बन्सी, सुनत सयानी ॥

तिय ४ का बोधक-यथा-जग पतिव्रता चारि विधि अहहीं । भा=भाता है ।
रामा=सुन्दर । मत्ता=मस्त, मोहित । कामा=कामादि षड्विकार ।

मयूरी (र ज र ग)

रोज रंग सों नचै मयूरी ।

रोज राग अन्य कोहि भावै । बात चीत पीव ना सुहावै ।
है मयूर सारिणी कुवामा । त्यागिये न लेहु भूलि नामा ॥

राग=अनुराग । मयूरसारिणी=निर्लज्ज । कुवामा=कुत्सिता स्त्री ।
(अन्य नाम-मयूरसारिणी)

कामदा (र य ज ग)

राय जू गहौ, मूर्ति कामदा ।

राय जू ! गयो, मो लला कहां । रोय यों कहै, नन्द जूतहां ।
हाय देवकी दीन्ह आपदा । नैन ओट कै, मूर्ति कामदा ॥

यह 'रयजग' का कामदा वृत्त है । यशोदा की उक्ति-रायजू=हे नंदरायजी । आपदा=दुःख । कामदा=कामना पूर्ण करने वाली । लला=आदि गुरु के स्थान में दो लघु (।।) रखने से कोई शुद्धकामदा वृत्त मानते हैं परन्तु ११ वर्ण होने के कारण उसका शास्त्रोक्त नाम इन्दिरा है । देखो एकादशाक्षरी वृत्त "नरर लग" ओट कै=ओट करके ।

बाला (र र र ग)

रोरि रंगै धरे मंजु बाला ।

रोरि रंगा दियो कौन बाला। मैं न जानौं कहैं नन्दलाला ।
श्याम की मात बोलीं रिसाई। गोपि कोई करी है ढिठाई॥

रोरि = रोरी, कुमकुमा । ढिठाई = ढीठपन ।

संयुत (स ज ज ग)

सजि जोग संयुत जानिये ।

सजि जोग शंकर कारनै। तप गोरि कीन्हेउ काननै ।
सति भक्ति संयुत पाइकै। किय ब्याह शंकर आइकै ॥

काननै = बन में । (अन्य नाम संयुक्ता)

कीर्ति (स स स ग)

ससिसी गुन कीर्ति किशोरी ।

ससि सों गुनिये मुख राधा । सखि सांचहि आवत बाधा ।
ससि है सकलंक खरो री । अकलंकित कीर्ति किशोरी ॥

यह तीन सगण और एक गुरु का कीर्ति वृत्त है । गुनिये = मानिये ।
बाधा = बट्टा । सकलंक = कलंकित । अकलंकित = निष्कलंक ।
कीर्तिकिशोरी = श्रीराधिकाजी ।

धरणी (त र स ग) ४, ६

तेरी सगी, नहीं धरणी है ।

तेरी सगी, नहीं धरणी है। प्यारे सगो, भली करणी है ।
सीतापती, सदा किन ध्यावै । रीती भरै, भरी ढरकावै ॥

सेवा (त र स ल)

सेवा दरिद्र को तिरसूल ।

तेरे सुलूक को नहिं पार । तारे महा अघी सरदार ।
दाया सदा करै गुण धाम। सेवा बनै नहीं कछ राम ॥

सुलूक = उपकार । अघी = पापी । सरदार = मुखिया ।

उपस्थिता (त ज ज ग) २, ८

तू जो जगदम्ब उपस्थिता ।

तीजी, जग में हरि कंसहीं । दीनी, जब मुक्ति स्वधामहीं ।
फेरीं, सह ज्ञान सुसंस्थिता । ताकी, लखि गनि उपस्थिता ॥

तीजी = तीसरी । स्वधामहिं = निज धाम को । सुसंस्थिता = अच्छी प्रकार । उपस्थिता = आई हुई, वर्तमान ।

वामा (त य भ ग) २, ८

तू यों, भगु वामा तें सरला ।

तू यों, भगु वामा तें सरला । टेढ़े, धनुतें ज्यों तीर चला ।
ये हैं, दुख नाना की जननी । ऐसी, हम गाथा तें अकनी ॥

भगु = भाग, दूर रह । वामा = टेढ़े स्वभाव वाली स्त्री ।
अकनी = सुनी । (अन्य नाम सुसमा)

चम्पकमाला (भ म स ग) ५, ५

भूमि सुगंधा, चम्पकमाला ।

भूमि सगी ना, मान वृथाहीं । कृष्ण सगो है, या जग माहीं ।
ताहि रिझैये, ज्यों ब्रजबाला । डारि गलेमें, चम्पकमाला ॥

यह 'भ म स ग' का चम्पकमाला वृत्त है । भिखारीदासजी ने ६ ही वर्ण माने हैं यथा-'कीजे ही की चंपकमाला' । यह शास्त्र सम्मत नहीं ।
(अन्य नाम रुक्मवती).

सारवती (भ भ भ ग)

भामि भगो वह सारवती ।

भामि भगी रँग डारि कहां । पूंछत यों हरि जाइ तहां ।
धाइ धरो वह गोप लली । सारवती फगुवाइ भली ॥

सारवती = रसीली ।

दीपकमाला (भ म ज ग)

दीपकमाला है भभौ जगौ ।

भामज गोकन्या सखो वरी । देखत द्वै खंड धनू करी ।
मंडप के नीचे अरी अली । दीपकमाला सी लसै लली ।

यह 'भ म ज ग' का दीपकमाला वृत्त है भामज = सूर्यवंशी श्रीरामचन्द्रजी ।
गोकन्या = भूमिसुता जानकीजी ।

पावक (भ म भ ग)

भीम भगै क्यों जो पावक है ।

भीम भगै क्यों जो पावक है । बीर कहैं क्यों जो धावक है ।
शास्त्र पढ़ै जो सो मार्मिक है । धर्म गहै जो सो धार्मिक है ॥

भीम = निडर । पावक = आगी ।

विदु (भ भ म ग) ६, ४

विंदु सुधारस भाभी मांगै ।

भू भमि गावहु सीता रामा । पावन कीरति, आठौं यामा ॥
संत समागम, दीजे ध्याना । विंदु सुधारस, कीजे पाना ॥

भू भमि गावहु = पृथ्वी में पर्य्यटन करते हुए गाओ । रस = ६

मनोरमा (न र ज ग) ६, ४

निरुज गोपिका मनोरमा।

नर जु गावहीं, घरी घरी। सहित राधिका, हरी हरी।
जगत होंय सो, नरोत्तमा। लहत भक्ति जो, मनोरमा॥

निरुज = बिना रोग अर्थात् षट् विकार रहित (अन्य नाम सुन्दरी।

त्वरितगतिः (न ज न ग) ५, ५

न जु नग पै, त्वरितगती।

निज न गुनै, हरिहरहूं। पयनिधि हू, गिरवरहूं।
त्वरित गती, हरिहर की। प्रभु यश तें मति टरकी॥

कोई विद्वान किसी दानशील की स्तुति में कहता है कि हे स्वामी आप की कीर्ति इतनी उज्वल है कि उससे समपूर्ण विश्व शुभ्र हो जाने के कारण हरिहर की मति भी भ्रमित हो रही है। हरि क्षीरनिधि को और हर कैलाश को खोजते हुए त्वरितगति अर्थात् शीघ्र गति से दौड़ रहे हैं और तब भी नहीं पहिचान सक्के (अन्य नाम-अमृतगति)

त्रिष्टुप् (एकादशाक्षरावृत्तिः २०४८)

माली (म म म ग ग) ५, ६

माँ माँ माँ गा गा, साजौ वृत्तै माली।

माँ माँ माँ गागा, साजो वृत्तै माली। सेवा जो कीजे, तो कीजे श्रीकाली।
पावो विश्रामा, धारे हीमें भक्ती। भूलौ न नेमा, तो पावोगे शक्ती॥

यदि ८, ३ पर यति हो तो इसी का नाम श्रद्धा होगा यथा—

मां मो में गंगा की श्रद्धा, बाढ़ैरी।

भारती (म म य ल ग) ६, ५

मो माया लागैना भजौ भारती।

मो माया लागै ना, भजौ भारती। वीणा श्री वाणी की, सदा धारती।
श्रद्धा सों सेवै जो, करै आरती। सद्विद्या की खानी, वही तारती॥

भारती = सरस्वती।

शालिनी (म त त ग ग) ४, ७

मीता तू गा गीतहूं शालिनी की।

माता तुंगा, गान गंगा तिहारो। भावै सोई, कामना देन वारो।
आठौं जामा, तोहि मैं नित्य गाऊं। जातें शांती, शालिनी मुक्ति पाऊं॥

यह म त त ग ग' का शालिनी वृत्त है।

रामो माता मपिता रामचन्द्रः स्वामीरामो मत्सखा रामचन्द्रः ।
सर्व्वस्वम्मे रामचन्द्रो दयालु नाथं जाने नैव जाने न जाने ॥१॥
एकोदेवः केशवो वा शिवावा । एको मित्रं भूपतिर्वा यतिर्वा ।
एको वासः पत्तने वा बने वा । एकानारी सुन्दरी वा दरीवा ॥२॥

तुंगा = श्रेष्ठ । शालिनी = पूरित ।

भ्रमरविलासिता (म भ न ल ग) ४, ७

मो भा न लगा, भ्रमरविलसिता ।

मैं भीनी ला, गुण गण मनमें । जैहौं माधो, चरण शरण में ।
फूलै बल्ली, भ्रमरविलसिता । पावै शोभा, अलि सह अमिता ॥

भीनी = रंग गई । बल्ली = बल्ली, लता । अमित = बहुत ।

वातोर्मि (म भ त ग ग) ४, ७

मो भांती गो, गहि वातोर्मि जानो ।

मो भांती गो, गहि धैर्य्यैं धरो जू । नीके कौरौं, सह युद्धैं करो जू ।
पैहौ सांची, यहि सों, पार्थ मुक्ती । वातोर्मी सो, समझो आत्म युक्ती ॥

गो गहि = इन्द्रिय निग्रह करके । वातोर्मि = पवन, तरंग । वातोर्मि और शालिनी के मेल को द्विज वृत्त कहते हैं ।

माता (म न न ग ग) ५, ६

मानी नागग सुनियत माता ।

मानी नागग, सुनियत माता । दोऊ भक्तहिं, अभिमत दाता ।
सिद्धी दै पुनि, भजत गती हूं । तातें सेवत, सकल जती हूं ॥

मानी = गर्वित । ना = नहीं । गग = गणेश, गंधर्व ॥

मयतनया (म स न ल ग) ६, ५

मोसों ना लगरी मयतनया ।

मोसो नालगरी, मयतनया । वाणी बोलतरी, कतअनया ।
मोहीं है भय ना, रघुवर सों । काहे तू डरपी, इक नर सों ॥

रावणोक्ति मंदोदरी प्रति कत = क्यों । मयतनया = मन्दोदरी
पंचकन्यायों में ५ वीं यथा -

अहल्या, द्रौपदी, कुन्ती, तारा, मन्दोदरी तथा । पंचकन्याः स्मरेनित्यं, महा-पातक नाशनम् । अनया = न्यायहीन ।

भुजंगी (य य य ल ग)

या तीनों लगाके भुजंगी रचौ ।

यचै अन्तमें गान कै शंकरा । सती नाथ सों नानुकम्पा करा ।
करेंगे कृपा शीघ्र गंगाधरा । भुजंगी कपाली त्रिशूला धरा ॥

यह तीन यगण और लघु गुरु का भुजंगी वृत्त है ।

यचौ अन्त में गा न कै=यगण चार के अन्त में एक गुरु न रखकर अर्थात् तीन यगण और लघु गुरु । सतीनाथसो = महादेव के समान । नानुकम्पाकरा न+अनुकम्पाकरा = नहीं है कृपा करनेवाला कोई अन्य । यह वृत्त फ़ारसीके इस बहर से मिलता है फ़ऊलुन फ़ऊलुन फ़ऊलुन फ़अल । यथा—

करम माइये शादमानी बुवद, करम हासिले ज़िंदगानी बुवद ।

शाली (र त त ग ग) ४, ७

रात तू गा, गीत रे भाग्यशाली ।

रात तू गा, गीतरे भाग्यशाली । राधिका की प्रेम सों नेम पाली ।
पात्र ह्वै है कृष्ण हू की कृपा को । विद्य सोई, भक्ति में चित्त जाको ॥

विद्य = चारों वेद जाननेहारा । पात्र = योग्य ।

रथोद्धता (र न र ल ग)

रानि री लगत ये रथोद्धता ।

रानि ! री लागत राम को पता । हाय ना कहहिं नारि आरता ।
धन्य जो लहत भाग शुद्धता । धूगिहू विमल जो रथोद्धता ॥

सखियों की उक्ति कौशल्या प्रति—आरता=आर्त्ता, दुखित । रथोद्धता = रथ से उठी हुई । यथा—

कौशलेन्द्र पदकंज मंजुलौ । कोमलाम्बुज महेश वंदितौ ।
जानकी कर सरोज लालितौ । चित्तकस्यमनभृंग संगिनौ ॥

स्वागता (र न भ ग ग)

स्वागतार्थ उठ रे नभ गंगा ।

रानि ! भोगि गहि नाथ कन्हाई । साथ गोप जन आवत धाई ।
स्वागतार्थ सुनि आतुर माता । धाइ देखि मुद सुन्दर गाता ॥

भोगि = सर्प ।

द्रुता (र ज स ल ग) ५, ६

राज सों लगो, बिसर ना द्रुता ।

राजसों लगो, बिसरना दुखी । धारि के दया, कर तिन्हें सुखी ।
भूलना घरी, धरणि की सुता । होव तू जसी, सुगति हो द्रुता ॥

धरणि सुता = जानकी । द्रुता=शीघ्र ।

श्येनिका (र ज र ल ग)

रे जरा लगी जु काल श्येनिका ।

रे जरा लगाव चेत कै नरा । इन्द्रि ग्वाल गोपिनाथ में खरा ।
आय के गहै जबै करौ कहा । काल श्येनिका प्रचंड जो महा ॥

जरा = बुढ़ापे की अवस्था, थोड़ा । दूसरी व्युत्पत्ति—इंद्रि ५ बार ग्वाल ऽ और गो=एक गुरु । श्येनिका=पक्षीविशेष बाज ।

सायक (स भ त ल ग)

सुभ तैं ले गुण जो सायक में।

सुभ तौलौं गुन तैं रावन ! रे। जबलों सायक रामा न धरे।
सुनि यों अंगद की वाणि शठा। कह मैं त्यागहुं ना युद्ध हठा ॥

सायक = बाण।

उपचित्र (स स स ल ग) ६, ५

ससि सों लग ये उपचित्र है।

ससि सों लग ये उपचित्र है। सखि देखहुरी, सुविचित्र है।
मन मोहत है, सबको खगे। अति सुन्दर है रस सों भगे ॥

ससि सों लग=चन्द्र के समान मालूम पड़ता है। उपचित्र=चन्द्र मंदिर चंद्रमंडल।

शील (स स स ल ल)

ससि सील लखात न रंचक।

ससि सील लखात न रंचक। यह तो विरहीतिय बंचक।
निठुराइ सदा हिय राखत। द्विजराज कहा जन भाखत ॥

सील = शील। द्विजराज = द्विजों का राजा, चंद्रमा। कहा=क्यों।

गगन (स स स ग ग)

ससि सों गगनौ कर है शोभा।

ससि सों गगनौ कर है शोभा। लखि जाहि मिटै मन को छोभा।
छवि अद्भुत आय निहारौरी। ब्रजराजहिं आजु रिझावौरी ॥

गगनौकर = आकाश की भी।

हित (स न य ग ग) ५, ६

सुनिये गग हितकारी मोरे।

सुनिये गग, हितकारी मोरे। बिनवौं तुहिं, कर दोनों जोरे।
सब संकट, मम दीजे टारी। तुम हौ प्रभु, भव बाधा हारी ॥

गग = गणेश गंधर्व।

विध्वंकमाला (त त त ग ग) ६, ५

तू तात गा गाथ, विध्वंकमाला।

तू तात गा गाथ, विध्वंकमाला। षष्ठी महा तत्व, जानो विशाला।
जाने बिना अर्थ, शंका न जावे। है तो कछू और, औरै लगावै ॥

विध्वंकमाला = विधु = चन्द्र। अंकमाला = चिन्हों के समूह
षष्ठी = कात्यायनी देवी चंद्रशेखरा। (अन्य नाम-ग्राहि)

इन्द्रवज्रा (त त ज ग ग)

ताता जगो गावहु इन्द्र वज्रा ।

ताता जगो गोकुलनाथ गावो । भारी सबै पापन को नसावो ।
सांची प्रभू काटहिं जन्म बेरी । है इन्द्रवज्रा यह सीख मेरी ॥ यथा--

यह 'त त ज ग ग' का इन्द्रवज्रा वृत्त है ।

एकस्य दुःखस्य न यावदंतं । पारंगमिष्यामि अथार्णवस्य ।
तावद्द्वितीयं समुपस्थितम्मे । छिन्द्रेष्वनर्थाबहुली भवंति ॥ १ ॥
गोष्ठे गिरिं सव्यकरेण धृत्वा । रुष्टेन्द्रवज्राहतिमुक्तवृष्टौ ।
यो गोकुलं गोपकुलंचसुस्थं । चक्रे स नो रक्षतु चक्रपाणिः ॥ २ ॥
तत्रैव गंगा यमुना त्रिवेणी । गोदावरी सिंधु सरस्वती च ।
सवीणि तीर्थानि वसंति तत्र । यत्राच्युतोदार कथा प्रसंग ॥ ३ ॥

उपेन्द्रवज्रा (ज त ज ग ग)

जती जगैं गाय उपेन्द्रवज्रा ।

जिती जगीं गोपि ब्रजेश लागी । थकीं निशा खोजति प्रेम पागी ।
कहैं सकीं ना जब दुःख सोसी । उपेन्द्र ! वज्रादपि दारुणोऽसि ॥

यह 'ज त ज ग ग' का उपेन्द्रवज्रा वृत्त है ।

सोसी = सहना । उपेन्द्र = कृष्ण । वज्रादपि = वज्र से भी । दारुणोऽसि = कठिन है । यथा —

त्वमेव माताच पितात्वमेव । त्वमेव बंधुश्च सखात्वमेव ।
त्वमेव विद्याद्रविणं त्वमेव । त्वमेव सर्व्वं मम देव देव ॥१॥
सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता । परो ददातीति कुबुद्धिरेषा ।
अहंकरोमीति वृथाभिमानः । स्वकर्म्म सूत्र ग्रथितोहि लोकः ॥२॥

विद्यार्थियों को जानना चाहिये कि इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के सम्मेलन से सोलह वृत्त बनते हैं । इनके रूप और नाम उदाहरण सहित नीचे लिखे जाते हैं । प्रत्येक चरण के आदि में इनसे गुरु की जगह इन्द्रवज्रा और लघु की जगह उपेन्द्रवज्रा के पद समझना चाहिये । कीर्ति से लेकर सिद्धि तक इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के चौदह भेद हैं । इन्हें उपजाति भी कहते हैं । यथा–

उपेन्द्रवज्रा अरु इन्द्रवज्रा, दोऊ जहां हैं उपजाति जानो ।
मानो हमारी सिख याहि मीता, भजौ सदा सुन्दर राम सीता ॥

उपजाति प्रस्तार ।

संख्या	रूप	नाम	संख्या	रूप	नाम	व्याख्या
१	ऽऽऽऽ	इन्द्रवज्रा	९	ऽऽऽ।	बाला	कीर्ति से लेकर सिद्धि तक उपजाति के १४ भेद
२	।ऽऽऽ	कीर्ति	१०	।ऽऽ।	आर्द्रा	
३	ऽ।ऽऽ	वाणी	११	ऽ।ऽ।	भद्रा	
४	।।ऽऽ	माला	१२	।ऽ।	प्रेमा	
५	ऽऽ।ऽ	शाला	१३	ऽऽ।।	रामा	
६	।ऽ।ऽ	हंसी	१४	।ऽ।।	ऋद्धि	
७	ऽ।।ऽ	माया	१५	ऽ।।।	सिद्धि	
८	।।।ऽ	जाया	१६	।।।।	उपेन्द्रवज्रा	

कीर्ति ।ऽऽऽ

मुकुन्द राधा रमणै उचारो । श्री रामकृष्णा भजिबो सँवारो ।
गोपाल गोविंदहिं ना बिसारो । ह्वै है तबै सिंधु भवै उबारो ॥

सू०—इसके पहिले पद के आदि में लघु है । यथा -

नमोस्तुते व्यास विशाल बुद्धे । फुल्लारविंदायतपत्रनेत्र ।
येनत्वया भारत तैलपूर्णः । प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः ॥१॥
अनंत शास्त्रं बहुलाश्च विद्या, अल्पश्च कालो बहु विघ्न ताच ।
यत्सारभूतं तदुपासनीयं, हंसो यथा क्षीर मिवाम्बु मध्यात् ॥२॥

वाणी ऽ।ऽऽ

श्रीराम कृष्णा भज तैं अनन्दा । अनेक बाधा पल में निकंदा ।
संसार-सिंधू तरिहै सनन्दा । होवै कबौं ना यमराज फंदा ॥

सू०-इसके दूसरे पद के आदि का वर्णलघु है और शेष गुरु हैं । यथा—

गो कोटि दानं ग्रहणेशु काशी । प्रयागगंगायुतकल्पवासी ।
यज्ञायुतं मेरु सुवर्ण दानं । गोविंदनामस्मरणे न तुल्यं ॥ ३ ॥
खादन्न गच्छामि हसन्न जल्पे । गतन शोचामि कृतंन मन्ये ।
द्वाभ्यां तृतीयो न भवामि राजन । किंकारणं भोज भवामि मूर्खः ॥

माला ।।ऽऽ

कुटुम्बमाला अति घोर जाला । न राख मोहा मद को अटाला ।
फन्दा परो तो हिय है विशाला । यातें सदाही भजले गुपाला ॥

सू०—इसके पहिले और दूसरे पद के आदि के वर्ण लघु हैं और शेष गुरु है यथा-

कुलं पवित्रं जननी कृतार्था । वसुन्धरा भाग्यवती च धन्या ।
स्वर्गस्थिता ये पितरोऽपि धन्या । येषां कुले वैष्णवनामधेयं ॥
मनोजवंमारुत तुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धियतांवरिष्ठम् ।
वातात्मजंवानरयूथ मुख्यं श्रीरामदूतं शिरसा नमामि ॥

शाला ऽऽ।ऽ

पीवो करो प्रेम रसै ब्रजेशा। गावो करो नाम सदा जगेशा।
गुविंद गोपाल भलो शुवेशा। ध्यावो करै जाहि नित सुरेशा॥

सू०—इसके तृतीय पद के आदि का वर्ण लघु है और शेष गुरु हैं यथा

साहित्य संगीत कला विहीनः। साक्षात्पशुः पुच्छ विषाणहीनः।
तृणन्न खादन्नपि जीवमान। स्तद्भागधेयं परमं पशूनाम् ॥१॥
ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी। भानुः शशी भूमिसुतो बुद्धश्च।
गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतुः। कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥२॥

हंसी ।ऽ।ऽ

मुरारि कंसारि मुकंद श्यामै। गायो करै प्रेमहि प्रेम जामै।
यही उपाये तरिहै सकामै। पैहै भली भांतिहिं दिव्य धामै॥

सू०—इसके विषम पदों के आदि में लघु और सम पदों के आदि में गुरु वर्ण हैं यथा—

दिने दिने सा परिवर्द्धमाना। लब्धोदया चान्द्रमसीव लेखा।
पुपोषलावण्यमयान् विशेषान्। ज्योत्स्नान्तराणीव कलान्तराणि॥

माया ऽ।।ऽ

*राधा रमा गौरि गिरा सु सीता। इन्हैं विचारै चित नित्य गीता।
कटै सबै तो अघओघ भीता। ह्वै हैं सदा तू जगमें अभीता॥

सू०—इसके दूसरे और तीसरे चरणों के आदि वर्ण लघु हैं। यथा—

यस्यास्ति वित्तं सनरः कुलीनः। सपंडितः सश्रुतवान् गुणज्ञः।
सएव वक्ता सचदर्शनीयः। सर्व्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ति ॥१॥
वासांसि जीर्णानियथा विहाय। नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा। न्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥२॥
एकोहि दोषो गुण संनिपाते। निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवांकः।
न तेन दृष्टं कविना सप्रस्तं। दारिद्र्यमेकं गुण कोटिहारि ॥३॥

जाया ।।।ऽ

भजौ भजौ रामहि राम भाई। वृथा अबै बैस सुजात धाई।
करौ करौ साधन साधुताई। शिक्षा जु मानो तब हो भलाई॥

सू०—इसके अन्त्य पद के आदि का वर्ण गुरु है। यथा—

न नाकपृष्ठं नच सार्व्वभौमं। न पारमेष्ठ्यं न रसाधिपत्यं।
न योग सिद्धिं न पुनर्भवं वा। वांछन्ति यत्पादरजप्रपन्ना॥

बाला ऽऽऽ।

राखौ सदा शंभु हिये अखंडा। नासैं सबै ताप महा प्रचंडा।
धारौ विभूती जपि अक्षमाला। नसैं सबैई अघ ओघ जाला॥

सू०— इसके अंतिम पद के आदि का वर्ण लघु है। यथा—

नीलाम्बुज श्यामल कोमलांगं। सीता समारोपित वाम भागं।
पाणौ महाशायक चारु चापं। नमामि रामं रघुवंशनाथम् ॥१॥
येषां न विद्या न तपो न दानं। ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।
ते मर्त्यलोके भुवि भार भूता। मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्त ॥२॥
उल्लंघ्य सिन्धोः सलिलं सलीलं यः शोकवह्नि जनकात्म जाया।
आदाय तेनैव ददाह लङ्का नमामि तं प्रांजलि राज नेयम् ॥

आर्द्रा। ऽऽ।

करौ कबौं ना गरबैरु कोहा। दोऊ विनासौ हनि लोभ मोहा।
राखौ अदंभी मन प्रेम पोहा। भजौ हरी को तव जन्म सोहा ॥

सू०— इसके पहले और चौथे पद के आदि में लघु वर्ण हैं। यथा—

नभस्पृशंदीप्तमनेकवर्णं। व्यात्ताननं दीप्तविशालनेत्रं।
दृष्ट्वाहित्वां प्रव्यथितान्तरात्मा। धृतिं न विंदामिशमंच विष्णो ॥

भद्रा ऽ।ऽ।

साधो भले योग सुतीर्थ धावो। खड़े रहो क्यों तन को तपावो।
टीके सुछापे बहुतै लगाओ। वृथा सबै जो हरि को न गाओ ॥

सू०— इसके समचरणों के आदि में लघु और विषम चरणों के आदि में गुरु वर्ण हैं यथा—

त्वमादि देवः पुरुषः पुराणस्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
वेत्तासि वेद्यंच परं च धामं त्वया ततं विश्व मनंत रूपं ॥

प्रेमा ॥ऽ।

पुराण गावैं नितही अठारे। श्रुति सबैही हँस के उचारे।
एकै जगज्योति भले प्रकारे। सुकीर्ति गाते सब देव हारे ॥

सू०— इसके तृतीय पद के आदि का वर्ण गुरु है। यथा—

पुरा कवीनां गणना प्रसंगे। कनिष्ठ कार्धिष्ठित कालिदासा।
अद्यापि तत्तुल्य कवेर भावा। दनामिका सार्थवती बभूव ॥
अनन्त रत्न प्रभवस्य यस्य। हिमं न सौभाग्य विलोपि जातम्।
एकोहि दोषो गुण सन्निपाते। निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवांकः ॥

रामा ऽऽ॥

रामै भजौ मित्त सुप्रेम भारी। देहैं जु तेरे सब दुख टारी।
सुनेम याही जब सत्य सारो। सुधाम अन्तै हरि के सिधारो ॥

सू०— इसके तीसरे और चौथे पद के आदि के वर्ण लघु हैं। यथा—

कर्पूर गौरं करुणावतारं। संसार सारं भुजगेन्द्र हारं।
सदा वसंतं हृदयारविंदे। भवं भवानी सहितं नमामि ॥१॥
लंकापतेस्संकुचितं यशोयत्। यत्कीर्ति पात्रं रघुराज पुत्रः।
ससर्व्व एवाद्य कवेः प्रभावः। न निंदनीयाः कवयः क्षितीशै ॥२॥

ऋद्धि ।ऽ॥

गुपाल का हा घनश्याम वेई। गोविद नारायण राम जेई।
अनन्त नामै तिनके जगेई। भजैं तिन्हें ते सबही तरेई॥

सू०—इसके दूसरे पद का आदि वर्ण गुरु है यथा—

अपाणि पादो जवनो ग्रहीता पश्यत्य चक्षुःस शृणोत्य कर्णः।
सवेत्तिवेद्य न च तस्य वेत्ता तमाहुरग्रपं पुरुष पुराणम्॥

सिद्धि वा बुद्धि ऽ॥।

कुम्भी उबारो गणिका सु तारी। अजामिलै तार दियो मुरारी।
कियो जिन्होंने बहु पाप भारी। तरे सबैई शरणै तिहारी॥

सू०·· इसके पहले पद के आदि का वर्ण गुरु है यथा—

स्वायत्तमेकांत गुणं विधात्रा। विनिर्मितं छादन मज्ञ तायाः॥
विशेषतः सर्व्वविदां समाजे। विभूषण मौनमपंडितानाम्॥

उपरोक्त चतुर्दश पद्यों की रचना करते समय विशेष ध्यान इस बात पर रखना उचित है कि प्रत्येक पद्य के आदि में तगण वा जगण रहे।

कहीं २ सस्कृत के प्राचीन उपजातियों में ११ वर्ण रहने पर भी गणों का क्रम ठीक ठीक नहीं मिलता, ऐसे प्रयोग भी आर्ष प्रयोग होने के कारण माननीय हैं।

मोटनक (त ज ज ल ग)

ताजी जु लगी मनमों टनकी।

तू जो जल गोप लली भरिकै। दीनो हरि को बिनती करिकै।
तेरी लखिके विरती मन की। भक्ती हरि की मनमो टनकी॥

विरती = वृत्ति। टनकी = समा गई।

चपला (त म ज ल ग)

तू भाजि लोग-लखिहैं चपला।

तू भाजि लोग-लखिहैं चपला। री राखु चाल अपनी सरला।
राखै गुमान मत तू मन में। सीता सतीहि भजुरी मन में॥

विलासिनी (ज र ज ग ग)

जरा जगौ गुनौ विलासिनी है।

जरा जगौ गुपाल को भजोरे। जरा जवै धरै कहा करौरे।
लगाइ पंच गोहि को हरी पै। न चित्त दै कबौं विलासिनी पै॥

जरा=बुढ़ापा। पंच गो=पंच ज्ञानेन्द्रिय। लगाइ पंचगो=लगा ।ऽ के समूह पांच और १ गुरु।

हरिणी (ज ज ज ल ग)

जतीन लगी प्रिय ये हरिणी।

जु राम लगा, मन नित्य भजैं। निकाम रहैं, सब काम तजैं।
बसै तिनके, हिय में सुखदा। मनोहरिणी छबिराम सदा॥

जु राम लगा=जगण तीन और लघु गुरु।

उपस्थित (ज स त ग-ग) ६, ५

उपस्थित सदा, जे संत गंगा।

जु संत गग की, सत्कीर्ति गावैं। त्रि ताप जग के, सारे भगावैं।
सु संग तिनको, है मोदकारो। उपस्थित तहीं, संपत्ति सारो॥

जे संत गंगा=ये सत गंगारूपी। गग=गणेश, गंधर्व। (अन्य नाम-शिखंडिन)

अनुकूला (भ त न ग ग) ५, ६

भीत न गंगा, जहँ अनुकूला।

भीति न गंगा, जग तुव दाया। सेवत तोहीं, मन बचकाया।
नाशहु बेगी, मम भव शूला। हौ तुम माता, जन अनुकूला॥

यह 'भ त न ग ग' का अनकूला वृत्त है।

जन अनुकूला = भक्तों पर दया करने हारी। (अन्य नाम-मौक्तिक माला)
यहां काया शब्द से पंचभूतात्मक शरीर और शूल शब्द से काँम क्रोधादि षट् विकार से अभिप्राय है।

दोधक (भ भ भ ग ग)

भाभि भगी गहि दोधक नीको।

भागुन गो दुहि दे नँदलाला। पाणि गहै कहतीं ब्रजबाला।
दोध करैं सब आरत बानी। या मिस लै घर जाँय सयानी॥

यह तीन 'भगण' और २ गुरु का दोधक वृत्त है।

भागुन गो दुहि=भागो मत गौ दुहि दे। भगण तीन गुरु दो। या मिस=इस बहाने से। दोध = बछड़े। यथा -

देव! सदोधकदम्बतलस्थ, श्रीधर! तावक नाम पदमें।
कंठ तलेऽसुविनिर्गम काले, स्वल्पमपिक्षणमेष्यति योगम्॥

(अन्य नाम-बंधु)

सांद्रुपद (भ त न ग ल)

सांद्रपदै भांतिन गल हार।

भांतिन गौ लेकरहिं जु सेव। हो तिन पै हर्षित सब देव।
कीर्ति ध्वजा संतत फहरात। सांद्र पदै पावत अवदात॥

सांद्रपद=दृढ़ पद। अवदात=सुन्दर।

कली [भ भ भ ल ग]

भाभि भली गुन चंपक कली।

भाभि भली गुन चंपक कली। नाहिम तो महँ तासन भली।
गावत श्यामहिं जोहत कदा। होत प्रफुल्लित मानस तदा॥

ती = स्त्री। कदा = कभी। तदा = तब।

सुमुखी [न ज ज ल ग]

निज जल गोहि भरै सुमुखी।

निज जल गोपि बचाय गली। इत उत देखत जात चली।
हरि न मिले मन होय दुखी। फिरि फिरि हेरि रही सुमुखी॥

वृत्ता [न न स ग ग] ४, ७

न! न! सँग, गहु तिय दुवृत्ता।

न! न! संग, गुजरिन जावौरी। निसि किमि, कुल लजवावौरी।
यसुमति, सुत अति है मत्ता। बरजत, अलि कहि यों वृत्ता॥

अन्य नाम = वृन्ता।

दमनक [न न न ल ग]

न गुण लगत दमनक है।

न तिन लगत कबहुँ धरी। भल जु भजन बिनहिं हरी।
हृदय जवन भवन करी। अघन सघन दमन करी॥

अघन सघन दमन करी = घोर पाप समूहों के नाशकर्त्ता ईश्वर। नगुण लग वा न तिन लग = नगण तीन और लघु गुरु। दमनक = एक वृत्त बिशेष। दमन करी = नाशकर्त्ता।

इंदिरा [न र र ल ग] ६, ५

नरर लोग श्री इन्दिरा कहा।

नरर लोग जो, इंदिरा सदा। लहहिं ना कदा, सौख्य संपदा।
नमत प्रेम सो, पाद पंकजै। नसत पापहूं, भक्ति हू सजै॥

यह 'न र र ल ग' का इन्दिरा वृत्त है।

कहा = क्यों। नरर = नहीं जपते हैं। इन्दिरा = लक्ष्मी। (अन्य नामकनकमंजरी)

अनवसिता [न य भ ग ग]

अनवसिता क्यों (नाय भगैगी)

नय भगु गोरी, या कलि माहीं। अनवसितासी, नारि लखाहीं।
बिन शुभ विद्या, कौन सुधारै। सुजन सुशिक्षा मंजुल धारै॥

अनवसिता = न रहने वाली। क्यों नाय = क्यों नहीं। नय = न्याय। भगु गोरी = भाग गया री।

सुभद्रिका (न न र ल ग)

न नर लगति ये सुभद्रिका ।

न नर लगन कृष्ण सों लगै । कबहुँ न अघ तोहि सों भगै ।
सुन मम बतियां सुभद्रिका । भज हरि बल औ सुभद्रिका ॥

बल=बलराम । सुभद्रिका=कल्याणदायिनी कृष्ण की बहिन ।

बाधाहारी (न ज य ग ग) ७, ४

निजयुग गुंठन, बाधाहारी ।

निज युग गुंठन, बाधाहारी । मिलजुल कारज, कीजे भारी ।
जहँ नहिं राजत, एका पक्का । बिगरत कारज, खावैं धक्का ॥

युग गुंठन=समाज रचना ।

रथपद (न न स ग ग)

रथ पद वहि ननु सो गंगा ।

न निसि गमन किमि देखौरी । रथपद सम छबि लेखौगी ।
सुर सरि लस नभ की रानी । त्रिपथ गमन सुख की खानी ॥

ननु=निश्चय । त्रिपथ=तीनों मार्ग, आकाश मर्त्यलोक और पाताल ।

शिवा (न म य ल ग)

नमिय ला, गाथा शिवा हीय में ।

नमिय ला, गाथा शिवा हीय में । भजहूर पादाम्बुजे जीय में ।
सरन जो ताकी हरै आपदा । मुदित हो देवै सबै सम्पदा ॥

नमिय ला गाथा शिवा हीय में = नमन करना चाहिये लाकर गाथा को (शिवा) पार्वतीजी की अपने हृदय में ।

सूचना-नीचे दो वृत्त लिखे जाते हैं जो दो वृत्तों के संयोग से बनते हैं ।

द्विज [म त त [वा] म भ त] + ग ग

शा०-मैं तो दूंगा, गा अभी शालिनी को । [मततगग]
शा०-भावै नीकी, कृष्ण की कीर्ति गीता ॥ [मततगग]
वा०-मो भांती गा द्विज वातोर्मि कोई । [मभतगग]
शा०-देखूं तेरी, योग्यता आज प्यारे ॥ [मततगग]

यह उपजाति रूप 'द्विज' वृत्त 'म त त ग ग' और म भ त ग ग' अर्थात् शालिनी और वातोर्मि के संयोग से सिद्ध होता है ।

मुक्ति (त त ज (वा) म त त) + ग ग

ई०—ताता जु गादो कहुं इन्द्रवज्रा। (ततजगग)

शा०- मैं तो दूंगा गा अभी शालिनी को ॥ (मततगग)

शा० दोनों भाई विष्णु की कीर्ति गावें। (मततगग)

शा०—छूटे माया, वेगिही मुक्ति पावें ॥ (मततगग)

यह उपजाति रूप 'मुक्ति' वृत्त 'त त ज ग ग' और 'म त त ग ग' अर्थात् इन्द्रवज्रा और शालिनी के संयोग से सिद्ध होता है।

जगती (द्वादशाक्षरावृत्तिः ४०९६)

विद्याधारी (म म म म)

मैं चारौ बंधू गाऊं तौ विद्याधारी।

मैं चारो बंधू गाऊं भक्ती को पाऊं। रे लाभै सारे यामें अन्तै ना जाऊं।
जाने भेदा याको सत्संगा को धारी। वोही सांचो भक्ता सांचो विद्याधारी॥

यह चार मगण का विद्याधारी वृत्त है।

मैं चारों = मगण चार। सारे = समस्त।

टी०—एकभक्त कहता है—मैं चारों भाइयों का अर्थात् राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रघ्न का गुण गान करके भक्ति प्राप्त करूंगा। रे भाइयो! इसी में सब लाभ है मैं दूसरी जगह नहीं जाऊंगा। इस पद्य में 'रे' ला, भै 'सा' आदि पदान्तर्गत वर्णों के 'रे' से राम 'ला' से लक्ष्मण 'भै' से भरत और 'सा' से शत्रघ्न आदि का बोध होता है। पुनः आदि 'रे' से राम और अंत्य 'सा' से सीता का बोध है रे और सा के मध्य में 'लाभ' शब्द है इससे यह सूचित होता है कि सीताराम के भजन से लाभही लाभ होता है। इसका भेद वेही जानते हैं जो सत्संग को धारण करते हैं और वेही सच्चे विद्वान हैं। यह 'मैं चारौं अर्थात्' चार मगण का 'विद्याधारी' वृत्त है। पादान्त में यति है।

भूमिसुता (म म म स) ८, ४

मो मां मों सों वृत्तै भाखौ, भूमि सुता।

मो मां मो सों वृत्तै भाखौ, भूमिसुता। मोहीं रामा दासै जानौ,
सत्य व्रता। आज्ञा स्वामी नाहीं शत्रू, मैं दलतो।
शीघ्रै माता तोही साथै, लै चलतो॥

हनुमानजी की उक्ती जानकीजी प्रति। वृत्तै = समाचार को।

वैश्वदेवी (म म य य) ५, ७

मो माया या है वैश्वदेवी अनूपा ।

मो माया या है, स्त्री खगेशा अनूपा । पै मोहै भक्तो, ना गुहै नारि रूपा । छांड़ौ ज्ञाना जो, है नरा ! क्लिष्ट भारी । साधौ भक्ती रे, वैश्वदेवी सुधारी ॥

क्लिष्ट = कठिन ।

जलधरमाला (म भ स म) ४, ८

मो भासे मां, जलधरमाला येही ।

मो भासै मो, छलि हरि दीन्हों जोगा । ठानो ऊधो, उन कुबजा सों भोगा । सांचो गोपी, मनकर नेहा देखी । प्रेमा भक्ती जलधरमाला लेखी ॥

जलधरमाला = मेघों का समूह ।

भुजंगप्रयात (य य य य)

यचौ युक्त ताता भुजंगप्रयाता ।

यचौं मैं प्रभू तें यही हाथ जोरी । फिरै आपुतें ना कबौं बुद्धि मोरी । भुजंगप्रयातोपमा चित्त जाको । जुरै ना कदा भूलिकै संग ताको ।

यह चार यगण का भुजंगप्रयात वृत्त है,

(तजौ रे मन हरि विमुखन को संग इति भावः)

भुजंगप्रयात=भुजंग की गति । यचौ मैं = याचना करता हूं मैं । यचौ यगण चार । यथा—

बिना गोरसं को रसो भोजनानाम् । बिना गोरसं को रसो भूपतीनाम् ।
बिना गोरसं को रसः पंडितानाम् । बिना गोरसं को रसः कामिनीनाम् ॥
नमामीशमीशान निर्वाण रूपं । विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं ।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं । चिदाकाशमाकाशवासं भजेहं ॥
नमस्तेस्तु, गंगेत्व दंग प्रसंगा भुजंगास्तु रंगाः कुरंगाः प्लवंगाः ।
अनंगारि रंगाः सगंगा शिवांगा भुजंगाधिपांगी कृतांगा भवन्ति ।

सू०-यह वृत्त उर्दू के इस बहर सें मिलता है अर्थात् फऊलुन् फऊलुन् फऊलुन् फऊलुन् यथा—

न छेड़ो हमें दिल दुखाये हुये हैं । जुदाई के सदमे उठाये हुए हैं ।
मेरा घर कहां उनके आने के क़ाबिल । बुलाऊँ अगर हो बुलाने के क़ाबिल ॥

इसके डेवढ़े अर्थात् छः यगण वाले को क्रीड़ाचक्र और दुगने को 'महा-भुजंगप्रयात, कहते हैं । भुजंगप्रयात और भुजंगी वृत्त मिलाकर अर्थात् ७ यगण और एक लघु गुरु का कवियों ने 'वागीश्वरी' नामक वृत्त माना है । यथा—

यचौ राम लागै सदा पाद पद्मै. हिये धारि वागीश्वरी मात को।

यह एक चरण हुआ। इसी प्रकार शेष तीनों चरणों को जानों। भुजंगप्रयात को भुजंगप्रयात पढ़ो। इस वृत्त के लिये एक पुरानी आख्यायिका प्रसिद्ध है। यथा—

छप्पय—श्री विनतासुत देखि, परम पटुता जिन्ह कीन्यउ।
छन्द भेद प्रस्तार, बरणि बातन मन लीन्यउ॥
नष्टोद्दिष्टनि आदि, रीति बहु विध जिन भाख्यो।
जैसौ चलन जनाय, प्रथम वाचापन राख्यो॥
जो छंद भुजंग प्रयात कहि, जात भयो जहँ थल अभय।
तिहि पिंगल नाग नरेश की, सदा जयति जय जयति जय॥

[शैल य य य ज]

यथी याजका क्या करैं जाय शैल।

यथी याजका क्या करें जाय शैल। करैं अश्वनेधै जहां स्वच्छ गेल। सदानन्द धर्मार्थ में दत्त चित्त। नहीं कोई बैरी नहीं कोई मित्त॥

यथी = मेध्याश्व। याजक = पुजारी।

स्रग्विणी [र र र र]

रे चहौं स्रग्विणी मूर्ति गोविंद की।

रार री राधिका श्याम सों क्यों करै। सीख मो मान ले मान काहे धरै। चित्त में सुन्दरो क्रोध ना आनिये स्रग्विणी मूर्त्ति को कृष्ण की धारिये॥

यह चार रगण का स्रग्विणी वृत्त है।

रार = झगड़ा। स्रग्विणी = माला पहिनी हुई।

अच्युतं केशवं रामनारायणं। कृष्ण दामोदरं वासुदेवं हरिम्।
श्रीधरं माधवं गोपिका वल्लभं। जानकी नायकं रामचंद्रं भजे॥१॥
अंगना मंगना मंतरे माधवो। माधवं माधवं चांतरेणांगना।
इत्थमा कल्पने मंडले मध्यगः। वेणुना संजगौ देवकी नंदनः॥२॥

(अन्य नाम = लक्ष्मीधर, शृंगारिणी, लक्ष्मीधरा और कामिनी मोहन)

केहरी [र त म ज]

रात में जे केहरी गर्जत घोर।

रात में जे केहरी गर्जत घोर। जाय भागैं काननैं होतै सुभोर। देवि पूजा कीजिये मेटै विषाद। भक्ति कीजे लीजिये आशीरवाद॥

केहरी = सिंह।

चंद्रवर्त्म [र न भ ग]

चन्द्रवर्त्म लखुरे नभ सहिता ।

रे ! न भासु हर भाल शशि समा । जानि त्यागि हियकी कनक तमा ।
सिंधु रैन नलिनी कहु मुहिरे । चन्द्रवर्त्म लख अन्धकि तुहि रे ॥

न भास = नहीं प्रतीत होता है । कनक = धतूरा । तमा = अन्धेरा, अज्ञान । नलिनी = कुमुदिनी । चन्द्रवर्त्म = चन्द्र किरण ।

तोटक [स स स स]

ससिसों सुअलंकृत तोटक है ।

ससिसों सखियां विनती करतीं । दुक मंद न हो पग तो परतीं ।
हरि के पद अंकनि ढूंढन दे । छिनतो टक लाय निहारन दे ॥

रास क्रीड़ा करते समय गोपियों को गर्वयुक्त देखकर श्रीकृष्ण के अन्तर्धान होने का प्रसंग ।

यह चार सगण का तोटक वृत्त है ।

दुक = थोड़ा । पग तो = पांव तेरे । अंकनि = चिन्हों को यथा —

द्विजराजमुखी मृगराज कटि । गजराज विराजितमंदगति ।
यदि सा ललना हृदयं गमिता । क्व जपः क्व तपः क्व समाधि विधिः ॥
जय राम सदा सुखधाम हरे । रघुनायक सायक चाप धरे ।
भव वारण दारण सिंह प्रभो । गुण सागर नागर नाथ विभो ॥

गिरधारी [स न न य स]

सुनिये सखि गिरधारी बतियां ।

सुनिये सखि गिरधारी बतियां । बिसरीं सब ब्रज केरी रतियां ।
मनमोहन अब कीनी घतियां । उपदेशहिं मिस जारी छतियां ॥

प्रमिताक्षरा [स ज स स]

प्रमिताक्षरा हि सुजसी सब में ।

सजि सो सुपेय घट मोद भरे । चलि आव शौरि ! सखि संग धरे ।
कहिहौं सुधीर हँसि के तुमको । प्रमिताक्षरा जु पय दे हमको ॥

सखाओं की उक्ति श्रीकृष्ण प्रति ।

सुपेय = स्वादिष्ट । सुधीर = पूरा पंडित । शौरि = श्रीकृष्ण । प्रमिताक्षरा = थोड़े शब्द बोलने वाली ।

सारंग (त त त त)

तूतौ तितै बाल ना छेड़ सारंग ।

तू तौ तितै कृष्ण ना जाउ मो बाल । मैं आनि तोकों यहीं देउँ गोपाल ।
सारंग नीके हरे लाल जो भाव । नीलेरु पीले लखौ शुभ्र मो शाव ॥

यशोदा की उक्ति बालकृष्ण से ।

शुभ्र = अच्छे । मों शाव = मेरे प्यारे बच्चे । सारंग = पक्षी ।

(अन्य नाम मैनावली)

बनमाली । (त भ त भ) ४, ४, ४

तू-भा तभी बनमाली भजै जब ।

तू-भा-तभी बनमाली, भजे जब । बीती सभी, सुधरेगो, भला कब ।
गोविंद की, कर भक्ती, अहो निशि । तेरी बनै, यश छावै, चहूं दिशि ॥

इंद्रवंशा (त त ज र)

हैं इन्द्रवंशा जहँ तात जोर है ।

ताता ! जरा आ लख तू विचारि ही । को मार को दे सुख दुःख जीवही ।
संग्राम भारी कर आजु बान सों । रे इंद्रवंशा ! लर कौरवान सों ॥

इन्द्रवंशा = अर्जुन ।

मणिमाला (त य त य) ६, ६

तू यों तय देही जैसे मणिमाला ।

तू यों तय देही, जैसे तप आगी । रामा भजु रामा, पापा सन भागी ।
छांड़ो सब जेते, हैं रे जग जाला । फेरौ प्रभुही की, नामा मणिमाला ॥

तय = तपा । सन = से ।

सुरसरि (त न भ स)

छाई सुरसरि तू नभ सुख सों ।

तू नाभस पद श्री सुरसरि के । धारै निसि दिन जो हित करि कै ।
फैले यश लह संपति सिगरी । जैहै बनि तुव बातहु बिगरी ॥

नाभस = नभ में रहने वाली ।

ललिता (त भ ज र)

तै भाजि रंच ललिता न जा कहूं ।

तैं भाजिरी अलि ! छिपी फिरै कहां । तूही बता थल हरी नहीं जहां ।
बोलो सुशील ललिता सुजानती । खेलौं लुकौअल जु हो पदारती ॥

रती = प्रीति ।

गौरी (त ज ज य)

तीजो जय विश्व चहै भजु गौरी ।

ती जो जय विश्व चहै चिरथाई । गौरी पग रेणु धरै सिरलाई ।
दैहैं द्रुततोष प्रिया स्वइ वामा । बेगी जय लाभ सदा सब कामा ॥

विश्व = संसार । द्रुततोषप्रिया = आशुतोष शिव की प्रिया पार्वतीजी ।
चिरथाई = चिरस्थाई ।

वाहिनी (त म म य) ७, ५

तो मो मया ही त्यागौ, जो वाहिनी है।

तो मो मयाही त्यागौ, जो वाहिनी है। सीता भजौ सीता को, जो दाहिनी है।
जे जानहीं संसारै, एकै घराना। ते भेद त्यागे गावैं, श्री अंब गाना॥

वाहिनी = बहने या बहाने वाली।

भीम (त भ म ज)

तू भीम जुद्ध कला। जानै अनूप।

तू भीम जुद्ध कला, जानै अनूप। तो बंधु धर्म बढ़ो, धर्मस्वरूप।
मानो सिखापन जो, देवैं सुधीर। पूरो मनोरथ हू ह्वै हैं सु वीर॥

मोतियदाम (ज ज ज ज)

जँचौ सियराम सु मोतिय दाम।

जँचौ रघुनाथ धरे धनु हाथ। बिराजत सानुज जानकि साथ।
सदा जिनके सुठि आठहुँ याम। बिराजत कण्ठ सु मोतियदाम॥

यह चार जगण का मोतियदाम वृत्त है।

जचौ = याचना करौ जगण चार। मोतियदाम = मोतियों की लड़ी वा माला। इसी के दुगने को मुक्तहरा कहते हैं।

वंशस्थविलं [ज त ज र]

सुजान वंशस्थविलं जता जरा।

जिती जुरावै निज पीय भावती। तिती सुखी हो गति नीक पावती।
प्रथा जु वंशस्थ विलंधि धावती। नसाय तीनों कुल का लजावती॥

जिती = जितनी। जुरावै = जुड़ावै, खुश करे। भावती = प्यारी स्त्री, श्रेष्ठ स्त्री। प्रथा = पद्धति। विलंधि = छोड़कर। यथा –

प्रसन्नतां यो न गतोऽभिषेकतस्। तथा न मम्लो वनवास दुःखतः।
मुखाम्बुजं श्रीरघुनन्दनस्य मे। सदास्तु तन्मंजुलमंगलप्रदम्॥१॥
नमोऽस्त्वनंताय सहस्र मूर्तये। सहस्र पादाक्षि शिरोरु बाहवे।
सहस्र नाम्ने पुरुषाय शाश्वते। सहस्र कोटी युगधारिणेनमः॥२॥
सुतं पतंतं प्रसमीक्ष्य पावके, न बोधयामास पतिं पतिव्रता।
पतिव्रता शाप भयेन पीड़िता, हुताशनश्चंदन पंक शीतलः॥

वंशस्थविलम और इन्द्रवंशा के मेल से जो वृत्त सिद्ध होता है उसे माधव कहते हैं।

माधव [ज त ज र + त त ज र]

वंशेन्द्र वंशायुत गाव माधवै।

जितै जरा शोक न मोह हो कभी। ताता जुरै इच्छित सम्पदा सभी।
खुलैं हिये लोचन मुक्ति हो भली। गा तू सदा माधव की गुणावली।

जितै = जीत लेवे । जरा = वृद्धावस्था । जुरै = प्राप्त हो ।

यह उपजाति रूप वृत 'ज त ज र' वा त त ज र' के अर्थात् वंशस्थविलम और इन्द्रवंशा के मेल से सिद्ध होता है जैसे इन्द्रवज्रा और इन्द्रवंशा के मेल से १४ उपजाति हो सकते हैं । परन्तु अनेक भेदोपभेद करने की आवश्यकता नहीं है । ऐसे प्रत्येक भेद को मुख्य नाम 'माधव' के अन्तर्गत ही मानना अलम् है । पादान्त में यति है ।

जलोद्धतगतिः (ज स ज स) ६, ६

जु साज सहिता, जलोद्धतगती ।

जु साजि सुपली, हरीहिं सिर में । पिता धसत भे, निशीथ जल में ।
प्रभू चरण को, छुआं जमुन में । जलोद्धतगती, हरी छिनक में ॥

सुपली = टोकनी । निशीथ = आधीरात । जलोद्धतगति = जल के बढ़ने की गति ।

धारी (ज ज ज य)

जतीन यही नित नेमहिं धारी ।

जु काल यहैं छबि देखत बीते । तुम्हार प्रभू गुण गावत ही ते ।
कृपा करि देहु वहै गिरधारी । यचौं कर जोरि सुभक्ति तिहारी ॥

जु काल य = जगण तीन और यगण । हीते = अंतःकरण से ।

मोदक (भ भ भ भ)

भा चहु बोर न खा मन मोदक ।

भा चहु पार जु भौ-निधि रावन । तौ गहु रामपदै अति पावन ।
आय धरै प्रभु लै चरणोदक । भूख भगै न भखे मन मोदक ॥

यह चार भगण का मोदक वृत्त है । अंगद की उक्ति रावण प्रति—
भाचहु = होना चाहे, भगण चार । मोदक = लड्डू ।

सौरभ (भ ज स स)

भा जस सदैव सह सौरभ है ।

भा जस सदैव सह सौरभ है । माधव सु गान युत ही शुभहै ।
श्रीगुरु सुमंत्र धरिये चितही । केशव सुनाम जपिये नितही ॥

सौरभ = सुगंध ।

ललना [भ ग स स] ५, ७

भाम ससी क्यों, घूमत री ललना।

भूमि सिसू धौं, धावत री सजनी। मैं कब देखौं, भापत यों जननी।
डारत सोये, रेसम के पलना। चारिउ भैया, फूलन से ललना॥

कांतोत्पीड़ा [म म स म]

भौम समा प्यारे, यह कांतोत्पीड़ा।

भौम समा प्यारे, यह कांतोत्पीड़ा। राखत श्री देवी, जनकी है ब्रीड़ा।
ध्यावत जो ताही, अरु भक्ती धारै। सो छमि के दोषै, भव बाधा टारै॥

भौम=मंगल। कांत। उत्पीड़ा=वियोगदुःख। ब्रीड़ा - लाज।

दान [भ स ज स]

भू सजु सुख मान दान सहिता।

भू सजु सुख मान दान सहिता। सेवहु सब साधु गर्व रहिता।
गावहु हरि नाम प्रेम धरिये। पावहु हरि धाम शीघ्र तरिये॥

भू=पृथ्वी।

पवन [भ त न स] ५, ७

भा-तन-सोहै, पवन तनय की।

भा-तन-सोहै, पवन तनय की। बाणि गही है नसन अनय की।
श्री बजरंगी, नित सिय पिय के। द्वार खड़े हैं, हरि रस पिय के॥

भा-तेज। नसन = नाश करना। अनय की = अन्याय की।

मदनारी [भ स न य] ६, ६

भूषन यहि है, अहि मदनारी।

भूसन यहि है, अहि मदनारी। भस्म लसति है, तन दुति भारी।
भक्त जनन को अति सुखकारी। धन्य भजत जो, नित त्रिपुरारी॥

भूसन=भूषण। अहि=सर्प। मदनारी=मदन के अरि महादेव। दुति=तेज।

तामरस [न ज ज य]

निज जय काहि न तामरसै सो।

निज जय हेतु करौं रघुवीरा। तव नुति मोरि हरौ भव पीरा।
मम मन-तामरसै प्रभु धामा। करहु सदा विभु पूरण कामा॥

नुति=स्तुति। विभु=निग्रहानुग्रहसमर्थ, पूर्णकाम। तामरस = कमल, सुवर्ण।

सुन्दरी (न भ भ र)

नभ भरी विधु भासन सुन्दरी ।

नभ भरी विधु भासन आगरी । मुख प्रभा बहु भूषित नागरी ।
भज न जो सखि बालमुकुन्दरी । जग न सोहत यद्यपि सुन्दरी ॥

नभ भरी विधु भासन आगरी=आकाश में भरी हुई चन्द्रप्रभा से बढ़कर । यथा —

इतर पाप फलानि यदृच्छया । वितर तानि सहे चतुरानन ।
अरसिकेषु कवित्व निवेदनं । शिरसि मालिख मालिख मालिख ॥
(अन्य नाम=द्रुतविलम्बित)

मंदाकिनी (न न र र) ८, ४

न नर रटत काह, मंदाकिनी ।

न नर ! रहत सेय, मंदाकिनी । अघ निकर जु भेक, भू अंगिनी ।
कृत जहँ सियराम, बासा फनी । जग महँ महिमा जु, सोहै घनी ॥

अघ निकर जु भेक भूअंगिनी=पाप समूह रूप भेकों की नाशकर्त्री सर्परूपिणी । फणी=लक्ष्मणजी । मंदाकिनी=गंगाजी ।
(अन्य नाम=चंचलाक्षिका)

वृत्त रत्नाकर रचयिता के मत से प्रमुदित बदना और मल्लिनाथजी के मत से इसी को कोई २ प्रभा भी कहते हैं ।

ललित (न न म र)

ललित न नमरे श्यामै ध्यावरे ।

न निमि रह चखा सीता ज्यौं लखा । रघुबर सु सखा राख्यो जो मखा ।
ललित जिन सिया की शोभा लखी । अमरतिय कहैं सो धन्या सखी ॥

निमि=जनक राजा के पूर्वज । चखा=नेत्रों में । मख=यज्ञ ।
अमरतिय=देवांगना । (अन्य नाम तत)

कुसुमविचित्रा (न य न य) ६, ६

नय नय धारौ, कुसुम विचित्रा ।

नयन यही तें, तुम बदनामा । हरि छबि देखौ, किन बसु जामा ।
अनुज समेता, जनक दुलारी । कुसुम विचित्रा, जग फुलवारी ॥

यह नवनय का कुसुमविचित्रा वृत्त है ।
नयन=नेत्र, न्यायशून्य । बसुजामा=आठौ पहर ।

मालती (न ज ज र) ७, ५

निज जर बंधन, जान मालती ।

निज जर आपुहिं, मूढ़ कटाहीं । विमुख प्रभू रहि जन्म नासहीं ।
अधर अमी चख, कञ्ज राजती । कहि कहि लागत छन्द मालती ॥

जर=जड़ । अधर=होंठ । राजती=शोभित है । मालती=स्त्री । यदि ६, ६ पर यति हो तो इसी को वरतनु' कहेंगे ।

(अन्य नाम=यमुना)

पुट (न न म य) ८, ४

ननु मय पुट कीजे, हे सुजाना ।

न न मयदुहिता में, तोरि बानी । सुनहुँ कहि सभा गो तू दिवानी ।
श्रवण पुट करीना, जान रानी । रघुपति कर याकी, मीचु ठानी ॥

न न=नहीं नहीं । ननु=निश्चयपूर्वक । मयदुहिता=मंदोदरी । मीच=मृत्यु । पुट=मिलाव, निकटवर्ती करना ।

प्रियंवदा [न भ ज र] ४, ४, ४

न भजु रे, किमि सिया, प्रियंवदा ।

न भजु रे, हरिजु सों, कबौं नरा । जिहि भजैं, हर बिधी, सुनिर्जरा ।
सह सिया, जनकजा, प्रियंवदा । जनहिं जो, नित अहैं, सुशर्मदा ॥

न भजुरे=न भाग रे । निर्जरा=देवगण । प्रियंवदा=मीठे बचन बोलने वाली । सुशर्मदा=कल्याणकारिणी ।

द्रुतपद [न भ न य]

न भनिये कहुँ द्रुतपद पोचे ।

न भनिये कहुँ द्रुतपद पोचे । कहु न मीत बचन बिन सोचे ।
मधुर बैन कहिय अति दीने । सरल मंत्र जगत बस कीने ॥

न भनिये कहुं द्रुतपद पोचे=नहीं कहना चाहिये कहीं शीघ्र बचन सारहीन । कहीं २ इस वृत्त का लक्षण 'न भ ज य' भी मिलता है ।

नवमालिनी [न ज भ य] ८, ४

पद नवमालिनीहुँ, निज भायो ।

निज भय छांड़ि चीन्ह, हनु लीजै । अहि महि नाथ आजु, बल दीजे ।
किमि हनु तो प्रवेश, इहिं काला । प्रभु ! नवमालिनीसु, फुलमाला ॥

अहि महि=अहिरावण महिरावण । हनु=हनुमानजी ।

(अन्य नाम=नवमालिका)

निवास (न न र ज)

न नर जपत क्यों रमा निवास ।

न नर जपत क्यों रमा निवास । भटकत जग क्यों फिरै उदास ।
जब लग हरि सों लगै न प्रीत । तब लग मन हो सुखी न मीत ॥

रमेश (न य न ज)

नयन जु देखौ चरित रमेश ।

नयन जु देखौ चरित रमेश । पद रति राखौ सुजन हमेश ।
सुनिय सदा सुंदर रस खान । मधुर कथा पावन भगवान ॥

उज्ज्वला (न न भ र) ७, ५

न नभ रह सदा, निसि उज्ज्वला ।

न नभ रघुवरा, भन भूसुरा । लसत रवि दुती, वरणौं फुरा ।
धरणि तल जबै, मिलना थला । भरति यशलता, अति उज्ज्वला ॥
भन = कहता है । दुति=तेज । भूसुर=ब्राह्मण ।

नभ (न य स स)

नय ससि को दूज लखे नभ में ।

नय ससि को दूज लखे नभ में । लस शिव के भाल सुहावन में ।
गुरुजनहू आदर जाहि दिये । जउ लखिये वक्र तऊ नमिये ॥
नय = सिर झुकाते हैं । वक्र=टेढ़ा ।

श्रीपद (न त ज य) ४, ८

न तजिये, श्री पद पद्म प्रभू के ।

न तजिये, श्रीपद पद्म प्रभू के । सु भजिये, पावन नाम अचूके ।
शरण जो, होत सभक्ति हरी को । तरत सो, सत्वर भांति करी की ॥
अचूके=विना भूल । सत्वर=जल्दी । करीकी = हाथी की ।

मानस (न य भ स) ६, ६

नय भसु ही में, मानस कहिये ।

नय भसु ही में, मानस कहिये । जहँ नय नाहीं, तामस लहिये ।
जय सतही की, जानहु मन में । नहिं भय कोई, सत्य बचन में ॥
नय भसु ही में = न्याय भासमान होता है हृदय में ।

सुमति (न र न य)

नरन याहि री सुमति सुनीकी ।

नरन याहि री सुमति सुनीकी । मगन कीर्त्ति में नित सिय पीकी ।
भजन भाव को परम महाना । लहट लीन ह्वै परम सुजाना ॥

राधारमण (न न म स)

न नम सुघर क्यों राधा रमणा ।

न नम सुघर क्यों राधा रमणा । रहत न किमि हे ताता शरणा ।
विसरत हरि को होवै कुगती । भजन करहु तो होवै सुगती ॥

वासना (न स ज र)

नसि जर कुवासना हरी भजो ।

नसि जर कुवासना हरी भजो । अहमिति विकारही सभी तजो ।
पुनि कछुक दीन को दिया करो । नित प्रभु सुनाम को लिया करो ॥

जर=जड़ मूल । अहमिति=मैं ही हूं ऐसा ।

साधु (न स त ज ७, ५

नसति जड़ बाधा, संगति साधु ।

नसति जड़ बाधा, संगति साधु । गहत पल आधा, आधहु आधु ।
चरण रति होते, पातक जाहिं । लहत सुख भारी, या जग माहिं ॥

तारिणी [न म य स]

नस यसहिं तारिणी जो न भजै ।

नस यसहिं तारिणी जो न भजै । अस समुझि सर्व्वदा सीय भजै ।
जन भजत नित्य जो राम सिया । तिन यम निवास को जीत लिया ।

नस यसहिं=नाश करती है यश को ।

तरलनयन [न न न न] ६, ६

नचहु धरिक तरल नयन ।

नचतु सुघर, सखिन सहित । थिरकि थिरकि फिरत मुदित ।
तरल नयन, नवल युवति । सुहरि दरस, अमिय पिवति ॥

तरल नयन=चंचल नेत्र । नचतु=नगण चार ।

अतिजगती (त्रयोदशाक्षरावृतिः ८१९२)

माया (म त य स ग) ४, ९

माता यासों गा कछु जोगी किय माया ।

माता ! यासों, गा कछु जोगी छल कीन्हें ।
रोवै कान्हा, मानत री ना कछु दीन्हें ।
कोऊ बोली, ता कहँ लै आव सयानी ।
माया या पै, डार दई री हम जानी ॥

यशोदा की उक्ति किसी गोपी से ।
गा = गाकर । (अन्य नाम मत्तमयूर)

विलासी (म त म म ग) ५, ३, ५

मीता मो मो गा, विलासी, भूल्यो संसारा ।

मीता मो मो गा, विलासी, भूल्यो संसारा ।
गावै क्यों नाहीं, जनों के, जो मूलाधारा ।
भूलौ न प्यारे, तिहारो, लागै ना दामा ।
पैहौ विश्रामा, भजो जो, श्री सीतारामा ॥

प्रहर्षिणी (म न ज र ग) ३, १०

मानो जू रंगमहलों प्रहर्षिणी है ।

मानोजू, रँग रहि प्रेम में तुम्हारे ।
प्राणों के, तुमहिं अधार हौ हमारे ।
वैसोही, विरचहु रास हे कन्हाई ।
भावै जो, शरद प्रहर्षिणी जुन्हाई ॥

जुन्हाई = चांदनी रात ।

कंदुक (य य य य ग)

यचौ गाइकै श्याम की कंदुकी क्रीड़ा ।

यचौ गाइकै कृष्ण राधा दुहूं साथा ।
भजौ पाद पाथोज नैके सदा माथा ।
धरो रूप वाराह धारी मही माथा ।
लियो कन्दुकै काज काली अहीनाथा ॥

यचौगाइकै = यांचना करो गाकर, यगण चार और गुरु एक ।
पाथोज = कमल । नैके = नवायकर ।

कंद (य य य य ल)

यचौ लाइकै चित्त आनन्दकन्दाहिं ।

यचौ लाइकै चित्त आनन्द कन्दाहिं ।
सुभक्ती निजा नाथ ! दीजे अनाथाहिं ।
हरे ! राम ! हे राम ! हे राम ! हे राम ।
हिये दास के आय कीजे सदा धाम ॥

यचौ लाइकै = यगण चार और लघु एक । निजा (स्त्रीलिंग)=अपनी ।

चंचरीकावली (य म र र ग) ६, ७

यमौ रे–रागौ क्यों, चंचरीकावली ज्यों ।

यमौ रे ! रागोंमें, जन्म काहे गमावौ ।
न भूलो माधो को, धर्म में चित्त लावौ ।
लखो या पृथ्वी को, वाटिका चंपकी ज्यों ।
बसौ रागे त्यागे, चंचरीकावली ज्यों ॥

यमों = निर्वैरता, सत्यालाप, चोरी त्याग, वीर्यरक्षा और विषय भोगादिकों से घृणा, इन पांच यमों का सेवन करो । रागों में = विषय वासनाओं में । चंचरीकावली = भँवरों की पंक्ति ।

सुरेन्द्र (य म न न ग) ५, ८

सुरेन्द्रै लख्यौ, यामुन नग जहँवा ।

यमी नाना गा, ध्यावत जिहिं रति सों ।
सुरेन्द्रै सोऊ, जांचत अजपति सों ।
हमारी शिक्षा, मानि भजहु नितही ।
मुरारी जी को, जो चहु निज हितही ॥

यामुन नग = गोवर्धन पर्वत । यमी नाना गा = यम धारण करनेहारे बहुत से गा गाकर ।

राधा (र त म य ग) ८, ५

रे तु माया गोपिनाथा, ध्याय ले राधा ।

रे तु माया गोपिनाथा, जानिकै भारी ।
भूलि सारी त्यागि कै लै, आपको तारी ।
प्रेम सों तू नित्य प्यारे, छांड़ि कै रागा ।
कृष्ण राधा कृष्ण राधा, कृष्ण राधा गा ॥

राग (र ज र ज ग)

रे जरा जगौ सुमीत राग गाव रे ।
रे जग जगो न नींद गाढ़ सोव रे ।
पाय देह मानुषी, न जन्म खोव रे ।
ह्वै अनन्द राग गा सुमुक्ति पाव रे ।
राम राम राम राम राम गाव रे ॥

इसकी दूसरी व्युत्पत्ति-'नंद ऽ। × राग ६+गा' से भी प्रगट होती है ।

तारक (स स स स ग)

ससि सीस गहे स्वइ, तारक भारी
ससि सीस गरे नर मांल पुरारी ।
सुनिये सति नाथ पुकार हमारी ।
पढ़ि पिंगल छंद रचैं सब कोई ।
करतार करौ सुभ वासर सोई ॥

वासर=दिन । तारक=तारा, तारनेवाला

मंजुभाषिणी [स ज स ज ग]

सजि साज गौरि वद मंजुभाषिणी ।
सजि साज गौरि सदनै गई लिये । कर पुष्प माल सिय मांगती हिये ।
वर देहु राम जन तोष कारिणी । सुनि एवमस्तु वद मंजुभाषिणी ॥

सदनै=घर में। वद=कहती हैं । (अन्य नाम-कनकप्रभा, सुनंदिनी प्रबोधिता और कोमलालापिनी)

कलहंस [स ज स स ग]

सजि सी सिंगार कलहंस गती सी ।
सजि सी सिंगार कलहंस गती सी ।
चलि आइ राम छवि मंडप दीसी ।
जयमाल हर्षि जब ही मँह डारी ।
सुर लोग हर्ष खल-भूप दुखारी ॥

सी=सीता । कलहंस=सुन्दर हंस । दीसी=दिखी । ही मँह=हृदय में । डारी=पहिनादी । खल भूप=रावणादि दुष्ट राजे ।
(अन्य नाम-सिंहनाद, नंदिनी, सिंहनी, कुटजा)

प्रभावती [त भ स ज म] ४, ६

ती-भास-जो, गुण सहिता प्रभावती ।
ती-भास जो, गुण सहिता प्रभावती ।
साध्वी महा, निज पिय को रिझावती ।

मीठी गिरा, कहति सदा सुहावती ।
धन्या वही, द्वउ कुल को अघावती ॥

ती = स्त्री । भास = प्रतीत होती है । साध्वी = साधु गुण सम्पन्ना ॥ अघावती = प्रसन्न करती है ।

त्राता (त य य म ग) ६, ७

तू या यम गावै, न गावै काहे त्राता ।

तू या यम गावै, न गावै काहे त्राता ।
रामा भजु रामा, वही है शांती दाता ।
छांड़ौ छल छिद्रा बिहावो सारे कामा ।
तोरी बनि जैहै, जु गावै नीको नामा ॥

या यम = इस यमराज को । बिहावो = छोड़ो ।

रुचिरा (ज भ स ज ग) ४, ६

जु भास जी, गहिं रुचिरा सँवारिये ।

जु भास जी, गगहिं न योग सों कदा ।
सुभक्ति सों, हिय बस रामजू सदा ।
सुधन्य जो, छबि रुचिरा हिये धरैं ।
न वे कबौं, यहि भव जाल में परैं ॥

जी गणहिं = जीवगणों को । (अन्य नाम-प्रभावती)

कंजअवलि (भ न ज ज ल)

कंजअवलि खिल 'भानुज जो लखि' ।

भानुज जल महँ आय परै जब । कंजअवलि विकसैं सर में तब ।
त्यों रघुबर पुर आय गये जब । नारिऽरु नर प्रमुदे लखि के सब ॥

भानुज = सूर्य्य की किरणें । कंजअवलि विकसैं = कमल पंक्तियां विकसित होती हैं । प्रमुदे = आनंदित हुए (अन्य नाम-पंकजअवलि, पंकावली, एकावली पंकजवाटिका)

चंडी (न न स स ग)

न नसु सिगरि भज ले नर चंडी ।

न नसु सिगरि नर ! आयु तु अल्पा ।
भजि निशिदिन सुविलासिनि तल्पा ।
कुबुध- कुजन अघ ओघन खंडी ।
भजहु भजहु जन पालिनि चंडी ॥

सुविलासिनि = सुन्दर स्त्री । तल्पा = शय्या ।

चन्दरेखा [न स र र ग] ६, ७

निसि रुरु गता, जानिये चन्द्ररेखा।

निसि रुरुगता, जानिये चन्दरेखा।
विनु हरि कृपा, को कहै सत्यलेखा॥
लखि यह गती, जो विधाता रची है।
सुर नर थके, बुद्धि सारी पची है॥

रुरु = मृग। जानना चाहिये कि चन्द्र का नाम मृगलाञ्छन भी है।

चन्द्रिका [न न त त ग] ७, ६

न नित तगि कहूँ, देखिये चंद्रिका।

न नित तगि कहूँ, आन को धावरे।
भजहु हर घरी, राम को बावरे॥
लखन जु भजौ, मातु सीता सती।
वदन दुति लखे, चन्द्रिका लाजती॥

तगि = भटक कर। दुति = प्रकाश। (अन्य नाम--उत्पलिनी, विद्युत् कुटिलगति)

मृगेन्द्रमुख [न ज ज र ग]

परत मृगेन्द्रमुखै 'नजा जु रोगी'।

निज जर गंजत जो सुमार्ग त्यागे। सु यम मृगेन्द्रमुखै परैं अभागे॥
कपट विहाय भजै जु सीय रामा। अघहिं नसाय लहै अनूप धामा॥

मृगेन्द्रमुखै = सिंह के मुख में। गंजत = नाश करते हैं।

पुष्पमाला [न न र र ग] ६, ४

न नर रँगहिं मानिये, पुष्पमाला।

न नर रँगहिं मानिये, पुष्पमाला। यदपि लसत चित्र हैं, चित्रशाला॥
कुशल नरनि कौशलै, देख भूला। गुणत कस न ईश जो, सर्व मूला॥

क्षमा [न न ज त ग]

ननु जित गरब साधु धारैं क्षमा।

न निज तिगम सुभाव छांड़ैं खला। यदपि नित उठ पाव ताको फला॥
तिमि न सुजन समाज धारै तमा। जग जिनकर सुसाज नीती क्षमा॥

ननु = निश्चय। तिगम--तीक्ष्ण। तमा = अज्ञान।

कहीं २ इसका लक्षण 'न न त त ग' भी कहा है परन्तु देखो चंद्रिका वृत्त। यति पादान्त में है। कोई कोई ७, ६ पर भी यति रखते हैं।

शर्करी (चतुर्थदशाक्षरावृतिः १६३८४)

वासन्ती [म त न म ग ग] ६, ८

माता नौ मैं गंग, सरस राजै वासन्ती ।

माता ! नौ मैं गंग, चरण तोरे त्रैकाला ।
नासौ वेगी दुःख, विपुल औरौ जंजाला ।
जाके तीरा राम, पहिर भूर्जा की छाला ।
भू कन्या को देत, सुमन वासन्ती माला ॥

यह 'म त न म ग ग' का वासती वृत्त है ।

नौ मैं = नमन करता हूं मैं । भू कन्या = श्रीमती जानकी जी । भूर्जा छाला = भोजपत्र । वृत्तरत्नाकर में इसकी व्युत्पत्ति 'म त न य ग ग' कही है यति निर्धारित नहीं है, ६, ८ पर ठीक प्रतीत होती है ।

असम्बाधा [म त न स ग ग] ५, ६

माता नासौगी, गहन भव असंबाधा ।

माता ! नासौगी, गहन कबहि मो पीरा ।
हे गंगे ! माँगौं, चरण शरण तो तीरा ।
गावौं तेरोही, गुण निसिदिन बे बाधा ।
पावौं बेगी ज्यों, गति परम असम्बाधा ॥

गहन = कठिन । असम्बाधा = निर्बाधा ।

मध्यश्यामा [म भ न य ग ग] ४, १०

मो भा नाये, गगरि धरत मध्यश्यामा ।

मो भा नाये, गगरि धरत मध्यश्यामा ।
भीती लागै, कटि लचकत कैसी रामा ।
स्वामी सेवा, करति सतत भोरी बामा ।
बाला नीकी, सरल प्रकृति सोहै धामा ।

मो भा नाये, गगरि धरत = मुझे भाता नहीं है, इसका गगरी धरना । मध्यश्यामा = पतली कमर वाली । भीती = भय ।

लोला [म स म भ ग ग] ७, ७

माँ सोमौ भगु गोरी ! देखे आनन लोला ।

माँ सोमौ भगु गोरी ? काहू ती मुख देखे ।
सिंहौरी कटि जोहे, हस्ती चालहि पेखे ॥

लोला सी मृदुबैना, पूछै बाल नवीना।
बोली मातु फबै ना, बाणी नीति बिहीना॥

माँ = हे माता। सोमौ भगु गो री! = क्या चन्द्र भी भाग गया?
ती = स्त्री। लोला = चंचल।

चन्द्रौरसः (म भ न य ल ग)

मो भौने या लगत सुघर चन्द्रौरसा।
मो भौने या लगत सुघर चन्द्रौरसा।
देखौ सोने सरिस सु तनु कैसे लसा॥
सोभा न्यारी ललित बदन का है सखी।
भूलै नाहीं छिन छबि जिन याकी लखी॥

भौने = घर में। चंद्रौरसः = चन्द्र का पुत्र

रेवा (म स त न ग ग)

माँ सातौं नग गावैं कीरति तुव रेवा।
माँ सातौं नग गावैं कीरति तुव रेवा।
ना जानै सुर बृन्दौ रंचक तुव भेवा॥
कन्या मेकल धन्या कीजिय तनि दाया।
चेरो तो पद पद्मा मैं मन बचकाया॥

सातौं नग = सातौं पर्व्वत। रेवा = नर्मदा। कन्या मेकल = पुत्री मेकल पर्वत की। तो = तेरा। (अन्य नाम-लक्ष्मी) पाया जाता है परंतु लक्ष्मी नामक अन्य वृत्त भी है।

कुटिल (स भ न य ग ग) ४, १०

सुभ ना ये, गगन कुटिल ध्यावौ रामा।
सुभ नायो, गगरिक तुव गंगा! पानी।
जिन शंभू, सिर जननि! दया की खानी॥
तजि सारे, कुटिलन कपटी को साथा।
तिन पाई, अति शुभ गति गावैं गाथा॥

नायो = डाला। गाथा = पुराणादि।

मंजरी (स ज स य ल ग) ५, ६

सजि सीय लै, गवनि ज्यों सखी मंजरी।
सजि सीय लै, गवनि ज्यों सखी मंडपा।
सुखमा लखे, रति मयंक लागी त्रपा॥

रघुनाथ के, नयन जोह ज्यों चंचरी ।
सुवितान त्यों, लभत आम्र की मंजरी ॥

यह 'स ज स य ल ग' का मंजरी वृत्त है ।

सुखमा = शोभा । मयंक = चंद्रमा । त्रपा = लाज । चंचरी = भ्रमर । जोह = देखदेख कर । सुवितान = सुन्दर मंडप में । (अन्य नाम -वसुधा, यथा)

मनोरम [स स स स ल ल]

ससि सीस लला अवलोक मनोरम ।
ससि सीस लला अवलोक मनोरम ।
कमनीय कला छकि जात न को रम ॥
विधि की रचना सब के मन भावन ।
जग में प्रगटो यह रत्न सुहावन ॥

कमनीय = सुन्दर ।

मंगली [स स ज र ल ग] ३, ६. ५

ससि जो, रलंगत होत, वृत्त मंगली ।
ससि जो, रलमंत होत, वृत मंगली ।
विलसै, सब साज बाज, साथ मंडली ॥
जग को, सत संग पंथ, देत यों लखा ।
जिहि सों, सुख शांति होय, प्रेम सों सखा ॥

रल = मृग ।

प्रतिभा [स भ त न ग ग] ८, ६

प्रतिभा है कवि माहीं 'सुभ तन गंगा' ।
सुभ तौ नाग गरे जो, भजु सह भक्ती ।
प्रतिभा हो तब नीकी, अरु शुभ शक्ती ।
लहि नैपुण्यहिं सोई, हरि यश गावै ।
कविता सो रस खानी, सुनत सुहावै ॥

सुभ तौ नाग गरे जो=शुभ तो वही है कि जिनके गले में नाग लपटा है अर्थात् महादेवजी को । प्रतिभा = बुद्धि की तेजी ।

वसंततिलका [त भ ज ज ग ग]

जानौ वसंततिलका 'तु भजौ जगौ गा' ।
तैं भोज जोग गुनिकै कहु लाभ हानी ।
यों मुञ्ज बात सुनिकै कह दैव ज्ञानी ॥

ह्वै है सुदानि जग पै लह विज्ञ माँगे ।
हो सर्वसंत तिलका लखि मोद पागे ॥

यह 'त भ ज ज ग ग' का वसन्ततिलका वृत्त है ।

मुंज=भोज का चाचा । दैवज्ञानी=ज्योतिषी । (अन्य नाम-उद्धर्षिणी सिंहोन्नता वसततिलक प्रभृति) श्रुतबोध में ८, ६ पर यति है परन्तु हलायुधने पदांत में यति मानी है पदांत में यति प्रमाणिक प्रतीत होती है । यथा —

यां चिंतयामि सततं मयिसा विरक्ता । साप्यन्यमिच्छति जनं सजनोऽन्य सक्तः ।
अस्मत्कृतेतु परितुष्यति काचिदन्या । धिक तांचतंच मदनंच इमांच मांच ॥१॥
उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी । दैवं प्रधानमिति कापुरुषावदंति ।
दैवं विहाय कुरुपौरुषमात्म शक्त्या । यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोऽत्र दोषः ॥२॥
निन्दन्तु नीतिनिपुणायदिवास्तुवंतु । लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वायथेष्टम् ।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगांतरेवा । न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥३॥
किंतेन हेमगिरिणा रजतादिणावा । यत्राश्रिताश्चतरवस्तरवस्तथैव ।
मन्यामहे मलयमेव परं तदीयाः । शाकोटनिवकुटजा अपि चंदनाः स्युः ॥ ४ ॥
रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं । भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्री ।
इत्थं विचिन्त यति कोशगतेद्विरेफे । हा हन्त ! हन्त ! नलिनी गज उज्जहार ॥५॥
नाना पुराण निगमागम सम्मतं य । द्रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ।
स्वान्तस्सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा । भाषा निबंधमति मंजुलमातनोति ॥ ६ ॥

मुकुंद [त भ ज ज ग ल] ८, ६

तैं भोज जोग लहि के, भजले मुकुन्द ।
तैं भोज जोग लहि के, भजले मुकुंद ।
जानो असार जगती, जिमि वारि बुन्द ॥
माया प्रपंच तजि के, उर शांति धार ।
काया मनुश्य अपनी, अब तू सुधार ॥

(अन्य नाम हरिलीला)

अनंद [ज र ज र ल ग]

जरा जरा लगाय चित्त ले अनन्द तू ।
जरा जरा लगाय चित्त मित्त नित्तहीं ।
सिया पती भजौ भजौ विचार हित्तहीं ॥
मनै लगा सतै गुणानुवाद गाइये ।
सदा लहौ अनंद राम धाम पाइये ॥

इसी की दूसरी व्युत्पत्ति 'लगा सतै' से प्रगट होती है, अर्थात् लघु गुरु सात बार आने से 'अनन्द' वृत्त सिद्ध होता है ।

इन्दुवदना [भ ज स न ग ग]

भौजि सुनु गंग छबि इन्दुवदनासी।
भौजि ! सुनु गागरि न पैहहु उतारी।
बन्धु मम नाम जब ताँइ न उचारी॥
इन्दुवदना वदत जाउँ बलहारी।
जान मुहिं दे घरहिं बेगहिं बिहारी॥

जब ताँइन = जब तक नहीं। बल = बलरामजी। बलहारी = हे बल मैं हारी, न्योछावर गई।

चक्र [भ न न न ल ग] ७, ७

चक्र चलत रव, भननन लगही।
भौननि न लगत, कतहुँ ठिकनवां।
राम विमुख रहि, सुख मिल कहँवां॥
चक्र हरिहि अरु, ऋषि न बिसरिये।
चक्रधरहिं भजि, भव दुख हरिये॥

रव = शब्द, ध्वनि। भौननि = घरों में। (अन्य नाम- चक्रविरति)

अपराजिता [न न र स ल ग] ७, ७

न निरस लगती, कथा अपराजिता।
न निरस लगती, जिन्हें हरि की कथा।
सुनत रति बढ़े, समुद्र शशी यथा।
सु धनि जगत में, महा सुख साजिता॥
रहति यश धुजा, सदा अपराजिता॥

धुजा = ध्वजा। अपराजिता = नहीं जीती गई किसी से।

प्रहरणकलिका [न न भ न ल ग] ७, ७

ननु भन लग है, प्रहरणकलिका।
न नभ नल, ! गये, बच खल कितहूँ।
प्रभुकर शरसों, लह गति तितहूँ॥
अनल दहति ज्यों, छिन महँ दलिका।
सुमिरण हरि त्यों, प्रहरण कलिका॥

एक बानर की उक्ति नल नामक बानर से--हे नल ! वह खल (रावण) आकाश में भाग जाने से भी कहीं नहीं बच सकेगा। अनल = अग्नि। दलिका = लकड़ी का टुकड़ा।

नान्दीमुखी [न न त त ग ग] ७, ७

न नित तगि गहौ, वृत्त नान्दीमुखी को।

न नित तगि गहे, श्री गुरू पाद जाई।
दशरथ हरषे, पुत्र चौ दिव्य पाई॥
हिय मँह धरिके, ध्यान शृंगी ऋषी को।
मुदित मन कियो, श्राद्ध नान्दीमुखी को॥

न नित तगि = नहीं नित्य चूककर अर्थात् नित्य विना चूके।

कुमारी [न ज भ ज ग ग] ८, ६

न जु भज गंग काह नितही कुमारी।

न जु भज गंग काह, नितही कुमारी।
जप बिन जन्म व्यर्थ, तिय देह धारी॥
सुनु उपदेश मोर, अति मोदकारी।
नित भजती सु होय, पति को दुलारी॥

न जु भज गंग काह = अरी नहीं भजती है गंगाजी को क्यों?

ललितकेसर [न र न र ल ग]

नरन री लगी ललित केसरै अली।

नरन री लगी ललित केसरै अली।
तियन अंग में सहज सोहती भली॥
स्वपति प्रेमही तियन को सिंगार है।
नतरु जन्म ही गुनहु री असार है॥

नतरु = नहीं तो। (अन्य नाम--केसर)

प्रमदा [न ज भ ज ल ग]

न जु भज ले गुविंद किमि तू प्रमदा।

न जु भजले गुविंद किमि तू प्रमदा।
नहि तिनसो दयाल जन को सुखदा॥
नित गुण गान ठानि पद ना तजिये।
हठ अरुमान त्यागि हरि को भजिये॥

प्रमदा = स्त्री।

सुपवित्रा [न न न न ग ग] ८, ६

नचहु गगरि धरि, तिय सुपवित्रा ।
नचहु गगरि धरि, तिय सुपवित्रा ।
पुनि पुनि प्रगटहु, सु छबि विचित्रा ।
नित हरि चरणनि, दरसन कीजे ।
जनम सुफल निज, निज करि लीजे ॥

नचहु गग = नगण चार और दो गुरु ।

नदी [न न त ज ग ग) ७, ७

न ! न ! तजि गगरी, जावहु री नदी में ।
न ! न ! तजि गगरी, जावहु री नदी में ।
भय कछु करतीं, सासहु को न जी में ॥
भरि जल डगरौं, वेगहिं धाम प्यारी ।
नहिं भल लगती, धारत रीति न्यारी ॥

अतिशर्करी (पंचदशाक्षरावृत्तिः ३२७६८)

सारंगी [म म म म म] ८, ७

मो प्राणों की संगी प्यारी, मीठी बाजै सारंगी ।
मो प्राणों की संगी प्यारी, मीठी बाजै सारंगी ।
राधाकृष्णा राधाकृष्णा, दूजे रंगै ना रंगी ॥
काहे सिंगी सेली मेलै, काहे अन्तै धावै तू ।
पावै मुक्ती नीको प्यारे, जो गोविन्दै गावै तू ॥

यह पाँच मगण का सारंगी वृत्त है ।

मो प्राणों = मगण पांच । जहां यति पदांत में वा स्वेच्छानुकूल हो वहां इसे लीलाखेल कहते हैं (अन्य नाम-कामक्रीड़ा)

चित्रा [म म म य य] ८, ७

मो मो माया याही जानो, पार नाहीं विचित्रा ।
मो मो माया याही जानो, याहि छांड़े बिना ना ।
पावै कोऊ या भौ सिंधू, कैसहू पार जाना ।
नारी रूपा मोरी माया, पार्थ जानो विचित्रा ॥
जोई धारे भक्ती मोरी, मुक्ती पावै सुमित्रा ॥

मो मो = यह मेरा वह मेरा । पार्थ = अर्जुन ।

चन्द्रलेखा [म र म य य] ७, ८

मैं री मैया ! यही तो, ल्यों चन्द्रलेखा खिलौना।
मैं री मैया ! यही तो, ल्यों चन्द्रलेखा खिलौना।
रोवै आली ! न माने, मेरी कही यो सुछौना ॥
धाई कोई सखी लै, बेगी तहां वारिवारो।
कुम्भा तामें गहौ है, चन्दा हँसो नन्द वारो ॥

छौना=बालक। वारि वारो=सजल। कुंभा=घड़ा।

धाम [म त ज त ज] ५, १०

माताजी तीजा, व्रत में पधारो मम धाम।
माताजी–तीजा, व्रत में पधारो मम धाम।
सेवौं मैं तोरे, पद पद्म दोऊ अभिराम ॥
दासी पै कीजे, करुणा सदाही जगदम्ब।
नाहीं है मोहीं, तुहिं छांड़ि कोई अवलम्ब ॥

अवलम्ब = आधार।

चामर [र ज र ज र]

रोज रोज राधिका सु चामरै डुलावहीं।
रोज रोज राधिका सखीन संग आइकै।
खेल रास कान्ह संग चित्त हर्ष लाइकै ॥
बांसुरी समान बोल सप्त ग्वाल गाइकै।
कृष्णहीं रिझावहीं सु चामरै डुलाइकै ॥

यह 'र ज र ज र' का चामर वृत्त है।

दूसरी व्युत्पत्ति सप्त ग्वाल = सात बार गुरु लघु + गाइकै = गुरु एक

(अन्य नाम तूण, सोमवल्लरी)

सीता [र त म य र]

रे तु माया रंचहू जानी न सीताराम की।
रे तु माया रंचहू जानी न सीताराम की।
हाय क्यों भूलो फिरै ना सीख मेरी कान की ॥
जन्म बीता जात मीता अन्त रीता बावरे।
राम सीता राम सीता राम सीता गावरे ॥

यह 'र त म य र' का सीता वृत्त है।

रंचहू = थोड़ी भी। यह वृत्त उर्दू के इस बहर से मिलता है -फायलातुन फायलातुन फायलातुन फायलुन्। यथा--गो मिले जिन्नत भी रहने को बजाये लखनऊ। चौंक उठता हूँ मैं हरदम कहके हाये लखनऊ।

चन्द्रकांता [र र म स य] ७, ८

रार मोसों यही है, त्यागै किन चन्द्रकांता।
रार मोगों यही है, त्यागै किन चन्द्रकांता।
क्यों न सीता पढ़े तू, रामायण चित्त शांता॥
संत को पंथ याही, धारै निज चित्त जोई।
राम सीता प्रसादै, पावै गति शुद्ध सोई॥

मनहंस [स ज ज भ र]

सज जीभरी मनहंस वृत्तहि गानकै।
सज जीभरी ! कर जो सु कीर्तन राम को।
न तु व्यर्थ तू मुख माहिं टूकहि चाम को॥
जिमि बाग सुमन हंस सों जिमि मान है।
तिमि तू लसें मुख गा हरी गुण गान हैं॥

सज=शोभा। मान=मानसरोवर। (अन्य नाम-मानहंस, रणहंस, मानसहंस)

एला [स ज न न य] ५, १०

सजनी न यों, अपतहिं वितरिय एला।
सजनी न यों, अपनहिं वितरिय एला।
भल तो यही, यहु इन सम अनमेला॥
नहिं अन्य है, तुम कहँ जग महँ देवा।
तिय पावतीं, शुभ गति निज पति सेवा॥

अपतहिं=अप्रतिष्ठित को। एला=इलायची। वितरिय=बांटना, देना।

नलिनी [स स स स स]

ससि सीस सखी लखि फूल रही नलिनी।
ससि सों सु सखी रघुनन्दन को वदना।
लखि के पुलकीं मिथिलापुर की ललना॥
तिन के सुखतें दिस फूल रहीं दशहूँ।
पुर में नलिनी विकसी जनु ओर चहूँ॥

नलिनी=कुमोदिनी। (अन्य नाम- भ्रमरावली, मनहरण)

ऋषभ [स य स स य] ९, ६

सुयसी सिया के पति को, ऋषभै बखानो।
सु यसी सिया के पति को, ऋषभै बखानो।
तिय में सती में सिय को, अति श्रेष्ठ जानो॥

उपमा कहां सों कविहू, उचरैं बिचारे।
उनसे वहां हैं कहहीं, हिय मोद धारे॥

ऋषभ=परमोत्तम। इस वृत्त का लक्षण 'स ज स स य' भी कहा है। यथा -ऋषभै बखान जहँ पै सुजसी सिया हैं।

मोहिनि [स भ त य स] ७, ८

सुभ तो ये सखि री, नागरिही मोहिनि है।
सुभ तो ये सखिरी! आदिहुँ जो चित्त धरी।
नर औ नारि पढ़ैं, भारत के एक घरी॥
शुद्ध भाषा ब्रज की*, जासु लिपी सोहनि है।
सांचहुँ नागरि है, आगरि है मोहिनि है॥

टी० - एक स्त्री दूसरी से कहती है री सखी! इस देश अर्थात् भारत का कल्याण तभी होगा कि जब एक घड़ी भर भी भारत के स्त्री, पुरुष चित्त लगाकर ब्रज की शुद्ध भाषा को -जिसकी लिपि यथार्थ में सुन्दर, नागरी के नाम से परिचित, सब गुण आगरी और मोहिनी अर्थात् मन को मोहित करने-हारी है--पहिले ही से पढ़ेंगे। यह 'स भ त य स' का 'मोहिनि' वृत्त है। ७, ८ पर यति है।

सू०—*री आदिहुँ से यह अभिप्राय है कि इस वृत्त के आदि में रगण भी होता है। यहां पर इस वृत्त के दो पद सगण और दो पद रगण के आरम्भ किये गये हैं परन्तु विद्यार्थी को उचित है कि जब वह इस वृत्त की रचना करे तो चारों पद के आदि में या तो सगण ही सगण अथवा रगण ही रगण का प्रयोग करे।

मंगल [स भ त ज य] ७, ८

सुभ तीजा यह तो, मंगल नारि मनावैं।
सुभ तीजा यह तो, मंगल नारि मनावैं।
निसि जागैं सिगरी, मंजुल गौरि सजावैं॥
पति काजै बिनती, सीस नवाय सुनावैं।
जस गातीं उनके, वांछित जो मन पावैं॥

पति काजैं=पति के लिये।

---

*दोहा देश भेद सों होत है, भाषा विविध प्रकार।
बरणत हैं तिन सबन में, ग्वार परी रस सार॥
ब्रजभाषा भाषत सकल, सुर बानी समतूल।
ताहि बखानत सकल कवि, जानि महा रस मूल॥

ग्वार--ग्वाल अर्थात् ब्रजभाषा।

कुंज (त ज र स र) ८, ७

तू जा-रस रूप पुंज, कुंज जहां श्याम री।
तू जा रस रूप पुंज, कुंज जहां श्यामरी।
काहे अस मान ठानि, बैठ रहीं धाम री॥
बृन्दाबन आज मंजु, रास रच्यो मोहना।
आवौ हठ छांड़ि आलि. रूप लखो सोहना॥

निशिपाल (भ ज स न र)

भोज सुनि राघवहिं द्योस निसिपाल है।
भोज सुनि राघव कवीन्द्र कुल की नई।
काव्य रचना विपुल वित्त तिहिं दै दई॥
द्योस निशि पालत सुजान सुकृती जने।
हो नृप चिरायु अखिलेश! कवि यों भनै॥

अखिलेश = हे परमेश्वर।

पावन (भ न ज ज स) ८, ७

भानुज जस कहिये अति पावनन में।
भानुज जस ददुआ, कब गान करिहौ।
पावन हरि नमवां, कबधौं सुमिरिहौ॥
मानुष तन लहिकै, अब ना बिसरिये।
रामहिं नित भजिकै, अपनी सुधरिये॥

भानुज=सूर्यवंशी रामचन्द्र जी।

भाम (भ म स स स) ६, ६

भाम ससी सोहै नभ में, सुख सों नितही।
भाम ससी सोहैं नभ में, सुख सों जब लों।
वैदिक सांचो धर्म रहै, जग में तब लों॥
लोग सुखी ह्वै रात दिना, सुमिरैं तुमहीं।
मांगत तोसों दान यही, प्रभु दे हमहीं॥

भाम = सूर्य्य।

निश्चल [भ त न म त] ५, ६, ४

निश्चल एका, भित न मतेका, जानौ धीर।
भीति न मीता, वहि जग जीता, धारै धीर।
निश्चल एका, भजु न अनेका, टारै पीर॥

इष्टहिं सेवौ, सब सुख लेवौ, याही सार।
जो मति तोरी, दृढ़ रति बोरी, लागौ पार॥

भित न मतेका=डरने वाला नहीं अनेक मत मतांतरों से।

दीपक (भ त न त य) १०, ५

भांतिन ती ये घर घर में दीपक साजैं।
भाँतिन ती ये घर घर मे, दीपक साजैं।
आनन सोभा लखि रतिहू, चंदहु लाजैं॥
संतत काया मन वच सों, देवि मनावैं।
स्वामिहि सेवैं अतिहित सों, बांछित पावैं॥

भांतिन=भांति भांति। ती ये=स्त्रियां ये।

शशिकला (न न न न स) ६, ६

नचहु सुघर, तिय मनहु शशिकला।
नचहु सुखद, यसुमति सुत सहिता।
लहहु जनम, इह सखि सुख अमिता॥
बढ़त चरण, रति सुहरि अनुपला।
जिमि सित पछ, नित बढ़त शशिकला॥

नचहु सु=नगण चार और एक सगण। अमित=बहुत। अनुपल=प्रतिपल। सित पछ=शुक्ल पक्ष (अन्य नाम--शरभ, खक, चंद्रावती, मणिगुण) यति ८, ७ पर हो तो यही वृत्त 'मणिगुण निकर' कहा जायगा। अन्य नाम--माला, चन्द्रावती।

मालिनी (न न म य य) ८, ७

न नमिय यह काहे, मालिनी मूर्ति धन्या।
न नमिय यह धारो, पार्थ! शिक्षा सुधन्या।
कबहुँ तजि हमारी, मालिनी मूर्ति अन्या॥
जिनकर यह नेमा, मित्र! मैं देखि पावौं।
तिन हित सब कामैं, छांड़ि कै शीघ्र धावौं॥

यह 'न न म य य' का मालिनी वृत्त है।

पार्थ=अर्जुन। यथा—

अतुलित बलधामं स्वर्णशैलाभदेहं। दनुज बन कृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यं।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं। रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि॥

(अन्य नाम- मंजुमालिनी)

विपिनतिलका [न स न र र]

विपिनतिलका रचत कौनसी नारि री ।
निसि नर रघूत्तस जु कैकयी मंदिरा ।
गवन किय क्रुद्ध लखि भाषि मीठो गिरा ॥
तु दुइ तजि चार वर मांगि के लीजिये ।
विपिन तिलका सु कह रामहीं दीजिये ॥

नर रघूत्तम = नर श्रेष्ठ रघूत्तम दशरथजी । विपिन = वन ।

प्रभद्रिका [न ज भ ज र]

नजु भज राघवेन्द्र जग ना प्रभद्रिका ।
निज भुज राघवेन्द्र दशसीस ढाइहैं ।
सुरन अभै किये तुसह औध जाइहैं ॥
वचन हनू सुने लखत राम मुद्रिका ।
मुदित सिया दियो अशिष जो प्रभद्रिका ॥

तु सह = तुम्हारे सहित । प्रभद्रिका = विशेष कल्याणदायिनी ।

(अन्य नाम–सुखेलक)

उपमालिनी [न न त भ र] ८, ७

न नित भर छटा सों, अटा उपमालिनी ।
न नित भर छटा सों अटा उपमालिनी ।
सरल प्रकृति खोई, कहां हिय सालिनी ॥
लहव सकल कामैं, अरी सुकुमारि तू ।
कमल नयन श्यामैं, सदा हिय धार तू ॥

हिय सालिनी = हृदय को दुख देने वाली ।

अथाष्टिः (षोडशाक्षरावृत्तिः ६५५३६)

मदनललिता [म भ न म न ग] ४, ६, ६

साजौ वृत्तै, मदनललिता, 'माँ भौन मनि गा' ।
मैं भै नेमी, नगपति सदा, शंभू शरण की ।
मांग्यो जीबो, निज पति भई, दासी चरण की ॥
वे बोलेरी, मदन ललिता ! खासी पतिरता ।
पैहै सांची, हरि कर सुतै, प्रद्युम्न भरता ॥

मैं=मैं हुई या होकर । नगपति = कैलासपति । प्रद्युम्न = श्रीकृष्ण का पुत्र ।

प्रवरललिता [य म न स र ग] ६, १०

यमी नासै रागा, प्रवरललिता घोर माया।

यमी नासै रागा, भव जनित जंजाल भाई।
यही तें घेरै ना, प्रवरललिता ताहि जाई॥
अहो मोरे मीता, यदि चहहु संसार जीता।
सबै त्यागौ रागा, भजहु भवहा रामसीता॥

यमी = (निर्वैरता सत्यादि पांच संयमों का करने वाला) भवहा = जन्म मृत्यु के नाश करने वाले।

चंचला [र ज र ज र ल]

री जरा जुरो लखो जु, चंचला गई पराय।

री जरा जुरो लखो कहां गयो हमैं बिहाय।
कुंज बीच मोहि तीय ग्वाल बांसुरी बजाय॥
देखि गोपिका कहैं परी जु टूटि पुष्पमाल।
चंचला सखी गई लिवाय आजु नंदलाल॥

बिहाय = त्यागकर। जुरो = एकत्रित होकर। (अन्य नाम चित्र)

(१) यह 'र ज र ज र ल' का चंचला वृत्त है।

(२) 'ग्वाल वासु' = ग्वाल वसु अर्थात् क्रम से गुरु लघु आठ बार का 'चंचला' वृत्त है।

रतिलेखा [स न न न स ग] ११, ५

सुनु ! ना नस गरब कहुँ न, विरतिलेखा।

सुनु ना नस गरब कहुँ न, विरति लेखा।
नित राम पद कमल गहु, सुमन पेखा॥
इक ओर महि सकल जप, तप बिसेखो।
इक ओर सियपति चरण, भगति लेखो।

सुनु ! ना नस गरब = सुनो ! नहीं नष्ट होता है गर्व (जब तक)-(तब तक) सद्भक्ति का कोई लेखा नहीं अर्थात् संचार ही नहीं।

पंचचामर [ज र ज र ज ग]

जु रोज रोज गोपतीय द्वार पंच चामरै।

जु रोज रोज गोप तीय कृष्ण संग धावतीं।
सु गोति नाथ पांव सों लगाय चित्त गावतीं॥
कबौं खवाय दूध औ दही हरी रिझावतीं।
सुधन्य छांड़ि लाज पंच चामरै डुलावतीं॥

यह 'ज र ज र ज ग' का पंच चामर वृत्त है।

इस वृत्त में, इस वृत्त की व्युत्पत्ति भिन्न २ रीति से दो बार कही गई है। यह बसो लगा' अर्थात् क्रम से आठ लघु गुरु का 'पंचचामर' वृत्त है। पदांत में यति है। यथा—

जटाटवीगलज्जल प्रवाहपावितस्थले। गलेऽवलंब्यलंबितां भुजंगतुग मालिकाम्।
डमड्डमड्डमड्डमन्निनादवड्डमर्वयं। चकार चंडतांडवं तनोतुनः शिवः शिवम्॥

यह वृत्त प्रमाणिका का दुगना होता है। यथा—

प्रमाणिका पद द्वयं वदंति पंचचामरम्।

(अन्य नाम-नराच नागराज)

घनश्याम [ज ज भ भ भ ग] ६, १०

लखे घनश्याम, डोलत कुंज जु भाभि भगी।

जिजी भभ भागु, कुंजन में घनश्याम यहां।
सखी मत भूल, हैं नहिं री ब्रजराज कहां॥
अलौकिक रूप, देखत को अपने घसुरी।
चलो जहँ श्याम, आजु बजावत हैं बँसुरी॥

जिजी = हे जीजी। भभ = भागो के पूर्व संभ्रमसूचक एक ध्वन्यात्मक शब्द। भागु = भागो। देखत को = देखकर कौन।

रसाल [ज स त य र ल] ७, ६

रसाल वहि जानो जो सत यारी लै निबाह।

जसी तिय रली जो, प्रीतम हू ताको रसाल।
स्वधर्म रत जोई, कीरति है ताकी बिसाल॥
स्वपीय नित सेवै, भाषत है मीठी सुवानि।
सुधन्य जग माहीं, मंगल ही की मंजुखानि॥

जसी=सुयश वाली। रली=प्रेम में पगी। प्रीतम=पति।

धीरललिता [भ र न र न ग]

भोर नरा न गावत कहा जु धीरललिता।

भोर नरा न गावहि जु कृष्ण कृष्ण सुमना।
जन्म वृथा चलो न फिर वे लहैं नर तना॥
धार व्रतै सुधीर! ललिता सखी जस कियो।
छांड़ि सबै सनेह बल सों हरी बस कियो॥

पदांत में यति है। नेह बल सों = स्नेह द्वारा।

नील [भ भ भ भ भ ग]

भा शिव आनन गौरि अचंभित नील लखी।
भा शिव आनन गौरि जबै मन लाय लखी।
लै गइ ज्यों सुठि भूषन साजि वितान सखी॥
चिंतित होय गईं तुरतै लखि नील गरो।
पालक है सुर को यह की जन पाप भरो॥

यह वृत्त पांच भगण और एक गुरु का है।

भा=कांति। नील गरो=नीलकंठ। भा शिव आनन गौ=भगण ५ गो १ गुरु

(अन्य नाम--विशेषक, अश्वगति, लीला)

चकिता [भ स म त न ग] ८, ८

भो सुमति न गोविन्दै, पैये बुद्धि जु चकिता।

भो सुमति! न गोविन्दै, जानौ हैं निपट नरा।
देखत ब्रजबासी के, जो भारी गिरिहिं धरा॥
जोहत चकिता गोपी, ग्वाला पाणि डिगत सो।
कीन्ह निडर ऐसे जो, स्वामी धन्य भजत सो॥

भो=हे। गिरिहि धरा=गोवर्धन पर्वत उठा लिया। पाणि=हाथ। डिगत सो=हिलते हुए।

वरयुवती [भ र य न न ग] ९, ७

भोरिय नैन गर्व हीना, वहि वर युवती।
भोरिय नैन गर्वहीना, वहि वरयुवती।
प्रीतम प्रीति रीति पालै, धनि वह सुमती॥
बोलत नित्य वाणि मीठी, पद रति विमला।
धर्म पुनीत जान जोई, गुन वहि कमला॥

भोरिय नैन=भोली आंख वाली। विमला=स्वच्छ।

ऋषभ गजविलसिता [भ र न न न ग] ७, ९

भीरु न नैन गोपि, ऋषभ गजविलसिता।
भीरु न नैन गोपि, ऋषभ गजविलसिता।
गौरि रमा सुवाणि, सुअवसर अभिजिता॥
वाहन रूढ़ दोउ, पतिन सह मुद भरी।
भेंटत हर्ष युक्त, चरित अति शुभ करी॥

भीरु न नैन गोपि=(जो) डरने वाली नहीं नेत्र और वाणी से भी (ऐसी देवियां) (ऋषभ) बैल और (गज) हाथी पर विलास करती हुई। अभिहिता=निश्चित कही गई।

वाणिनी [न ज भ ज र ग]

न जु भज राग सों नर लहै न वाणिनी की।
न जु भज राग सों लखन युक्त राम सीता।
जन हित मानुषी चरित कीन्ह जो पुनीता।
तिहिकर सोइ ना भणित कैसहूं जु नीकी।
हरि बिन वाणि नीति बिन है नितांत फीकी॥

नजु भज=नहीं जो भजते हैं। राग सों=प्रीतिपूर्वक। भणित=वाणी। नितांत=बिलकुल।

गरुड़रुत [न ज भ ज त ग]

गरुड़ रुतै न जो भजत गान सो भाज क्यों।
न जु भज तं गुपाल निशि वासरा रे मना।
लहसि न सौख्य भूलि कहुँ यत्न कीन्हे घना॥
हरिहर के भजे भजत पाप को जूह यों।
गरुड़रुते सुनै भजत सर्प को व्यूह ज्यों॥

जूह=सनूह। रुत=आवाज।

मणिकल्पलता [न ज र भ भ ग] १०, ६

नजु रभ भागवन्त सोई, मणिकल्पलता।
न जु रभ भागवन्त सोई, मणि कल्पलता।
हरि पद प्रीति शुद्ध जोई, वहि बुद्धिमता॥
विधि लिख दीन्ह भाल प्यारे, नहिं केहुं टरै।
गुनि अस शांत हीय माहीं, नर विज्ञ धरै॥

रभ=लोभ करना। विज्ञ=बुद्धिमान।

अचलधृति [न न न न न ल]

न शिव वदन लखि रहत अचलधृति।
न शिव वदन लखि डर हिम गिरिपुर!
नर अरु युवात अचल धृति जिहि फुर॥
निरखि भयद छवि सबपुर बटु कह।
धनि धनि वर लखि जिन वपु जिउ रह॥

यह वृत्त पांच नगण और एक लघु का है।

गिरिपुर=हिमाचल नगरी के। अचलधृति=अचल धैर्य्य। पुर बटु=पुरी के बालक। वपु=शरीर। न शिव वदन ल=नगण पांच और एक लघु।

अथात्यष्टिः (सप्तदशाक्षरावृत्तिः १३१०७२)

मन्दाक्रांता [म भ न त त ग ग] ४, ६, ७

मन्दाक्रांता, कर सुमति को, मां भनौ तात गा गा।
मो भा नीती, तगि गहत क्यों, मूर्खता रे अजाना।
सर्व्व व्यापी, समुझि मुहिं जो, आत्म ज्ञानी सुजाना॥
मोगी भक्ती, सुलभ तिहिं को, शुद्ध हैं बुद्धि जाकी।
मन्दाक्रांता, करत मुहिं को, धन्य है प्रीति ताकी॥

यह 'म भ न त त ग ग' का मन्दक्रांता वृत्त है।
तगि=भटककर। मंदाक्रांता=धीरे धीरे खींचने वाली। यथा—

धन्याऽयोध्या दशरथ नृपस्याच माता च धन्या।
धन्योवंशो रघुकुलभवो यत्र रामावतारः॥
धन्या वाणी कविवरमुखे रामनामप्रपन्ना।
धन्यो लोके प्रतिदिन मसौ रामनामश्रृणोति॥

मंजारी [म म भ त य ग ग] ६, ८

मीं मीं भांती या—गा—गाकर, घूमै घर में मंजारी।
मीं मीं भांती या—गा गाकर, घूमै घर में मंजारी।
जूठीं सामा धामा की करि, खाती सबको है गारी॥
लाड़ौ पालौ चाहौ केतिक, स्वामी अपनो ना जानै।
नेती चोरी माहीं संतत, तासों सब शंका मानै॥

सामा = सामग्री। नेती = नियत।

भाराक्रांता [म भ न र स ल ग] ४, ६, ७

भाराक्रांता मभन रसला, गहौ मन लायकै।
मो भा नारी, सुलग सुभगा, भजै पति देव जो।
भाराक्रांता, रह न जग में, सनेमहि सेव जो॥
पातिव्रत्यै, सिय सरिस जो, अहोनिसि धारती।
सोई धन्या, सुजस सहिता, उभै कुल तारती॥

मो भा नारी सुलग सुभगा=मुझे भाती है की और वही लगती है सुन्दर।

हारिणी [म भ न म य ल ग] ४, ६, ७

मो भौने मां युलग सुभगा, देवी मनोहारिणी।
मो भौने मां, युलग सुभगा, देवी मनोहारिणी।
भावै मोको, जगत जननी, भक्तै सदा तारिणी॥

ध्यावै जोई, चरण कमलै, दूजो कछू काम ना।
पावै सोई, अचल भगती, पूजैं सबै कामना॥
मो भौने मां=मेरे गृह में मां। शुलग=यह लगती है।

शिखरिणी [य म न स भ ल ग] ६, ११

यमी ना सो भूला, गुण गणनि गा गा शिखरिणी।
यमीना सो भोला, गुनत जु प्रिये मोह मदिरा।
महा पापी पावें, अधम गति जानौ श्रुतिगिरा॥
यमी को? शम्भू सो, जिन मदन जीत्यो भट महां
जबै कीन्हें ध्याना, गिरिशिखर नीके वट छहां॥
यह 'य म न स भ ल ग' का शिखरिणी वृत्त है।
यमी=इन्द्रिय निग्रह करने वाला। ना=नहीं। सो=वह। भोला=नादान।
श्रुतिगिरा=वेद वचन। शिखरिणी=मनोहर स्त्री। यथा—

क्वचिद्भूमौ शय्या क्वचिदपि च पर्यंकशयनं।
क्वचिच्छाकाहारः क्वचिदपि च शाल्योदनरुचिः॥
क्वचित्कंथाधारी क्वचिदपि च दिव्याम्बरधरो।
मनस्वीकार्य्यार्थी न गणयति दुःखं नच सुखम्॥
यदा किंचित् ज्ञोऽहं द्विपइवमदांधः सम भवं।
तदा सर्वज्ञोस्मीत्यभवदवलिप्तं मम मन॥
यदाकिंचित्किंचित् बुधजनसकाशादवगतं।
तदा मूर्खोस्मीति ज्वर इवमदोमेव्यपगतः॥

कांता [य भ न र स ल ग ४, ६, ७

वहै कांता, जहँ लसत हैं, 'य भै नर सों लगा'।
यु-भा-नारी, सुलग सुभगा, प्रिया निज कंतकी।
वहै कांता, प्रकृति सरला, क्षमा जनु संतकी॥
वहै रम्या, मधुर वदना, सुखी जग देखिये।
वहै धन्या, पतिरत सदा, रमासम लेखिये॥
यभ=संयोग। भा=भाता है। यु=यह, जो।

सारिका [स ५+ल ग] १०, ७

सुगति लग रामहिं राम, रटै नित सारिका।
सुगती लग रामहिं राम, रटै नित सारिका।
करहीं जन प्रेम अगाध, मनो निज दारिका॥
जपि जो हरि नाम उदार, सदा गुण गावहीं।
तरि सो भवसागर पार, महा सुख पावहीं॥

यह वृत्त पांच सगण और लघु गुरु का है।

सुगती लग=अच्छी गति के-लिये, सगण पांच और लघु गुरु।

सारिका=मैना। दारिका=लड़की।

अतिशायिनी (स स ज भ ज ग ग) १०, ७

सु सजे भज गंग क्यों नहीं, तु अतिशायिनी है।

सु सजे भज गंग क्यों नहीं, तु अतिशायिनी है।
लहती सखि भक्ति क्यों नहीं, जु अनपायिनी है।
जग पावनि ता समान ना, हिय लखौ विचारी।
जिहि सीस धरे सदैव री, बड़ भये पुरारी॥

अतिशायिनी=बहुत सोनेवाली, सुक्त। अनपायिनी=दुर्लभ। पुरारी=महादेवजी।

तरंग (स म स म म ग ग) ५, ५, ७

शिव के संगा, सोह तरंगा, सीमा सीमा में गंगा।

सम सीमा में, गागरिया में, पानी लावै गंगा को।
मनहू रंगा, प्रेम तरंगा, सेवे है श्री रंगा को।
करती काजै, धामहिं साजै, धन्या है वाहो नारी।
पति को पूजै, देख न दूजै, ताही सों पीकी प्यारी

सीमा=सींव हद।

पृथ्वी (ज स ज स य ल ग) ८, ९

जु साजि सिय लै गईं, जगत मातु पृथ्वी सुता।

जु साजि सिय लै गईं, सुघर मंडपै जो सखी।
सु भाग्य तिनको बड़ो, अमर नारि भाषैं लखी॥
सु राम छबि कंकणैं, निरखि आरसी संयुता।
लगाय हिय सों धरी, कर न दूर पृथ्वी सुता॥

यह 'ज स ज स य ल ग' का पृथ्वी वृत्त हैं।

साजि=अलंकृत करके। सुघर=सुन्दर। अमरनारि=अमरांगना।

पृथ्वीसुता=जानकी जी।

वंशपत्रपतिता (भ र न भ न ल ग) १०, ७

साजिय वंश पत्र पतिता, भरन भन लगा।

भीरन भीन लोग रहहीं, अहनिसि सुख सों।
साजिय वंशपत्रपतिता, विकल जु दुख सों॥
स्वारथ छांड़ि ध्याव हरि को, विगत गरव सों।
मानि कुटुम्ब जीव जगती, कर हित सब सों॥

भीरन भीन=समूहों में रंगकर अर्थात् प्रीतिपूर्वक। वंशपत्रपतिता= वंश की कीर्ति से गिरी हुई।

शूर [भ म स त य ग ल] ५, ५, ७

भूमि सताये, गाल बजाये, कौन कहायो शूर।

भूमि सत ये, गाल बजाये, कौन कहायो शूर।
कंस सरीखो, बोलत तीखो, सोउ कहायो क्रूर॥
सूर सुकर्मा, अर्जुन वर्मा, नीति सदा ही धार।
धर्म सँभारो, शत्रु सँहारो, कीर्ति रही संसार॥

हरिणी [न स म र स ल ग] ६, ४, ७

न सुमिरि सुली, गावौ काहे, वृथा हरिणी कथा।

न सुमिरि सुली, गौरीनाथा, हरी तजि आन को।
भजि जिहिं लहैं, निश्चै योगी, सुखी पर धाम को॥
बन बसि करी, नाना लीला, किये बन के यती।
बहु विधि सुखी, औ सोने को, हन्यो हरिणीपती॥

सुली=शूली। महादेव जो गौरीनाथ हैं सो हरि के सिवाय दूसरे को नहीं भजते हैं। हरिणीपती=हरिण।

मालाधर [न स ज स य ल ग] ९, ८

न सज सिय लागि जो न, छिन मंत्र माला धरे।

निसि जु! सिय लों गंभीर, मम नेह में जो पगी।
तुमहिं बिनु कौन जाय, लयके सँदेशा भगी॥
फिरत हम साथ बंधु, तुम्हरो हि चिंता भरे।
विरह पल को गिनै जु, नित हाथ माला धरे॥

निसिजू=हे रात्रिजी। सिय लों=सीता तक। गभीर=अथाह।

किसी २ ने ८, ९ पर यति मानी है। यथा—

न सजु सिय लागिना, छिन जु मंत्र माला धरे।

कोकिल [न ज म ज ज ल ग] ७, ६, ४

न जु भज जो लगो, मधु भलो रव कोकिल को।

न जु भज जो लगो, मधु भलो रव, कोकिल को।
पिय घर ना तजौ, न कलपावहु मो दिल को॥
अति सुखदायिनी, ऋतु सुहावन, माय रही।
ललित बसंत की, छबि मनोहर, छाय रही॥

न जु भज= न भागो। मधु = चैत्र। रव = शब्द।

समुदविलासिनी [न ज भ ज भ ल ग] १०, ७

समुदविलासिनी सजहिं, नाजु भाजु भलगा।

निज भुज भूलि गर्व-शुभ, राम नाम कहुरे।
समुद विलासिनी बिसरि, जन्म लाहु लहुरे॥
भवनिधि जो चहै तरण, याहि नेम गहुरे।
हरि पद पद्म धारि हिय, मग्न ध्यान रहुरे॥

नाजु भाजु भलगा=न भागो भली प्रकार गावो। लाहु=लाभ।

रसना [न य स न न ल ग] ७, १०

नय सन ना लाग, तबै कहत कवि रसना।

नय सन ना लाग, तबै कहत कवि रसना।
अन रस में पागि, अरी भजत हरि कस ना॥
कुमतिहिं दे त्यागि, गहौ सतत शुभ मति को।
दशरथ के लाल, भजौ लहहु शुभ गति को॥

नय=नीति। सन=से। रसना=रस नहीं है जिसमें, जीभ।

अथधृतिः (अष्टादशाक्षरावृत्तिः २६२१४४)

हरिणिप्लुता [म स ज ज भ र] ८, ५, ५

मैं साजो जु भरो-घड़ा, तट में लख्यो. हरिणप्लुता।

मैं साजो जु भरो घड़ा, तट में लख्यो हरिण-प्लुता।
क्रीड़ावन्त हरो भरो, बिलसै तहां, हरिणी युता॥
कस्तूरी त्यहि नाभि जो, तिहि सों सजैं, निज आननै।
हे आलो तिहि क्यों बधैं, हठ धारिकै, नृप काननै॥

हरिणिप्लुताको यों पढ़िये-हरिणए-प्लुता=हरिण की उछाल कूद। आननै=मुख को। काननै=जंगल में।

कुसमितलतावेल्लिता [म त न य य य] ५, ६, ७

माता ना यत्रै, कुसुमित लता, वेल्लिता मान सांची।

माता ना ये ती, कहत सत सी, दै दहो मू हमारे।
भूठै लाई हैं, वह उरहनो, आज होतै सकारे॥
अन्तै ना जाऊँ, प्रमुदित लखौं, नित्य भानू सुता की।
शोभा वारी हैं, कुसमित लता, वेल्लिता वीचि जाकी॥

ती=स्त्रियां। प्रमुदित=आनन्दपूर्वक। भानुसुता=सूर्य्य नंदिनी यमुनाजी। कुसुमितलतावेल्लिता=पुष्पवती लताओं से कंपित। वीचि=अल्प तरंग।

चित्रलेखा [म भ न य य य] ४, ७, ७

मैं भीनी यों, गुणनि तुव पती, ध्यान दै चित्र लेखा ।

मैं भीनी यों, गुणनि सुनि यथा, कामरी पाय वारी ।
बोली ऊषा, लखहु सखि दशा, मीन वे वारि वारी ॥
देख्यो स्वप्ने, इक पुरुष युवा, मानिये काम भेखा ।
छांड़ौ शोकै, सु कह जु न मिलै, नाम ना चित्रलेखा ॥

भीनी = भींजी । कामरी = कमरी वा कम्मल । वे वारिवारी = वे पानी वाली । यों गुणनि = यगण तीन ।

शार्दूल ललिता [म स ज स त स] १२, ६

मो सों जो सुत सांच पूछन कहौं, शार्दूल ललिता ।

मो सों जो सुत ! सांच पूछहु पिता, गे मीचु सदना ।
हा ! ! ! काहे ? सुत शोक को चहुन में, रे राम भल न ॥
काहे ? गे बन राम सानुज बधू, वैदेहि सहिता ।
राजा की सुनि वाणि हे सुत विभू, शार्दूल ललिता ॥

(कैकेई-और भरत की उक्ति प्रत्युक्ति)

मीचु सदना = मृत्यु के घर । हे सुत विभू = हे पुत्र श्रेष्ठ ।

केसर [म म न य र र] ४, ७, ७

मो भा नाये, ररहु कित वृथा, धारौ सदा केसरै ।

मो भा नाये, ररहु कित वृथा, धारौ सदा केसरै ।
आभा दूनी, सुभग तन लसै, ज्यों नासिका बेसरै ॥
देखो कैसी, लसत वदन की, शोभा घनी पान सों ।
त्योंही आली, सजत नित हियो, गोविंद के गान सों ॥

ररहु = कहते हो । आभा = प्रकाश ।

मंजीर [म म भ म स म] ९, ९

मो में भू में सो मो पालक, गाऊँ ताहि बजा मंजीरा ।

मोमें भूमें सो मो पालक, दूजो कोउ न है मो ताता ।
रे मूढ़ा तैं मिथ्या भाषत, है तोरी अनहोनी बाता ॥
वाणी प्रह्लादा की श्रीपति, ज्योंही कान करी सा पीरा ।
आये खंभा फारी ताछिन, बाजी दुंदुभि औ मंजीरा ॥

मो में भू में सो मो पालक = मुझ में है, भूमि में है वही मेरा रक्षक है ।

चला [म भ न ज भ र] ४, ७, ७

मो भौने जो, भरहि धन सदा, कहौ तिहि क्यों चला।

मो भौने जो, भरहि धन सदा, कहौ तिहि क्यों चला।
सेवौ स्वामी, सहित सतत जो, न हो पुनि क्यों भला॥
मानो शिक्षा, मम अति हित की, लगै कछु दाम ना।
ध्यावो लक्ष्मी, विसरि न हरि को, फलै सबै कामना॥

भौने = घर में। चला = लक्ष्मी, चल देने वाली।

सिंहविस्फूर्जितम् [म म म म य य] ५, ६, ७

मो मां भीमा या, युद्धै चढ़ि धावै, सिंहविस्फूर्जितासी।

मो मौं भीमा या, युद्धै चढ़ि धावै, सिंहविस्फूर्जितासी।
शत्रू संहारै, खड्गै कर धारै, काल की काल भासी॥
चाहो जो रक्षा, मानो मम शिक्षा, कीजिये मातृ भक्ती।
आनन्दै पावै, बाधा सब जावै, सेव जो आदि शक्ती॥

शार्दूल [म स ज स र म] १२, ६

मो सों जो सर में प्रवीण लखिये, वीर सो शार्दूलै।

मो सों जो सर में प्रवीण लखिये, बीर सो शार्दूलै।
युद्धै पीठ दिखाय गर्व कर जो, मूढ़ सोई भूलै॥
नाहीं और उपाय अन्त लहिये, व्यर्थ धोखा खावै।
शम्भू को सुमिरै सभक्ति जन जो, बाण विद्या पावै॥

महामोदकारी [य ६]

यगन्ना छहौ मित्र एकत्र देखो महा मोदकारी।

यचौ यो यशोदा जु को लाड़िलो जो कला पूर्ण धारी।
जिहीं भक्त गावैं सदा चित्त लाये मुरारी पुकारी॥
वही पूरवैगो सबै लालसा तो लला देवकी को।
करै गाथ जाको महामोदकारी सबै काव्य नीको।

यचौ यो य = यगण चार और यगण दो अर्थात् ६ यगण। यचौ=याचना करो। तो = तेरी। (अन्य नाम क्रीड़ाचक्र)

सुधा [य म न स त स] ६, ६, ६

यमी ना संतों से, पिय नित हरी, नामावलि सुधा।
यमी ना संतों से, पिय नित हरी, नामावलि सुधा।
उन्हीं की धारे हैं, परम हितसों, सत्संगति बुधा॥
स्वधर्मे रांचे जो, सतगहि रहैं, त्यागैं नहिं कदा।
जपैं सीताराम, पद रति युता, गावैं गुण सदा॥

यमी ना = यमी नहीं कोई सन्तों के समान। रांचे = रंगे।

चंचरी [र स ज ज भ र] ८, १०

री सजै जु भरी हरी, गुण चंचरीवत वाणि तू!
री सजै जु भरी हरी, गुण से रहै नित वाणि! तू।
औ सदा लह मानहू, सु समाज में जग माहिं तू॥
भूलि के यदि रामहीं, कहुँ आन को गुण गाइ है।
ना हरीजन चंचरी, मन चम्पकै सम भाइ है॥

सज = शोभा को प्राप्त होगी। (अन्य नाम चर्चरी, विबुधप्रिया)
कई पिंगलकारों ने पादांत में यति मानी है। ८, ५, ५, पर यति रखकर इसी का नाम हरनर्त्तन भी कहा है।

केतकी [स स स ज न र] १०, ८

ससि सों जनु रीझि न रंच, सेवत अलि केतकी।
ससि सों जनु रीझि न रंच, सेवत अलि केतकी।
जिहि सों मन लागत सोइ, जानत गति हेत की॥
हरि के पद पंकज मंजु, ध्यावहु नित बावरे।
करि कै तिन सों सत प्रेम, कीरति शुभ गावरे॥

जनु = मानो।

शारद [त भ र स ज ज] ९, ९

तू भोर सों जु जपै लहै, शुभ शारदा पद कंज।
तू भोर सों जु जपै सदा, शुभ शारदा पद कंज।
हो बुद्धि निर्मल बेगही, मतिहूं लहै अति मंजु॥
है इष्ट तो सब शुद्ध है, बिन इष्ट को लह पार।
तासों कहौं जगदम्ब के, पदकंज ही महँ धार॥

लालसा (त न र र र र) ६, ६

तूनीर चतुर-बांधहीं, युद्ध की है जिन्हें लालसा ।

तूनीर चतुर बांधहीं, युद्ध की है जिन्हें लालसा ।
मारैं रण चढ़ि शत्रु को, खड्ग सों जो महाकाल सा ।
धारैं कठिन प्रसंग में, धीरता धीरता धीरता ।
है धर्म सतत वीर को, वीरता वीरता वीरता ॥

तूनीर=तूणीर तरकस । तूनीर चतुर=तगण, नगण और रगण चार । सतत=हमेशा ।

अचल (ज त भ य स त) ५, ६, ७

जती भयो सो, तपै. अचल पै. त्यागि सबै जंजाल ।

जती भयो सो, तपै अचल पै, त्यागि सबै जंजाल ।
जपै हरी को, सुभक्ति सहिता, जो जगती को पाल ।
वही प्रभू को, सुनामसत है, झूठहिं माया जाल ।
कही हमारी, सुमीत सुनिये, नित्य जपो गोपाल ॥

हीर (भ स न ज न र) १०, ८

भूसन जनु रंक मुदित, पाय ललित हीरहीं ।

भे सुनि जन राघवकर, आवन मुद के भरे ।
दुःख लखत पुत्र बदन, मातु तिहुन के टरे ।
भा विपुल उछाह अवध, मंगल ध्वनि है रहीं ।
दीन्ह बहुत हेम सहित, हीरक सब विप्रहिं ॥

भूसन=भूषण, पृथ्वी से । भे=हुए । हेम=सुवर्ण ।

तीव्र (भ ५+स)

भू गति सोधत पंडित जो बहु तीव्र गणित में ।

भू गति सोधत पंडित जो बहु तीव्र गणित में ।
आदर योग्य वही पुनि जो कह राम भणित में ।
जो मद मत्सर मोह असारं तिन्हें सब दहिये ।
मंगल मोद निधान प्रभू शरणै नित रहिये ॥

भू=पृथ्वी । भू गति सो=भगण पांच और सगण । (अन्य नाम अश्वगति) भी पाया जाता है परन्तु १६ वर्णों के वृत्तों में भी एक वृत्त अश्वगति नामक है । देखो 'नील' ।

भ्रमरपदक (भ र न न न स) ६, १२

भीरु न नैन से, भ्रमरपदक तउ गर परे।

भीरु न नैन से, भ्रमरपदक तउ गर परे।
कामुक सैन से, डिगत न तिय पति चित धरे।
मंगल जो चहै कस न सतत सत पथ गहे।
तीय स्वकीय ज्यों मन बच क्रम निज पति चहे।

भीरु न नैन से = आंख के समान कोई डरपोक नहीं वा लज्जायुक्त।
कामुक सैन से = कामी के इशारे से।

नंदन (न ज भ ज र र) ११, ७

नजु भजरे रिझाव हित सों महारथी नंदना।

नजु भजरे रिझाव हित सों, महा रथी नंदना।
निपट अबोध हैं विमुख जे, घनी करैं क्रन्दना।
भजत सनेह युक्त नितही, जु राम भूपाल को।
सु लहत मोद औ हरति है, विमोह के जाल को।

नजु भजरे=अरे मत भाग। महारथी नंदना=दशरथ जिनके पुत्र सप्तमावतार श्री रामचन्द्र। घनी करैं क्रन्दना=खूब रोते हैं।

अनुराग (न ज ज न त ज) ८, १०

निज जनताजहँ है प्रगट तहां ही अनुराग।

निज जनता जहँ है, प्रगट तहां ही अनुराग।
सुख सहजै लहिये, हरिहुँ सहाई बड़ भाग।
जहँ लखिये कुमती, विपति तहां ही दिन रैन।
जहँ लखिये सुमती, सतत तहां ही सब चैन॥

प्रज्ञा (न य म म भ म) ६, ४, ८

नय मम भीमा, प्रज्ञा सीमा, ताही ना छिन छांड़ौ जू।

नय मम भीमा, प्रज्ञा सीमा, ताही न छिन छांड़ौ जू।
मिल सब प्यारे, ना हो न्यारे, एकत्रै रण मांड़ौ जू।
रत नित कर्मा, छत्री धर्मा, योद्धा हू पुनि तू बंका।
प्रभु जय दाता, मानो भ्राता, यामें ना कछु है शंका॥

नय=नीति। प्रज्ञा=श्रेष्ठ बुद्धि।

लता (न न र भ र र) १०, ८

न निरभर रहै असींचे वर काव्य की ये लता।
न निरभर रहै असींचे, वर काव्य की ये लता।
तिमि जन समुदाय छीजै, जहँ नाहिं है एकता।
सुजस भनिय प्रेम धारे, हरि राधिका को जहां।
कहिय सरस काव्य ताही, सब श्रेष्ठताही तहां॥

निरभर=निर्भर, दृढ़। छीजै=क्षीण होता है भनिय=कहिये।

मान (न र स म न म) १०, ८

नर समान मोहन नांहीं, तू मान तजरी प्यारी।
नर समान मोहन नाहीं, तू मान तज री प्यारी।
रस अनूप कुंजन माहीं, शोभा सखिन की न्यारी।
तट लखो सखी जमुना के, गोबिन्द सुखमा खासी।
चलि लहौ प्रमोद अपारा, हूजे चरण की दासी॥

नाराच (न न र र र र) ६, ६

न नर चतुर भूल तू, गाव नाराच धारी सदा।
न नर चतुर भूल तू, ध्याय ले केशवै निर्भरा।
भजत जिनहिं शंकरौ, इन्द्र ब्रह्मादि हू निर्जरा।
नसत सकल पाप यों, श्रीप्रभू भक्ति की ओट सों।
धरणि दनुज बंश ज्यों, राम नाराच की चोट सों॥

यह वृत्त दो नगण और चार रगण का है।

न नर चतुर=नगण नगण और रगण चार। निर्भरा=निर्भर प्रेम से। निर्जरा=देवगण। (अन्य नाम-महामालिका)

अथातिधृतिः (ऊनविंशत्यक्षरावृत्तिः ५२४२८८)

शार्दूलविक्रीड़ित (म स ज स त त ग) १२, ७

मैं साजौं सततै गुरू सुमिरिकै, शार्दूलविक्रीड़ितै।
मोसों जो सत तू गरूर तजिकै, पूछै मतो ज्ञान को।
तो शीघ्रै भजले विदे तनया, तासों बड़ो आन को।
शक्ती आदि अकथ्य जासु महिमा, राखे बचा पीड़िते।
संहारथो जन लागि दुष्ट असुरै, शार्दूल विक्रीड़िते॥

यह 'म स ज स त त ग' का शार्दूलविक्रीड़ित वृत्त है।

सततै=सर्वदा। अकथ्य=नहीं कही जा सकती। बचा पीड़िते=आधि व्याधि दुःखों से बचाती हैं। शार्दूल विक्रीड़िते=सिंह के समान क्रीड़ा करती हुई। यथा –

नैव व्याकरणज्ञमेव पितरं न भ्रातरं तार्किकम्।
मीमांसानिपुणं नपुंसकमिति ज्ञात्वानिरस्तादरा॥
दूरात्संकुचितेव गच्छति पुनश्चाण्डालवच्छांदसम्।
काव्यालंकरणज्ञमेव कविता कांता वृणीते स्वयम्॥
मूलं धर्मतरोर्विवेक जलधेः पूर्णेन्दु मानन्ददं।
वैराग्याम्बुज भास्करं ह्यघघनं ध्वान्तापहंतापहं॥
मोहाम्भोधर पुंजपाटनविधौ खेसम्भवं शंकरम्।
वन्दे ब्रह्मकुलं कलंकशमनं श्रीरामभूपप्रियम्॥

फुल्लदाम (म त न स र र ग) ५, ७, ७

मो तो नासौ रे, रँगहु हिय प्रभू, नाम की फुल्लदामै।

मो तो नासौ रे, रँगहु निज मनै, राम के राग माहीं।
ध्यावैं ब्रह्मा जू, शिव सुर पतिहु, प्रेम सो नित्य जाहीं।
जाने भंज्यो है, शिव धनुष महा, जा नृपाली सभा मैं।
जा कंठै मेली, विपुल यश युता, जानकी फुल्लदामैं॥

मो तो=मेरा तेरा। विपुलयशयुता=प्रचुर यश सम्पन्न।

गिरिजा (म स म स स म ल) २, ७, १०

मो सों, मास समै लों भाखौ, गिरिजा शिवरानी की गाथ।

मोसों, मास समै लों भाखौ, गिरिजा शिवरानी को गाथ।
पूजैं नारि सबै भक्ती सों, धरतीं चरणों में है माथ।
रात्री, जागत तीजा माहीं, सजनी जिनको नीको भाग्य।
गातीं, गान महामाया को, लहतीं अति नीको सौभाग्य॥

मोसों मास समै लों भाखौ=मुझसे एक मास के समय तक कहौ।

बिम्ब (म त न स त त ग) ५, ७, ७

मो तो नासौ तो, तगि भजत न क्यों, बिम्बाधरा जानकी।

मो तो नासौ तो, तगि भजत न क्यों, बिम्बा धरा जानकी।
भूलौ ना प्यारे, शरण गहहु जो, तो खैर है जान की।
वाही संहारै, सकल असुर को, बाधा सबै टालती।
वाही की दाया, जन सुख लहहीं, वाही सदा पालती॥

मो तो नासौ तो=यह मेरा वह तेरा इस अज्ञान का तो नाश करो।
तगि=भटककर। जानकी=सीता। जान की=जीव की।

सुमधुरा (म र भ न म न ग) ७, ६, ६

मोरे भौने मनोग्या, वदति रमणी, वाणी सु मधुरा।

मोरे भौने मनोग्या, वदति रमणी, वाणी सु मधुरा।
धारै श्रद्धा पती में, मन बच क्रमै, सेवै सु चतुरा।
नारी धर्मैं सु पालै, सरल चित्त सों, ना गर्व गहती।
धन्या ऐसी सती जो, जनमि जग में, कीर्ती सु लहती॥

भौने = घर में। मनोग्या = मनोज्ञा, मनानुसार चलने वाली, मनोहर वदति = कहती है।

सुरसा (म र भ न य न ग) ७, ७, ५

मोरे-भै-नाय नागी, हरि अनुचर हौं जान सुरसा।

मोरे-भै-नाय-नागी, हरि अनुचर हौं, जान सुरसा।
मोहीं ना जान हीनो, बुधि बल गुण में, री असुर सा।
स्वामी काजैं सिधावौं, जलनिधि तरिहौं, एक छन में।
सीता को खोज पाऊं, तब लगि मुहिं ना, धीर मन में॥

(हनुमानजी की उक्ति) भै = डर। नाय = नहीं। नागी = सर्पिणी।

मेघविस्फूर्जिता (य म न स र र ग) ६, ६, ७

यमूना सौरी री, गुनत हुलसै, मेघविस्फूर्जिता को।

यमूना सौरी! री, गहन निशि में, बांसुरी ज्यों बजाई।
सखी धाई बौरी, सपदि उठिकै, लाज काजैं विहाई।
लह्यो भारी मोदा, पुलकि लखिकै, मोहना नाम जाको।
बनैले ज्यों केकी, लहत सुनिकै, मेघविस्फूर्जिता को॥

सौरी = श्रीकृष्ण ने। बौरी = विक्षिप्त। सपदि = शीघ्र। केकी = मयूरगण मेघविस्फूर्जिता = मेघ की गर्जना। (अन्य नाम = विस्मिता)

छाया (य म न स त त ग) ६, ६, ७

करौ छाया ऐसी, यमुन सततै, गोविंदही हौं पती।

यमूना सों तौंती, गवलि तनया, मांगै नितै जायकै।
यही दे माता! जो, बर हम मगैं, माथा तुम्हें नायकै।
धरे बंसी माला, सुभग वट की, छाया मनो श्रीपती।
छबी जाकी देखैं, तुव तट सदा, दीजै हमें सो पती॥

तांती = पंक्ति समूह।

मकरंदिका (य म न स ज ज ग) ६, ६, ७

यमै ना साजौ जो, गहि कर कियो, कहा मकरंदिका ।

यमै ना साजौ जो, गहि कर कियो, कहा मकरंदिका ।
कहां चन्दा जोती, गुन पुनि कहां, मयूरक चंद्रिका ।
अहै मूलाधारा, जगत जननी, महा यश साधिका ।
अहो मीता मानो, शरण गहि के, भजौ नित राधिका ॥

यम = यम नियमादि को । मकरंदिका = पुष्परस ।

शम्भू (स त य भ म म ग) ५, ७, ७

सत या भूमी, मग शंभू ध्यावहु, सिच्छा मोरी मानो जू ।

सत या भूमी, मग जोपै खोजहु, सिच्छा मोरी मानो जू ।
गिरिजानाथा, नमिये माथा नित, याही नेमै धारौ जू ।
तजिये कामा, भजिये नामा अस, बेरा नाहीं पावौ जू ।
शिव बम्भोला, शिव बम्भोला बम, भोला शंभू गावौ जू ।

सत = सच्चा ।

तरल (स न य न य न ग) ६, १०

सुन या नय नगरी में, तरल करैं न्यायहि सबै ।

सुन या नय नगरी में, तरल करैं न्यायहि सबै ।
रह चित्त सरल जाको, न जन करैं आदर कबै ।
सबही लखि अपने सो, विपतिहु में संग न तजौ ।
सत संग सतत धारौ, सुहृद सदा रामहिं भजौ ॥

नय नगरी = न्याय की नगरी । तरल = शीघ्र । सुहृद = प्यारे ।

मणिमाल (स ज ज भ र स ल) १२, ७

सजि जो भरी सु लखात सुन्दर, हीय में मणिमाल ।

सजि जो भरी सु लखात सुन्दर, हीय में मणिमाल ।
तिमि धारिकै करुणा-करौ नृप, दीन को प्रतिपाल ।
पुनि जानि धर्महिं संत सेवहु, ध्याइये सियराम ।
जग में सुकीर्ति अपार पावहु, अन्त में हरि धाम ॥

समुद्रतता (ज स ज स त भ ग) ८, ४, ७

जसी जस तभी गुनौ, रहत जो, छायो समुद्रतता।

जसी जस तभी गुनौ, रहत जो, छायो समुद्रतता।
गुमान मन ना धरौ, अमर जो, चाहो सुकीर्ति लता।
सदा शिवहिं सेइये, सुजन जो, चाहो सु दिव्य गती।
करौ भजन मोद सों, पदन में, धारौ विशुद्ध रती॥

समुद्रतता=समुद्र तक फैला हुआ। विशुद्ध रती=विशुद्ध प्रेम।

अथकृतिः (विंशत्यक्षरावृत्तिः १०४८५७६)

सुवदना (म र भ न य भ ल ग) ७, ७, ६

मो रंभा नाय भूलै, गुण गण अगरी, प्यारी सु वदना।

मो रंभा नाय भूलै, गुण गण अगरी, प्यारी सुवदना।
देखी ताके समाना, सुभग अपसरा, ना इन्द्र सदना।
हैं चौदा रत्न जोई, जलनिधि मथिकै, काढ़े सुर वरा।
तामें है सोइ दिव्या, अति मन हरणी, ऐसो न अपरा॥

नाय=नहीं। अपरा=दूसरी।

सुवंशा (म र भ न त त ग ग) ७, ६, ७,

माँ रंभा नीति तू गा, गहु न कुमती, रच धर्मैं सुवंशा।

माँ रंभा नीति तू गा, गहु न कुमती, रच धर्मैं सुवंशा।
रांचो बैकुंठनाथै, पद कमल जो, ताहि ना मोह अंशा।
माया तोरी न व्यापै, हरि जनन को, कोटि कीजे उपाई।
ऐसी बानी सुनी जो, कहत शुक सों, धन्य है तोरि माई॥

शोभा (य म न न त त ग ग) ६, ७, ७

यमी नाना ताता, गगन तल अजौं, मग्न जो ब्रह्म शोभा।

यमूना ना तू तौ, गगरि लै कवौं, जा सुनै बात मेरी।
फिरै कान्हा नित्यै, यमुन तट घने, ग्वाल संगो लिये री।
लखै वाकी शोभा, विपुल गुण युता, जो सुबाला नवीनी।
न जानौं सो कैसे, सपदि सुत वधू!, प्रीति में जाय भीनी॥

यमी नाना ताता=यमी बहुत से हैं हे तात। सपदि=शीघ्रही।
भीनी=रँग जाती है।

वृत्त (र ज र ज र ज ग ल)

रोज रोज राज गैल तें लिये गुपाल जात ग्वाल वृत्त।

रोज रोज राज गैल तें लिये, गुपाल ग्वाल तीन सात।
वायु सेवनार्थ प्रांत बाग जात आव लै सु फूल पात।
लायकै धरैं सबै सु फूल पात मोद युक्त मात हात।
धन्य मान मातु बाल वृत्त देखि हर्ष रोम रोम गात॥

(१) यह 'रोज रोज राज गैल' अर्थात् 'र ज र ज र ज ग ल' का 'वृत्त' संज्ञक वृत्त है।

(२) यह 'ग्वाल तीन सात' अर्थात् क्रम से गुरु लघु दस वार का 'वृत्त' संज्ञक वृत्त है। इसे रत्यका, दंडिका अथवा गंडका भी कहते हैं पादांत में यति है।

गीतिका (स ज ज भ र स ल ग) १२, ८

सज जीभ री सुलगै मुहीं प्रभु, गीत कान सुनाय दे।

सज जीभ री! सु लगै मुहीं सुन, मो कहा चित लायकै।
नय काल लक्खन जानकी सह, राम को नित गायकै।
पद! मो शरीरहिं राम के कल, धाम को लय धावहू।
कर! बीन लै अति दीन ह्वै नित, गीति कान सुनावहू॥

यह 'स ज ज भ र स ल ग' का गीतिका वृत्त है।

नय काल=कालक्षेपकर। सुलगै=प्यारी लगेगी। कल=सुन्दर।

(अन्य नाम-मुनिशेखर)

मत्तेभविक्रीड़ित (स भ र न म य ल ग) १३, ७

सुभ री ना मयि लागती विलसती, मत्तेभविक्रीड़िता।

सुभ री ना मयि लागती विलसती, मत्तेभविक्रीड़िता।
मति ओछा जस धारती तस रहै, भारावहा पीड़िता।
तिमि मूढ़ा सब देह भूषण सजे, भावै नहीं कामिनी।
पिय भक्ती बिन व्यर्थ जन्म जग में, है घोर संतापिनी॥

मयि=गधी। मत्त+इभ=मत्तेभ=हाथी का मस्त बच्चा। विलसती=विलास करती हुई, भारावहा=बोझ ढोने वाली। संतापिनी=दुःख देने वाली।

सरिता (त य स भ र य ग ल) १०, १०

तोयै सुँ भरी ये गलियां री, सरिता समान मानो माय।
तोयै सुँ भरी ये गलियांरी, सरिता समान मानो माय।
कैसे जमुना को जल लाऊँ, मग में खड़ो कन्हैया आय।
मोरी घर में सास रिसावै, ननदी बड़े सुनावे बोल।
देख्यो जब से मैं बनमाली, तब से बिकी अरी बेमोल॥

तोयै सुँ भरी = पानी से ही भरी हुई।

लय-थारे कुबजा ही मन मानी हम से न बोलना हो राज।

भृंग (न ६ + ग ल) ६, ६, ८

न रस गलिन, कुसुम कलिन, जहँ न लसत भृंग।
न रस गलिन, कुसम कलिन, जहँ न लसत भृंग।
बसति कुमति, नसति सुमति, जहँ न सुजन संग।
कमल नयन, कमल वदन, कमल शयन राम।
शरण गहत, भजत सतत, लहत परम धाम।

न रस गलि = नगण छै और गुरु लघु। कमलशयन = जलशायी।

अथप्रकृतिः (एकविंशत्यक्षरावृत्तिः २०६७१५२)

स्रग्धरा (म र भ न य य य) ७, ७, ७

मोरे भौने ययूयो, कहहु सुत अहै, कौन को स्रग्धरे यों।
मोरे भौने ययू यो, कहहु सुत ! कहां तें लिये आवते हो।
भा का आनन्द आजै, तुम फिरि फिरि कै, माथ जो नावते हो।
बोले माता ! विलोक्यो, फिरत सह चमू, बाग में स्रग्धरे ज्यों।
काढ़ो मालारु मारे, विपुल रिपु बली, अश्व लो-जीति के त्यों॥

यह 'म र भ न य य य' का स्रग्धरा वृत्त है।

जानकी जी की उक्ति लव और कुश से।

मोरे भौने = मेरे घर में। ययू = मेध्याश्व को। चमू = फौज। स्रग्धरे = माला धारण किये हुए। भा का = हुआ क्या। लो = लिया। यथा—

रामं कामारिसेव्यं भवभयहरणं कालमत्तेभसिंहं।
योगीन्द्रं ज्ञानगम्यं गुणनिधिमजितं निर्गुणं निर्विकारं॥
मायातीतं सुरेशं खलबधनिरतं ब्रह्मवृन्दैकदेवं।
वंदेकंदावदातं सरसिजनयनं देवमुर्वीशरूपं॥

नरेन्द्र (भ र न न ज ज य) १३, ८

भो रन ना जु जाय कहुँ विचलित, सोइ नरेन्द्र बखानो ।

भो रन ना जु जाय कहुँ बिचलित, सोइ नरेन्द्र बखानो ।
देवन में जु देवपति कहियत, सोइ सुरेन्द्र प्रमानो ।
भक्तन में जु भक्त दृढ़ ध्रुव सम, इष्ट टरै नहिं टारे ।
देबिन में जु देवि सिय सम नहिं, सत्य पतिव्रत धारे ॥

यह 'भ र न न ज ज य' का नरेन्द्र वृत्त है ।

भो रन=हुआ रण में । नाजु=नहीं जो । विचलित=घबड़ाया ।

(अन्य नाम समुच्चय)

धर्म (भ स न ज न भ स) १०, ५, ६

भा-सन जन भास कलित, कीर्ति ललित धर्म वलित जो ।

भा-सन जन भास कलित, कीर्ति ललित, धर्म बलित जो ।
शंभु भजत मोद अमित, कर्म फलित, काम रहित जो ।
हे नर किन ध्यान धरत, भूल करत, मोह तजत ना ।
देवन महँ देव परम, छांड़ि भरम, शंभु भजत ना ॥

भा सन=तेज से, कांति से । भास=प्रतीत होता है ।
कलित=सुन्दर । अमित=बहुत ।

अहि (भ ६ + म) १२, ६

भोर समै हरि नाथ लियो अहि संग सखा जमुना तीरा ।

भोर समै हरि गेंद जु खेलत, संग सखा यमुना तीरा ।
गेंद गिरी यमुना दह में झट, कूद परे धरि के धीरा ।
ग्वाल पुकार करी तब रोवत, नन्द यशोमतिहूं धाये ।
दाउ रहे समुझाय इतै अहि, नाथि उतै दह तें आये ॥

भोर समै=भगण छै और एक मगण । दाऊ=बलरामजी ।

सरसी [न ज भ ज ज ज र] ११, १०

न जु भज जो जरा किमि नरा, सरसीरुह नैन जानकी ।

न जु भज जो जरा पुहुमिजा, सरसीरुह नैन जानकी ।
भजि जिहिं भक्ति पावत सबै, दृढ़ राम दया निधानकी ।
अधम लहैं कतौं सुख न ते, नर देह धरे निकाम यों ।
सुनहु सुधी ! अजागल जु सो, पुनि जानहु श्वान पूछ ज्यों ॥

पुहुमिजा=जानकीजी । अजागल जु सो=बकरी के गले के स्तनों के समान । सरसीरुह नैन=कमलनयनी ।

हरिहर (न ज म स त ज ज) ८, ५, ८

निज मसती जु जोहै, सो भरमो है, गाव हरीहर मीत।

निज मसती जु जोहै, सो भरमो है गाव हरीहर मीत।
गुरु पद पद्म छाकी, है मति जाकी सो जनु भौ निधि जीत।
प्रभु पद प्रीत सांची, जो हिय रांची, ताहि बखानत संत।
हित जग को करैं जो, धीर धरैं जो, है धनि सो बुधि मंत॥

निज मसती जु जोहै सो भरमो है=अपनी मस्ती जो देखता है सो भ्रम में पड़ा है।

अथऽकृतिः (द्वाविंशत्यत्तरावृत्तिः ४१६४३०४)

हंसी (म म त न न न स ग) ८, १४

मैं मो तो ना नाना सोगै, तज हरि भज पिय पयं जस हंसी।

मैं मो तो ना नाना सोंगै, तजहु सुबुध ! न तु ग्रस हरि माया।
जो यातें ना छूटै पावै, कबहुं न सुख लह सुजन निकाया।
वर्षे अग्नी चाहे चन्दा, अकरम करम करहिं अवतंसी।
बाढ़ै कंजा माथे शैला, लवणि जलधि पय पिय बरु हंसी॥

मैं मो तो ना नाना सोगै=मैं, मेरा तेरा नहीं ऐसे नाना प्रकार के ढोंग। निकाया=समूह। अवतंसी=शिरोमणि, यहां प्रथम पद में ग्रस के पूर्व का 'तु' लघु ही माना जायगा क्योंकि उस पर गुरुत्व नहीं पड़ता।

लालित्य (म स र स त ज न ग) ६, ५, ८,

मो सों रोस तजौ नागरी, कहु लालित्यै, कटु वाक्य परिहरौ।

मों सों रोस तजौ नागरी, कहु लालित्यै, कटु वाक्य परिहरौ।
कैसी मंजु मही फागरी, चलि देखौ तो, हरि प्रीति उर धरौ।
खेलैं मोहन श्रीराधिका, सब गोपीहू, जुरि कै अति हित सों।
ऐसों मान करै क्यों अली, चलि खेलौरी, अति हर्षित चित सों॥

महास्रग्धरा (स ज त न स र र ग) ८, ७, ७

सज तान सूर रंगी, श्रवण सुखद जो, ये महास्रग्धरा की।

सज तान सूर रंगी, श्रवण सुखद जो, ये महास्रग्धरा की।
शुभ राम नाम संगी, जन मन हरणी, कीर्ति हो शुभ्र जाकी।
नहिं अन्य भांति प्यारे, रसिक जनन को, तोष होवै कदाही।
शुभ गीत राम सीता, कलिमल हरणी, हर्ष दात्री सदाही॥

तोष=संतोष।

मंदारमाला (त ७ + ग)

तू लोक गोविंद जावै नरा नाम मंदारमाला हिये धारिले ।

तू लोक गोविंद जावै नरा छोड़ जंजाल सारे भजे नेम सों ।
श्रीकृष्ण गोविंद गोपाल माधो, मुरारी जगन्नाथहीं प्रेम सों ।
मेरी कही मान ले मीत तू जन्म जावै वृथा आप को तार ले ।
तेरी फलै कामना हीय की नाम मंदारमाला हिये धार ले ॥

यह सात तगण और एक गुरु का मंदारमाला वृत्त है ।
तू लोक गो = तगण सात और गुरु एक ।

मदिरा (भ ७ + ग)

भा सत गूढ़ न मर्म तिन्हैं जु पिये जग मोह मयी मदिरा ।

भा सत गौरि गुसांइ न को वर राम धनू दुइ खंड कियो ।
मालिनि को जयमाल गुहो हरि के हिय जानकि मेलि दियो ।
रावण की उतरी मदिरा चुपचाप पयान जु लंक कियो ।
राम बरी सिय मोद भरी नभ में सुर जै जयकार कियो ॥

यह सात भगण और एक गुरु का मदिरा नामक सवैया है ।
भा सत = हुआ सत्य । यह 'भा सत गौ' अर्थात् भगण ७ और गुरु १ का 'मदिरा' वृत्त है इसी प्रकार के वृत्तों का दूसरा नाम सवैया है जिनके कई भेद हैं जो यथास्थान दिये गये हैं । यथा –
सुमुखी, मत्तगयन्द चकोर, दुर्मिल, वाम, किरीट, सुन्दरी, अरविंद, सुख इत्यादि ।
सूचना- सवैये और कवित्तों के तुकांत अवश्य मिलने चाहिये अर्थात् चारों चरणों के अन्त्याक्षर एक से होने चाहिये ।
(अन्य नाम–मालिनी, उमा दिवा)

मोद (भ ५ + म स ग)

भे सर में सिगरे गुण अर्जुन द्रौपदि व्याही लाय समोदा ।

भे सर में सिगरे गुण अर्जुन जाहिर भूपालो हु लजाने ।
ज्योंहिं स्वयम्बर में मछरी दृग बेधि सभा सों द्रौपदि आने ।
जाय कह्यो निज मातहिं तें फल एक मिलो एतोहि बखाने ।
बांटहु आपस में तब बोलत मोद गहे कुन्ती अनजाने ॥

भे सर मे = हुए बाण में । सिगरे = सब । जाहिर = प्रकाशित । एतोहि = इतना ही । भे सर में सिग = भगण पांच मगण, सगण और एक गुरु ।

भद्रक (भ र न र न र न ग) ४, ६, ६, ६

भोर नरा, नरी नग धरै. हिये जु सुमिरैं, सुभद्र कहिये।

भोर नरा, नरी नगधरै, हिये जु सुमिरैं सदा सुमति कै।
ध्यावतही, समूह अघ को, नमै तुरत ज्यों, मतो कुमति कै॥
भावहिसों, कुभावऽनख सों, महालसहि सों, अडोल मति सों।
भद्रक है, पुरारि मुनि सों, दशाननहि सों, सुकुंभश्रुति सों॥

नगधरै = गिरवरधारी श्री कृष्ण को। सुभद्र = विशेष कल्याणकारी। सुमति कै=अच्छी मति से। मतो कुमति कै = मनोरथ कुमति का। ऽनख = अनख, बैर। महालस = महा आलस्य। अडोल मति सों = स्थिर मति से। भद्रक = कल्याणकारी। पुरारि = शंकर। मुनि = वाल्मीक। दशानन=रावण। कुंभश्रुति=कुंभकर्ण। भावार्थ—

भाव कुभाव अनख आलसहूं। राम जपत मंगल दिसि दसहूं॥
भाव सहित शंकर जप्यो, कहि कुभाव मुनि बाल।
कुंभकरण आलस जप्यो, अनख जप्यो दशभाल॥

सू०—कहीं कहीं १०, १२ पर भी यति लिखी है वह भी अनुचित नहीं।

अथविकृतिः (त्रयोविंशत्यक्षरावृत्तिः ८३८८६०८)

मत्ताक्रीड़ा (म म त न न न न ल ग) ८, ५, १०

मत्ताक्रीड़ा सोई जानो लसत जहँ मम तननि ननु लगही।

मो माता ! नाचौ लो गो को, सुपय दधि, इमि मुहि पकरि कहतीं।
जो ना नाचौं मोरी माता, तमकि सब, युवति भजतहुँ धरतीं॥
यों रानी माधो की बानी, सुनत कह, निपट असत कहत री।
लाजौरी ना मत्ताक्रीड़ा, गुरुन सन, कहत गत भय सिगरी॥

लो गो को सुपय दधि = लेव गाय का मधुर दूध दही। भजतहुँ = भागते में भी। गुरुन सन = बड़ों से। गत भय = निर्भय होकर। मो माता नाचौ लो गो = मगण, मगण, तगण, नगण चार और लघु गुरु।

वागीश्वरी (य७ + ल ग) १२, ११

यचौ राम लागे सदा पाद पद्मै, हिये धारि वागीश्वरी मात को।

यचौ राम लागै सदा पाद पद्मै, हिये धारि वागीश्वरी मात कों।
सदा सत्य बोलौ हिये गांठ खोलौ, यही योग्य है मानवी गात को॥
पुरावै वही कामना जोमना सो, बनावै वही नावनी बात को।
करौ भक्ति सांची महा प्रेम रांची, बिसारो न त्रैलोक्य के तात को॥

यह सात यगण और लघु गुरु का वागीश्वरी नामक वृत्त है।
राम = ३। जो मना = जो मनमे है। रांची = रंगी हुई। तात = पिता।

सुन्दरि (स स भ स त ज ज ल ग) ६, ७, १०

ससि भास तजो, जौं लगि सखि ढूंढ़ौं, सुन्दरि हाय कहां बिछुरी।

ससि भास तजो, जौं लगि सखि ! ढूंढ़ौं, कुंजगली बिछुरी हरि सों।
जमुनातट की, जोहत सब बल्ली, हौं बहु पूछ करी तिनसों॥
कहुँ कोउ कहै, ना हम लखि पाये, माधव पाणि गहे बँसुरी।
नहिं जानति हौं, सुन्दरि ! इक बारी, आजुहि दैव फिरो कसुरी॥

यह 'स स भ स त ज ज ल ग' का सुन्दरि वृत्ति है।
ससि भास तजो = चन्द्र ने अपना प्रकाश छोड़ा अर्थात् चन्द्रास्त हो गया। हौं = मैं। दैव = भाग्य। बल्ली = लता।

सर्वगामी (त ७ + ग ग) ११, १२

तैं लोक गंगा तिहूं ताप भंगा नमामी नमामी सदा सर्वगामी।

तिल्लोक गंगा किये पाप भंगा महा पापियों को सदा तारती तू।
मो बेर क्यों बेर तू ने लगाई नहीं तारिणी नाम क्या धारती तू॥
सेवा बनै मात कैसे तुम्हारी सदा सेवते सीस पै सर्वगामी।
मैं क्रूर कामी महा पाप धामी तुही एक आधार अम्बे ! नमामी॥

तिल्लोक गंगा किये पाप भंगा = तीनों लोकों के हे गंगे ! किये हैं पाप भंग। तगण ७ + गंगा = २ गुरु। सर्वगामी = शिव।
(अन्य नाम-अग्र)

सुमुखी (ज ७ + ल ग)

जु लोक लगा चित राम भजैं तिन पै सु प्रसन्न सिया सुमुखी।

जु लोक लगैं सिय रामहिं साथ चलैं बन माहिं फिरै न चहैं।
हमैं प्रभु आयसु देहु चलैं रउरे सँग यों कर जोरि कहैं॥
चलैं कछु दूर नमैं पग धूरि भले फल जन्म अनेक लहैं।
सिया सुमुखी हरि फेरि तिन्हें बहु भांतिन तें समुझाय कहैं॥

यह सात जगण और लघु गुरु का सुमुखी नामक सवैया है।
जु लोक लगैं = जगण ७ + ।ऽ, रउरे = आप के।
(अन्य नाम = मानिनी, मालिका)

मत्तगयन्द (भ ७ + ग ग)

भासत गंग न तो सम मो अघ मत्तगयन्दहिं नास करैया।

भासत गंग न तो सम आन कहूं जग में मम पाप हरैया।
बैठि रहे मनु देव सबै तजि तोपर तारण भारहिं मैया॥
या कलि में इक तूहि सदा जन की भव पार लगावत नैया।
है तु इकै हरि अम्ब अरी अघ मत्तगयन्दहिं नास करैया॥

यह सात भगण और दो गुरु का मत्तगयन्द नामक सवैया है।

भासत गंग = मालुम होता है हे गंगे। भगण ७ + SS, हरि=सिंह। अघ मत्तगयन्द = पापरूपी मस्त हाथी।

सू०-सवैयाओं में अर्थात् मदिरा, चकोर, मत्तगयन्द, सुमुखी, किरीट, प्रभृति वृत्तों में बहुधा गुरु लघु का क्रम ठीक न मिलने के कारण विद्यार्थियों को भ्रम होता है कि यथार्थ में यह सवैया है, वा कोई विशेष मात्रिक छंद है इसका एक उदाहरण नीचे देते हैं यथा-

भ भ भ भ भ भ भ ग ग
आईभ-लेहौंच-लीसखि-यानमें-पाईगो-विंदके-रूपकी-मां-की।

यह भगण के लिये इस प्रकार पढ़ा जायगा।

आइभ - लेहुंच - लीसखि - यानम पाइगु - विंदक - रूपकि - मां - की

या लकुटी कर कामरिया पर राज तिहूं पुर को तजि डारौं।
आठहु सिद्धि नवौं निधि को सुखनंद को गाय चराय बिसारौं॥
खान कहैं इन नैननतें ब्रज के बन बाग तड़ाग निहारौं।
कोटिन हू कलधौत के धाम करील की कुंजन ऊपर वारौं॥

ऐसे ही और भी जानिये। (अन्य नाम-मालती, इन्द्रव)

चकोर (भ ७ + ग ल) —

भासत ग्वाल जहां लखिये कह वृत्त चकोर महा मुद मान।

भासत ग्वाल सखी गन में हरि राजत तारन में जिमि चंद।
नित्य नयो रचि रास मुदा ब्रज में हरि खेलत आनँद कंद।
या छबि काज भये ब्रज बासि चकोर पुनीत लखै नँद नंद॥
धन्य वही नर नारि सराहत या छवि काटत जो भव फंद॥

यह सात भगण और गुरु लघु का चकोर नामक सवैया है।

भासत = प्रतीतमान होते हैं। भासत ग्वाल = भगण ७ + SI।

अद्रितनया (न ज भ ज भ ज भ ल ग) ११, १२

न जु भज भंजु भाल गति को, हिमाद्रितनया जरा सुमिरि ले।
न जु भज भाज भूल गहि के, हिमाद्रितनया तिया सुमन में।
जिन हित शंभु राम महिमा, कही सुनत पाप जायँ छन में॥
नहिं तिनसों अभागि जग में, कहौं सुमति! ज्यों खरी विचरतीं।
न पति करैं सनेह तिन सों, कदापि मन सों सदुःख मरतीं॥

न जु भज भाज भूल गहि के=नहीं भजती हैं जो और भागती हैं भूल करके। हिमाद्रितनया=पार्वतीजी। ज्यों खरी विचरतीं=गधी के समान संसार में फिरती हैं। सदुःख=खेदयुक्तही।

(अन्य नाम-अश्वललित)

शैलसुता (न, ज ६ + ल ग) १३, १०

नजर सु लोगन ऊपर कीजिए, हे जग तारिणि शैल सुते!

पिंगलार्थ-न, ज (र स) ६ + ल ग। ऐसेही चारों चरण जानो। यथा—

अयि जगदम्ब कदंब वन प्रिय, वास निवासिनिवासरते।
शिखिर शिरोमणि तुंग हिमालय, शृंग निजालय मध्य गते।
मधुमधुरेमधुकैटभ भंजिनि, कैटभ गंजिनि रासरते।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि, रम्य कपर्दिनि शैल सुते॥

वन प्रिये को वनप्रिय पढ़ो।

यह वृत्त नगण, छै जगण और लघु गुरु का होता है।

अथसंस्कृतिः (चतुर्विंशत्यक्षरावृत्तिः) १६७७२१६)

गंगोदक (र ८)

रे बसौ धाइकै अन्त कासीहि कै धाम निश्चिंत गंगोदकै पानकै।
रे बसो धाइ कै अंत कासीहि कै धाम निश्चित गंगोदकै पान कै।
कोटि बाधे कटैं पाप सारे हटैं शंभु शंभू रटैं नाथ जो मान कै॥
जन्म बीता सबै चेत मीता अबै कीजिये का तबै काल ले आन कै।
मुण्डमाला गरै सीस गंगा धरै आठ यामै हरै ध्याय ले गान कै॥

गंगोदकै=गंगाजी के जल को।

इस वृत्त में इस वृत्त के लक्षण भिन्न २ रीति से दो बार कहे गये हैं। यथा—

(१) 'रे बसौ' अर्थात् रगण आठ का 'गंगोदक' वृत्त है।

(२) चौथी पंक्ति में 'रे आठ' अर्थात् रगण आठ का 'गंगाधर वृत्त' है

(अन्य नाम गंगाधर लक्ष्मी, खंजन)

दुर्मिल (स ८)

सब सों करि नेह भजौ रघुनन्दन दुर्मिल भक्ति सदा लहिये।
सब सों करि नेह भजौ रघुनन्दन राजत हीरन माल हिये।
नव नील वपू कल पीत झँगा झलकैं अलकैं घुंघरारि लिये॥
अरविंद समानन रूप मरन्द अनंदित लोचन भृङ्ग पिये।
हिय में न बस्यो अस दुर्मिल बालक तो जग में फल कौन जिये॥

यह आठ सगण का दुर्मिल सवैया है।

राजत=विराजमान है। नव नील वपू=सद्य विकसित नील कमल के समान शरीर है। अरविंद समानन=कमल के समान मुख। लोचन भृंग=नेत्ररूपी भ्रमर। दुर्मिल=कठिनाई से प्राप्त होने वाला। स बसो=सगण आठ। (अन्य नाम चंद्रकला)

आभार (त ८)

तू अष्ट जामै जपै राम को नाम ना भूल तौहूं गुरू देव आभार।
तू अष्ट जामै जपै राम को नाम रे शिष्य! दे त्यागि सारे वृथा काम।
तेरी फलै कामना हीय की औ बिना दाम तू अन्त पावै हरी धाम॥
बोल्यो तबै शिष्य आभार तेरो गुरूजी न भूलौं जपौं आठहू याम।
श्रीराम श्रीराम श्रीराम श्रीराम श्रीराम श्रीराम श्रीराम श्रीराम॥

यह आठ तगण का आभार नामक वृत्त है।

तू अष्ट जामै=तू आठों प्रहर तगण आठ। आभार=अहसान।

मुक्तहरा (ज ८)

जु योग बली सु मनोभव मुक्त हरैं शिवजी तिनके दुख दंद।
जु आठहुँ याम भजैं शिव को नित छांड़ि सबै छल छिद्र सुजान।
सु हैं धन या जग माहिं लहैं फल जन्म लिये कर सन्त समान।
प्रसन्न सदा शिव हों तुरतै जन पै सब भाषत वेद पुरान।
करैं नित भक्तन को भव मुक्त हरैं जन के सब क्लेश महान॥

यह आठ जगण का मुक्तहरा नामक वृत्त है।

जु योग बली सु मनौ=जो योग मे बली है सो मानो। जु आठ=जगण आठ।

वाम (ज ७ + य)

जु लोक यथा विधि शुद्ध रहैं हरिं वाम तिन्हें सपनेहुँ कबौं ना।
जु लोक यथा मति वेद पढ़ैं सह आगम औ दश आठ प्रमाने।
बनै महि में शुक शारद शेष गणेश महा बुधि मन्त समाने।
चढ़ैं गज बाजि सु पौनस आदि जु बाहन राजन केर बखाने।
लहैं भलि वाम अरु धन धाम तु काह भयो बिनु रामहिं जाने॥

यह सात जगण और एक यगण का बाम नामक सवैया है।
जुलोकय=जगण ७+य। पीनस पीनसादि राजा लोगों के वाहन।

(अन्य नाम-मंजरी, मकरंद, माधवी)

तन्वी (भ त न स भ भ न य)

भातन सोभा, भनिय अशुभ सी, जो नहि सेवत निज पति तन्वी।
भातन सोभा, भन यह सु बुधा, यद्यपि सुन्दर मनहर तन्वी।
जो पति नेहा, रहित सु नयना, ज्यों जग घाव सहित नर धन्वी।
शील न लाजा, नय नहिं तनिकौ, भूषित भूषण तन सुकुमारी।
त्रै कुल नासै, कुपथहिं चलिकै, पोषत सो तिय लग अघभारी॥

भातन सोभा, भन यह सुबुधा=भाता नहीं है शोभा ऐसा कहते हैं बुद्धिमान लोग। तन्वी=सुकुमार स्त्री।

अरसात (भ ७+र)

भासत रुद्र जु ध्यानिन में तिमि ध्यान धरो अरसात न नेकहू।
भासत रुद्र जु ध्यानिन में पुनि सार सुती जग बानिन ठानिये।
नारद ज्ञानिन पानिन गंग सुरानिन में विक्टोरिय मानिये।
दानिन में जस कर्ण बड़े तस भारत अम्ब भली उर आनिये।
बेटन के दुख मेटन में कबहूं अरसात नहीं फुर जानिये॥

यह वृत्त सात भगण और एक रगण का होता है यथा -
भासत रु=भगण सात और रगण। अरसात नहीं=आलस नहीं करती। सारसुती=सरस्वती।

किरीट (भ ८)

भा वसुधा तल पाप महा हरि जू प्रगटे तब धारि किरीटहिं।
भा वसुधा तल पाप महा तब धाइ धरा गइ देव सभा जहँ।
आरत नाद पुकार करी सुनि वाणि भई नभ धीर धरौ तहँ।
ले नर देह हतौं खल पुंजनि थापहुँगो नय पाथ मही महँ।
यों कहि चारि भुजा हरि माथ किरीट धरे प्रगटे पुहुमी महँ॥

यह आठ भगण का किरीट नामक सवैया है।
भा वसुधा तल=हुआ पृथ्वी तल में। भावसु=भगण आठ।
आरतनाद=दुख भरी वाणी। पुहुमी=पृथ्वी। यथा—

मानुष हौं तो वही रसखान बसौं नित गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पशु हौं तो कहा बस मेरो चरौं नित नंद की धेनु मँझारन।
पाहन हौं तो वही गिरि को जो कियो सिर छत्र पुरंदर वारन।
जो खग हौं तो बसेरो करौं वहि कालिंदि कूल कदंब की डारन॥

सू०—प्राचीन कवियों के सवैये कहीं २ ऐसे भी मिलते हैं जिसका कोई पद लघु से और कोई गुरु से प्रारंभ होता है जिससे गणों का क्रम चारो चरणों मे एकसा नहीं मिलता। कोई २ कवि ऐसे सवैयों को "उपजाति" मानते हैं। ऐसे प्राचीन सवैये आदरणीय अवश्य हैं परंतु प्रमाणिक नहीं। मुख्य नियम तो यह है कि चारों चरणों में गणों का क्रम एकसा रहे।

अथातिकृतिः (पंचविंशत्यक्षरावृत्तिः ३३५५४४३२)

सुन्दरी (स ८ + ग)

सब सों गहि पाणि मिले रघुनंदन सुन्दरि सोय लगी पद सासू।

सबसों गहि पाणि मिले रघुनन्दन भेंटि कियो सबको सुख भागी।
जबहीं प्रभु पांव धरे नगरी महँ ताछिन तें विपदा सब भागी॥
लखि के विधु पूरण आनन मातु लह्यो मुद ज्यों मृत सोवत जागी।
यहि औसर की हरि सुन्दर मूरति धारि जपैं हिय में अनुरागी॥

यह आठ सगण और एक गुरु का सुन्दरी नामक सवैया है।
सबसोंग = सबसुग = सगण आठ और एक गुरु।
(अन्य नाम=मल्ली, सुखदानी)

अरविंद (स ८ + ल)

सब सों लघु आपहिं जानिय जू पद ध्यान धरे हरि के अरविंद।

सबसों लघु आपुहिं जानिय जू यह धर्म सनातन जान सुजान।
जबहीं सुमती अस आनि बसै उर सम्पति सर्व विराजत आन।
प्रभु व्याप रह्यो सचराचर में तजि बैर सुभक्ति सजौ मतिमान।
नित राम पदै अरविंदन को मकरंद पियो सुमलिंद समान॥

यह आठ सगण और एक लघु का अरविंद नामक सवैया है।
सबसोंल=सगण आठ और लघु अरविंद=कमल। मकरंद=रस। मलिंद=भँवरा।

लवंगलता (ज ८ + ल)

जु योग लवंगलतानि लग्यो तव सूझ परै न कछू घर बाहर।

जु योग लवंगलतानि लग्यो तब सूझ परै न कछू घर बाहर।
अरे मन चंचल नेक विचार नहीं यह सार असार सरासर॥
भजौ रघुनन्दन पाप निकंदन श्रीजगबंदन नित्य हियाधर।
तजौ कुमती धरिये सुमती शुभ रामहिं राम ररौ निसि बासर॥

यह आठ जगण और एक लघु का लवंगलता नामक सवैया है।
जु योग लु=जगण आठ और लघु। जु योग लवंगलतानि लग्यो=
यदि प्रेम सुन्दर स्त्रियों से लग गया। ररौ=रटौ, कहौ।

क्रौंच (भ म स भ न न न न ग) ५, ५, ८, ७

क्रौंच वही है भूमि सुभौना, ननु न गुनत कछु, भ्रमत जलहि में।
भूमि सुभौना, चौगुन राजै, बसत सुमति युत, जहँ नर अरु ती।
शील सनेहा, औ नय विद्या, लखि तिनकर मन हरषति धरती।
पूत जहां है. मानस माता, जनक सहित नित, अरचन करिकै।
नारि सुशीला, क्रौंच समाना, पति वचननि सुन, तिय तन धरिकै॥

क्रौंच=बगुला। सु भौना=अच्छा घर। ननु=निश्चय। भूमि सुभौना
चौगु=भगण, मगण, सगण, भगण, नगण चार और गुरु।

अथोत्कृतिः (षड्विंशत्यक्षरावृत्तिः ६७१०८८६४)

भुजंगविजृम्भित (म म त न न न र स ल ग) ८, ११, ७

मो मीता नैना नारी सों, लगि सुधि न गरुड़ लखि ज्यों, भुजंगविजृम्भिता।
मो मीता नैना नारी सों, लगतहिं जप तप सिगरे, विनाशहिं पाव रे।
कामा क्रोधा ईर्षा याही, अघ जनक निकर अतिही, सदा मद भाव रे।
त्यागौयों ती इच्छा संगा, सुखद नसत प्रथम करी, जु कीरति संचिता।
प्यारी नागी क्रीड़ा भीनो, निरखतहि गरुड़ तज ज्यों, भुजंगविजृम्भिता॥

भुजंगविजृम्भिता=सर्प का आलस्य वा उसकी चेष्टा। संचिता=कमाई हुई।

सुख (स ८ + ल ल)

सब सों ललुआ मिलिके रहिये तुमहीं सुखदायक हौ मनमोहन।
सब सों ललुआ मिलिकै रहिये मम जीवन मूरि सुनौ मनमोहन।
इमि बोधि खवाय पियाय सखा सँग जाहु कहै मुद सों बन ओहन।
धरि मातु रजायसु सीस हरी नित यामुन कच्छ फिरैं सह गोपन।
यहि भांति हरी जसुदा उपदेसहिं भाषत नेह लहैं सुख सों धन॥

यह आठ सगण और दो लघुका सुख नामक सवैया है।
सब सों ललु=सगण आठ और दो लघु।
(अन्य नाम-किशोर, कुन्दलता।)

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे भानु-कविकृते समवृत्त वर्णनंनाम नवमो मयूखः॥९॥

अथ वर्णसमांतर्गत दण्डक प्रकरणम्।

दण्डक छब्बिस तें अधिक, साधारण गण संग।
मुक्तक गिनती बरण की, कहुं लघु गुरु प्रसंग ॥

जिस पद्य के प्रत्येक पद में वर्णसंख्या २६ से अधिक हो उसे दंडक कहते हैं। दंडक अर्थात् दंडकर्त्ता कहने का प्रयोजन यह है कि इसके प्रत्येक चरण इतने लम्बे होते हैं कि उसके उच्चारण करने में मनुष्यों की सांस भर आती है। यही एक प्रकार का दंड कहने मात्र को है। दंडक के मुख्य दो भेद हैं। १ साधारण दंडक जो गणबद्ध हैं, २ मुक्तक दंडक जो गणों के बंधन से मुक्त हैं। इनमें कहीं कहीं लघु अथवा गुरु की व्यवस्था रहती है। नीचे इनके कुछ भेद लिखते हैं।

(१) साधारण दंडक

१ चंडवृष्टिप्रपात	—न २+र ७	=२७ वर्ण
२ मत्तमातंगलीलाकर—र ९ वा अधिक		=२७, ३०, ३३ इत्यादि
३ कुसुमस्तवक	—स ९ वा अधिक	=२७, ३०, ३३ इत्यादि
४ सिंहविक्रीड़	—य ९ वा अधिक	=२७, ३०, ३३ इत्यादि
५ शालू	—त+न ८+लग	=२९
६ त्रिभंगी	—न ६ स स भ म स ग	=३४ वर्ण
७ अशोकपुष्पमंजरी—ग ल यथेच्छ—		१ नीलचक्र ३० वर्ण २ सुधानिधि ३२ ,,
८ अनंगशेखर	—ल ग यथेच्छ—	महीधर २८ ,,

(२) मुक्तक दंडक —

३१, ३२ वा ३३ वर्ण, कहीं कहीं वा अंत में गुरु वा लघु के नियम विशेष,	१ मनहर	३१ ,,
	२ जनहरण	३१ ,,
	३ कलाधर	३१ ,,
	४ रूपघनाक्षरी	३२ ,,
	५ जलहरण	३२ ,,
	६ डमरू	३२ ,,
	७ कृपाण	३२ ,,
	८ विजया	३२ ,,
	९ देवघनाक्षरी	३३ ,,

१ चण्डवृष्टिप्रपात (न न+र ७)

न नर ! गिरिधरै तजै भूलिकै राख जो चंडवृष्टिप्रपाताकुलै गोकुलै ।

टी०—प्रचंड जलवृष्टि से अति व्याकुल गोकुल की रक्षा जिन गिरिधारी श्रीकृष्णजी ने की हे नर ! उन्हें भूल के भी मत तज अर्थात् सदा सर्व्वकाल उनका भजन किया कर । यह 'न न र गिरि' अर्थात् नगण दो और रगण सात का 'चंडवृष्टिप्रपात' संज्ञक दंडक है ।

उ०—भजहु सतत राम सीता महामंत्र जासों महा कष्ट तेरो नसै मूल तें ।
तजहु असत काम को जो चहौ आपनो त्राण या दुष्ट भौजाल की शूल तें ॥
गुनहु मरम नाम को तार दीने महापातकी एकदा हू जपे राग सों ।
लहहु परम धाम को जाहि जोगी जती कष्ट साध्ये लहे हैं बड़े भाग सों ॥

सू०—इसी वृत्त के आगे एक एक रगण अधिक रखने से जो वृत्त बनते हैं वे सब 'प्रचित' कहाते हैं । प्रचित के भी रगणों के न्यूनाधिक्य के कारण अनेक उपभेद होते हैं उनमें से मुख्य २ नीचे दर्शाये जाते हैं । यथा —

नगण २ + रगण ८ का अर्ण
नगण २ + रगण ९ का अर्णव
नगण २ + रगण १० का ब्याल
नगण २ + रगण ११ का जीमूत
नगण २ + रगण १२ का लीलाकर
नगण २ + रगण १३ का उद्दाम
नगण २ + रगण १४ का शंख इत्यादि

परन्तु श्रीमद्गंगादासजी और श्रीकदारभट्टजी के मतानुसार दो नगण के पश्चात् सात वा सात से अधिक यगणों का प्रयोग करने से चंडवृष्टिप्रपात तथा प्रचित के ऊर्ध्व कथित उपभेद होते हैं । ऐसे दो नगण और सात वा सात से अधिक यगणों के दंडकों का दूसरा नाम 'सिंहविक्रांत' भी है ।

मत्तमातंगलीलाकर (र ९ वा अधिक)

रानि धीरै धरौ आजु माऱ्यो खरो कंस को मत्त
मातंग लीला करी श्याम ने ॥

टी०—हे रानि ! अर्थात् हे यशोदा रानी धीर धरो, आज तुम्हारे श्याम ने खेलते २ कंस का कुवलिया संज्ञक मस्त हाथी यथार्थ में मार डाला । यह 'रा निधि' अर्थात् रगण ९ का 'मत्तमातंगलीलाकर' दंडक है यथा —

उ०—योग ज्ञाना नहीं यज्ञ दाना नहीं वेद माना नहीं याकली माहिं मीता कहूं ।
ब्रह्मचारी नहीं दंडधारी नहीं कर्मकारी नहीं है कहा आगमै जो छहूं ॥
सच्चिदानंद आनंद के कंद को छांड़िकै रे मती मन्द ! भूलो फिरै ना कहूं ।
याहितें हौं कहौं श्याम ले जानकीनाह को गावहीं जाहि सानंद वेदा चहूं ॥

३ कुसुमस्तवक (स ६ वा अधिक)

सुरसै गुणवन्त पियै नित ज्यों अलिपुंज सुवृक्ष लता कुसुमस्तवकै ॥

टी०-गुणीजन सदा सत्संगरूपी सुरस का पान किया करते हैं जैसे भ्रमरों के समूह सुवृक्ष लतादिकों के (कुसुमस्तवक) पुष्प गुच्छों का सदा सुरस पीते है। यह 'सु रस गुण' अर्थात् ६+३=६ सगण का 'कुसुमस्तवक' नामक दंडक है। यथा—

उ०-छहरै सिर पै छबि मोर पखा उनके नथ के मुकता थहरैं थहरैं।
फहरै पियरो पट बेनी इतै उनकी चुनरी के झवा झहरैं झहरैं॥
रस रंग भिरे अभिरे हैं तमाल दोऊ रस ख्याल चहैं लहरैं लहरैं।
नित ऐसे सनेहसों राधिका श्याम हमारे हिय में सदा बिहरैं बिहरैं॥

४ सिंहविक्रीड़ (य ६ वा अधिक)

यचौ पंच इंद्री लगा सीय देवी सहस्राननै मारजो
सिंहविक्रीड़ वारी॥

टी०-सिंहवत् क्रीड़ा करनेहारी जिन आदिशक्ति जगज्जननी श्रीसीताजी महाराणी नें सहस्रानन दैत्य को मारा उन्हीं से निजेष्ट सिद्धर्थ य ज्ञानेन्द्रियां लगाकर याचना करो। यह 'यचौ पंच' अर्थात् ६ यगण का 'सिंहविक्रीड़' दंडक है यथा—

उ०-नहीं शोक मोहीं पिता मृत्यु केरो, लहे पुत्र चारी किये यज्ञकेतौ पुनीता।
नहीं शोक मोहीं लखी जन्म भूमी रमानाथ केरी अयोध्या भइ जो अमीता॥
नहीं शोक मोहीं कियो जोउ माता भलेई कहैं मोहिं मूढा सुबुद्धीरु मीता।
जरै नित्य छाती यहै एक शोका बिना पादत्राणा उदासी फिरैं राम सीता॥

५ शालू (त+न ८+ल ग) १४, १५

शालू तन अहि लग सपनहुँ जु न, हरि पद सरसिज सुमिरण करहीं।
पाये नर तन सब सन वर पुनि, किमि भ्रम परत न भवनिधि तरहीं॥
राधे रमण भजन कत विसरत, भटकत फिरत न बुध भल कहहीं।
चाहै भल भज प्रभु पद निशि दिन, शरण गहत जन अति सुख लहहीं॥

६ त्रिभंगी (न ६+स स भ म स ग)

न निसर ससि भमि सगरि लखत सखि ससि वदनी
ब्रज की रंगन रंगी श्याम त्रिभंगी॥

टी०-रासमंडल की रात्रि में चन्द्र को अचल देख किसी कवि की उक्तिः—सब ब्रज की सखियों को त्रिभंगी श्याम के प्रेम मे मग्न और चन्द्रमुखी देखकर

चन्द्रमा को भ्रम हुआ कि सत्य चंद्र मैं हूं या ये ब्रज गोपललनायें हैं इसी सोच में अपने स्थान से न हिला अर्थात् अचल रहा। यह न निसर इत्यादि नगण १ + नगण ५ अर्थात् ६ नगण फिर सगण सगण भगण मगण सगण और एक गुरु का 'त्रिभंगी' दंडक है। यथा छन्दोऽर्णवे—

उ०—सजल जलद तनु लसत विमल तनु श्रमकन त्यों झलको है उमगो है बुन्द मनो है। ध्रुव युग मटकनि फिरि फिरि लटकनि अनमिषि नैननि जो है हरषो है ह्वै मन मोहै। पगि पगि पुनि पुनि खिनखिन सुनि सुनि मृदु मृदु ताल मृदंगी मुरचंगी झांझ उपंगी। बरहिं बरहिं अरि अमित कलनि करि नचत अहीरन संगी बहु रंगी लाल त्रिभंगी॥

७ अशोकपुष्पमंजरी (ग ल यथेच्छ)

गौ लिये निजेच्छया फिरै गुपाल घाट घाट ज्यों
अशोक पुष्पमंजरी मलिन्द ॥

टी०-रोज रोज श्रीकृष्ण गौओं को लेकर स्थान २ पर चराने के हेतु अशोकपुष्पमंजरी के अर्थ मलिन्द के समान फिरा करते थे। 'गौ लिये 'निजेच्छया' अर्थात् गुरु लघु का यथेच्छ न्यास करने से यह 'अशोकपुष्पमंजरी संज्ञक दंडक सिद्ध होता है परन्तु प्रत्येक चरण में वर्णसंख्या समान रहे। यहां केवल १४ गुरु लघु के पदों का एक उदाहरण दिया जाता है—

उ०-सत्य धर्म नित्य धारि व्यर्थ काम सर्व्व डारि भूलिकै करौ कदा न निंद्यकाम।
धर्म अर्थ काम मोक्ष प्राप्त होय मात! तोहि सत्य सत्य अंत पाव राम धाम॥
जन्म बार बार मानुषी न पाइये जपो लगाय चित्त अष्ट जाम सत्य नाम।
राम राम राम राम राम राम राम राम राम राम राम राम राम॥

सू०—कवियों ने अशोकपुष्पमंजरी के निम्न लिखित भेद और मान लिये हैं—

(१) नीलचक्र ३० वर्ण (गुरु लघु)

रोज पंच प्राण गारि ग्वाल गो दसा बिचारि गाव
जक्तनाथ राज नीलचक्र द्वार॥

टी०—प्रतिदिन पंचप्राणों को गारि कर ग्वाल और गौओं की सुगति को ध्यान में लाकर श्री जगन्नाथजी का, जिनके द्वार पर नीलचक्र बिराजता है गुणगान किया करो। यह 'रोज' अर्थात् रगणजगणात्मक पांच समूहों का 'नीलचक्र' दंडक है। अथवा 'ग्वाल गोदसा' अर्थात् गुरु लघु (गो ५ + दसा १०) १५ बार क्रमपूर्वक आने से 'नीलचक्र' दंडक सिद्ध होता है। यथा काव्य सुधाकरे—

उ०—जानिकै समै भुवाल राम राज साज साजि ता समै अकाज काज कैकई जु कीन। भूपतें हराय बैन राम सीय बंधु युक्त बोल के पठाय बेगि काननै सु दीन। ह्वै रह्यो विलाप को कलाप सो सुनो न जाय राय प्राण भो प्रयाण पुत्र के विहीन। आयकै भरत्थ ह्वै विहाल कै नृपाल कर्म सोधि चित्रकूट गौन ह्वै तनै मलीन॥

(२) सुधानिधि ३२ वर्ण (गुरु लघु)

रोज प्राण नन्दपुत्र पै लगाय गोपि ग्वाल लोक भक्ति
दिव्य कीन है सुधानिधी समान॥

टी०—ब्रज के ग्वाल और गोपियों ने नन्दजी के पुत्र श्रीकृष्णजी पर पांचो प्राण लगाकर लोकों मे भक्ति को चंद्रवत् प्रकाशित कर दिया। यह 'रोज प्राण नंद' अर्थात् रगण जगण के पांच समूहों का और 'नंद' एक गुरु लघु का 'सुधानिधि' दंडक है। अथवा 'ग्वाल लोक ७ भक्ति ६' अर्थात् १६ बार क्रम से गुरु लघु आने से 'सुधानिधि' दंडक सिद्ध होता है। यथा काव्य सुधाकरे—

का करै समाधि साधि का करै विराग जाग का करै अनेक योग भोगहू करै सु काह। का करै समस्त वेद औ पुराण शास्त्र देखि कोटि जन्म लों पढ़ै मिलै तऊ कछू न थाह। राज्य लै कहा करै सुरेश औ नरेश हू न चाहिये कहूं सुदुःख होत लोक लाज माह। सात द्वीप खंड नौ त्रिलोक संपदा अपार ले कहा सु कीजिये मिलै जु आप सीय नाह।

८ अनंगशेषर (ल ग यथेच्छ)

लगा मनै अनंगशेखरै सु कौशलेश पाद वेद रीति रामहीं
विवाहि जानकी दई॥

टी०—(अनंग) विदेहजी ने निज (शेखर) शिरत्राण को सुचित्तता पूर्वक कौशलेश दशरथजी के पांवों पर लगा अर्थात् उन्हें प्रणाम कर वेद विहित रीति से श्रीरामचन्द्रजी को जानकी विवाह दी। यह 'लगा मनै' अर्थात् लघु गुरु के मनमाने न्यास से 'अनंग शेखर' दंडक सिद्ध होता है। यथा लक्ष्मणशतके:—

उ०—गरज्जि सिंहनादलों निनाद मेघनाद बीर क्रुद्धमान सानसो कृशानुबान छंडियं। लखी अपार तेज धार लक्खनौ कुमार बारि बान सों अपार धार वर्षि ज्वाल खंडियं। उड़ाय मेघ मालकों उताल रच्छपाल बाल पौन बान अत्र घाल कीस लाल दंडियं। भयो न होत होयगो न ज्यों अमान इन्द्रजीत रामचन्द्र बन्धु सों कराल युद्ध मंडियं॥

सू०—इसके प्रत्येक चरण में वर्ण संख्या समान रहनी चाहिये। इसे द्विनराचिका और महानाराच भी कहते हैं। इसका भी निम्न लिखित एक भेद माना गया है:—

महीधर (ल ग १४)

जरा जरा जु रोज रोज गाइ कै सकाव्य शक्तिरत्न लागि
याचिये महीधरै।

टी०-रोज रोज प्रभु के गुण गान द्वारा सुकाव्यशक्ति रूपी रत्न की प्राप्ति के अर्थ श्री प्रभु से याचना करो। यह 'ज र ज र ज र ज र ज ग' का अथवा 'रत्नलागि' १४ लघु गुरु का 'महीधर' दंडक है।

उ०-सदा सुसंग धारिये नहीं कुसंग सारिये लगाय चित्त सीख मानिये खरी।
वृथा न जन्म मानुषीहिं खोइये सुकाल पाय ध्याव ईश नित्य बंदना करी।
तजौ असत्य काम धार सत्य नाम अन्त पाव पर्म धाम जो जपै सबै घरी।
हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी हरी ॥

मुक्तक।

अक्षर की गिनती यदा, कहुँ कहुँ गुरु लघु नेम।
वर्ण वृत्त में ताहि कवि, मुक्तक कहैं सप्रेम ॥
(भिखारीदास)

टी०-मुक्तक उसे कहते हैं जिसके प्रत्येक पाद में केवल अक्षरों की संख्या काही प्रमाण रहता है अथवा कहीं २ गुरु लघु का नियम होता है। इसे मुक्तक इसलिये कहते हैं कि यह गणों के बंधन से मुक्त है अथवा कविजनों को मात्रा और गणों के बंधन से मुक्त करनेवाला है। इसके नौ भेद पाये जाते हैं:-

(१) मनहर (३१ वर्ण)

आठों जाम जोग राग, गुरु पद अनुराग, भक्ति रस प्याय संत,
मनहर लेत हैं ॥

टी०-आठों पहर जिनको योग से प्रेम है जो सदा गुरुपदानुरागी हैं। ऐसे संत संसारी लोगों को भक्ति रस का पान कराकर उनके मन को हर लेते हैं।

पिंगलार्थ ८+ जाम ८+योग + ८ राग ६ + १ अर्थात् ३१ वर्ण का मनहर वृत्त है। आठ और याम का योग=१६ और भक्ति ६+रस ६=५ पर यति है। इसे कवित्त, घनाक्षरी और मनहरण भी कहते हैं। इसमें अन्त का वर्ण गुरु होता है शेष के लिये गुरु लघु का नियम नहीं है। यथा—

सुन्दर सुजान पर मन्द मुसकान पर, बांसुरी की तान पर, ठौरन ठगी रहै।
मूरति विशाल पर, कंचनसी माल पर, हंसनसी चाल पर, खोरन खगी रहै।
भौहैं धनु मैन पर, लोने जुग रैन पर, शुद्ध रस बैन पर, वाहिद पगी रहै।
चंचल से तन पर, सांवरे बदन पर, नंद के नंदन पर, लगन लगी रहै।
श्याम तन घन पर, बिज्जु से बसन पर, मोहिनि हँसन पर, सोभा उमगी रहै।
खौर बारे भाल पर, लोचन विशाल पर, उर बन माल पर, खेलत खगी रहै।
जंघ जुग जाम पर, मंजु मोरवान पर, श्रीपति सुजान मति, प्रेम सों पगी रहै।
नूपुर नगन पर, कंज से पगन पर, आनँद मगन मेरी लगन लगी रहै।

सू०—मनहर के अन्त मे प्रायः तीन गुरु का एक पूर्ण शब्द नहीं पाया जाता। यों तो सभी छंदों की संज्ञा कवित वा कवित्त है, परन्तु आजकल कवित्त शब्द मनहरण, जलहरण, रूपघनाक्षरी और देवघनाक्षरी के लिये ही विशेष कर व्यवहृत होता है। कवित्त की लय ठीक होने के लिये प्रथम उसकी ध्वनि ठीक कर लो। दूसरे उसकी रचना में सम वा विषम प्रयोग का उचित निर्व्वाह करो। कवित्तों में समप्रयोग बहुत कर्णमधुर होते हैं। यदि कहीं विषम प्रयोग आजाये तो उसी के आगे एक विषम प्रयोग और रख देने से उसकी विषमता नष्ट होकर समता प्राप्त हो जाती है और वे भी कर्ण मधुर हो जाते हैं। इस नियम को प्रधान नियम जानो। यह तो पहिले ही लिख चुके हैं कि विभक्ति सहित शब्द को पद कहते हैं। जैसे घरहि, रामहिं, कंज से इत्यादि। इनमें १ ३ वा ५ वर्णों में पूर्ण होने वाले पद विषम और २, ४ वा ६ में पूर्ण होने वाले सम कहाते हैं।

कवित्त रचने के विषय में साधारण नियम यह है कि ८, ८, ८, ७ वर्णों का प्रयोग हो। यथा संभव इन्हीं में पाद पूर्ण होते जावें। यदि यह न हो सके तो १६ और १५ पर अवश्य ही पद पूर्ण हों। कहीं २ पद योजना ऐसी आ पड़ती है कि इस नियम के हिसाब से उसमें कुछ अन्तर दीख पड़ता है, यथा—८, ८, ७, ८ वा ७, ६, ७, ८ परन्तु लय के अनुसार मिलान करके देखिये तो यथार्थ में मूल सिद्धांत में कोई अन्तर नहीं पड़ता, क्योंकि एक की विषमता दूसरे में लुप्त हो जाती है और फिर ८, ८, ८, ७ ही सिद्ध होते हैं। लय के अनुसार प्रथमाष्टक में ही सम विषम की विवेचना कर लेनी चाहिये। कवित्त में लय ही मुख्य है। नीचे लिखे उदाहरण देखिये—

१ सम प्रयोग ८, ८, ८, ७

१ (पद)—रैन दिन आठो जाम, राम राम राम राम,
सीताराम सीताराम सीताराम कहिये।

सू०—अन्त का सप्तक सात वर्णों के कारण सदा विषम रूप वा सम विषम वा विषम सम रहता है। इस चरण में पद और लय दोनों एक समान हैं।

२ (पद)—कहैं पदमाकर, पवित्रपन पालिबे को, चोर चक्रपाणिके, चरित्रन को चहिये।

(लय)—कहैं पदमाकर, पवित्रपन पालिबे को, चोर चक्रपाणि केच, रित्रन को चहिये।

सू०—यहां पदानुसार ७, ६, ७, ८ वर्ण है परन्तु लयानुसार ८, ८, ८ ७ ही हैं।

२ विषम विषम सम प्रयोग ८, ८, ८, ७

१ (पद)—नूपुर नगन पर, कंज से पगन पर, आनँद मगन मेरी लगन लगी रहे।

सू०—इस चरण में पद और लय दोनों एक समान हैं।

२ (पद)—कुंजमें ललित केलि, करि राधिकादिक सों, प्रेम के प्रकाश को प्रगट कौन करतो।

(लय) कुंजमें ललित केलि, करि राधिकादिक सों, प्रेम के प्रकाश कोप्र, गट कौन करतो।

सू०—इस चरण में पदानुसार ८, ८, ७, ८ और लयानुसार ८, ८, ८, ७ वर्ण हैं।

३ (पद—अवध बिहारी के, विनोदन में बीधि बीधि, गीध गुह गीधे के, गुणानुवाद गाइये।

(लय) -अवध विहारी के वि, नोदन में बीधिबीधि, गीध गुह गीधे केगु, णानुवाद गाइये।

सू०—इस चरण में पदानुसार ७, ६, ७, ८ और लयानुसार ८, ८, ८, ७ वर्ण हैं।

३ सम विषम विषम प्रयोग (निकृष्ट)

१ (पद)—कोऊ काहू में मगन, कोऊ काहू में मगन, हम वाही में मगन जासों लगन लगी।

सू०—३१ वर्णों के कवित्त में सम विषम विषम प्रयोग निकृष्ट है, ऐसा प्रयोग ३२ वर्णों के कवित्त में कर्णमधुर होता है। जैसे—

(पद)—कोऊ काहू में मगन, कोऊ काहू में मगन, हम वाही में मगन जासों लागी है लगन।

४ विषम सम विषम प्रयोग (निषिद्ध)

	(निषिद्ध)	(मधुर)
१ (पद)—	कुंज में केलि ललित।	कुंज में ललित केलि।
२ (पद)—	कौन को गाय सुजस।	कौन को सुजस गाय।

सू०—यह आवश्यक नहीं कि कवित्त के चारों चरणों में आदि से अन्त तक किसी एक प्रयोग विशेष की ही योजना की जावे। प्रत्येक चरण में भी अपनी २ रुचि तथा शक्त्यनुसार एक वा अधिक समुचित प्रयोगों की योजना हो सकती है। केवल निकृष्ट और निषिद्ध प्रयोग से बचना चाहिये। ३२ तथा ३३ वर्णों के कवित्त में भी ये ही विचार उपयोगी हैं। उपरोक्त नियमों का सारांश नीचे के कवित्त में दिया गया है विद्यार्थियों को चाहिये कि इसको कंठस्थ कर लें:—

आठ आठ आठ पुनि, सात बरननि सजि, अंत इक गुरु पद, अवसहि धरिकै।
सम सम सम सम, विषम विषम सम, सम विषमहुं दोय, प्रति आठ करिकै॥
दोय विषमनि बीच, सम पद राखिये ना राखे लय नष्ट होत, अतिहि बिगरिकै।
हरि पद परिकै जु, सुमति सुधरिकै सो, रचिये कवित्त इमि, गुरुहिं सुमरिकै॥

प्रत्येक सवैया और कवित्त को दुहराकर पढ़ना उचित है क्योंकि उसका सम्पूर्ण आशय चतुर्थ पद व चतुर्थ पद के उत्तरार्द्ध के आश्रित रहता है जब तक चतुर्थ पद पढ़ने का समय आता है तब तक पहिले तीन चरणों का सम्बन्ध ठीक स्मरण नहीं रहता परन्तु दुहराने से सब आशय भलीभांति समझ में आ जाता है ।

[२] जनहरण (३० ल + १ ग = ३१ वर्ण)

लघु दिशि वसु वसु फल गुरु इक पद, भल धरु चित कलिमल जन हरणा ॥

टी०-संसार के दसों दिशाओं में बसु (धन) बसु (रत्न) तथा उनके (फल) परिणाम सब लघु अर्थात् तुच्छ हैं केवल एक गुरु पद ही सब से श्रेष्ठ है। हे नर ! ऐसा समझकर चित्त में जनों के कलिमल को नाश करनेहारे गुरुपद ही का सेवन करो । यह दिशि १०, वसु ८, वसु ८, फल ४ = ३० लघु का और अन्त में एक गुरु का जनहरण दंडक है । यथा—

उ०-यदुपति जय जय नर नरहरि जय जय कमल नयन जय गिरधरये ।
जगपति हरि जय जय गुरु जग जय जय मनसिज जय जय मनहरये ।
जय परम सुमतिधर कुमतिन छयकर जगत तपत हर नरवरये ।
जय जलज सदृश छबि सुजन-नलिन रवि पढ़त सुकवि जस जग परये ॥

सू०--किसी २ कवि ने इसको जलहरण लिखा है वह प्रमाणिक नहीं है। बाबा रामदासजी गणप्रस्तार प्रकाश प्रणेतृ ने इसी को मनहरण माना है।

[३] कलाधर (गुरु लघु १५ + ग = ३१ वर्ण)

ग्वाल सात आठ गोपि कान्ह संग खेल रास भानुजा सु तीर चारु चांदनी कलाधरा ॥

टी०-चन्द्र की सुन्दर चांदनी रात में यमुना के तीर पर श्रीकृष्ण गोपियों और सात आठ ग्वालों के साथ रास खेलते हैं । यह 'ग्वाल सात आठ गो' अर्थात् १५ गुरु लघु क्रमपूर्वक और अन्त में एक गुरु का 'कलाधर' संज्ञक दंडक है । यथा काव्य सुधाकरे—

उ०-आय के भरत्थ चित्रकूट राम पास बेगि हाथ जोरि दीन ह्वै सुप्रेम तें विनै करी । सीय तात मात कौशिला वशिष्ठ आदि पूज्य लोक वेद प्रीति नीति की सुरीतिही धरी । जान भूप बैन धर्म पाल राम ह्वै सकोच धीर दे गँभीर बंधु की गलानि को हरी । पादुका दई पठाय औध को समाज साज देख नेह राम सीय के हिये कृपा भरी ॥

[४] रूपघनाक्षरी (३२ वर्ण अन्त्य लघु)

राम राम राम लोक नाम है अनूप रूप घन अक्षरी है भक्ति भवसिंधु हर जाल ॥

टी०-इस संसार में राम नाम अनुपम है। इस नामी के रूप की (घन) अविरल एवं (अक्षरी) क्षयरहित भक्ति, जनों के आवागमन को हरण करने के लिये कारणभूत होती है। पिंगलार्थ—इसके प्रत्येक चरण में राम३+राम ३ +राम ३+लोक ७+भक्ति ६+भवसिंधु ७' सोलह सोलह वर्णों के विश्राम से ३२ वर्ण होते हैं। यह बत्तीसाक्षरी अत्य लघु का 'रूपघनाक्षरी' संज्ञक कवित्त है। यथा छन्दविनोदे—

उ० १-रूपक घनाक्षरीहुँ गुरु लघु नियम न बत्तीस वरण कर रचिये चरन चारि। कीजे विसराम आठ आठ आठ आठ करि अन्त एक लघु धरि त्यों नियम करि धारि। या विधि सरस भाग छन्द गुरु सेसनाग कीनो कविराजन के काज बुद्धितें विचारि। पद्य सिंधु तरिबे को रचना के करिबे को पिंगल बनायो भेद पढ़ि सुद्ध कै सुधारि।

उ० २-बेर बेर बेर लै सराहैं बेर बेर बहु रसिक बिहारी देत बंधु कहँ फेर फेर। चाखि चाखि भाषैं यह बाहु ते महान मीठो लेहु तो लखन यों बखानत हैं हेर हेर। बेर बेर देबै बेर सबरी सु बेर बेर तऊ रघुबीर बेर बेर तेहि टेर टेर। बेर जनि लावो बेर बेर जनि लावो बेर बेर जनि लावो बेर लावो कहै बेर बेर॥

सू०-रूपघनाक्षरी के अन्त में ऽ। गुरु लघु अवश्य होते हैं।

(५) जलहरण (३२ वर्ण)

बसु जाम रच्छ गोपि ग्वाल जलहरण कै भजु नित नव गिरधारी के जुगल पद॥

टी० अमरनाथ इंद्र के पूज पर कुपित हो प्रचंड वृष्टि करने पर जिन गिरधारी श्रीकृष्णजी ने उस वृष्टि को हरण कर तत्रस्थ गोपि ग्वालों की रक्षा की उन्हीं के युगल पदों का भजन आठो याम करना समुचित है। यह ३२ वर्णों का जलहरण' दंडक है। पहिले बसु ८+जाम ८=१६ पर यति और फिर नव ६+गिरि ७=१६ पर यति होती है। 'युगलपद' अर्थात् प्रत्येक पद के अन्त में दो लघु होते हैं और कहीं २ 'गोपि' पादांत में एक गुरु भी होता है परन्तु उसका उच्चारण प्रायः लघुवत ही होता है।

उ०-भरत सदा ही पूजे पादुका उते सनेम इते राम सीय बंधु सहित सिधारे बन। सूपनखा कै कुरूप मारे खल झुंड घने हरी दससीस सीता राघव बिकल मन। मिले हनुमान त्यों सुकंठ सों मिताई ठानि वाली हति दीनों राज्य सुग्रीवहिं जानि जन। रसिक बिहारी केसरी कुमार सिंधु लांघि लंक जारि सीय सुधि लायो मोद बाढ़ो तन॥

उ० २-चालै क्यों न चन्द्रमुखी चित्त में सुचैन करि नित बन बागन घनेरे अलि घूमि रहे। कहैं पद्माकर मयूर मंजु नाचत हैं चाय सों चकोरिनि चकोर चूमि चूमि रहे। कदम अनार आम अगर अशोक थोक लतनि समेत लोने लोने लगि भूमि रहे। फूलि रहे फल रहे फैलि रहे फबि रहे झपि रहे झलि रहे झुकि रहे झूमि रहे।

[६] डमरू ।

हर हर सरस रटत नस मल सब डम डम डमरू बजत
शिव बम बम ॥

टी०- जिन बम्भोलानाथ के डमरू से कल्याणकारी 'डमडम' शब्द प्रगट होता है उनको जो सरस अर्थात् भक्तिरस में लीन होकर रटता है उसके सब (मल) अघ नाश हो जाते हैं। 'यह हर ११+हर ११+सर ५+सर ५'=३२ वर्णों का डमरू दंडक है। 'ल सब' अर्थात् इसके बत्तीसों वर्ण लघु होते हैं। यथा रामविलास रामायणे—

उ०-रहत रजत नग नगर न गज तट गज खल कल गर गरल तरल धर।
न गनत गन यश सघन अगन गन अतन हतन तन लसत नखत कर॥
जलज नयन कर चरण हरण अघ शरण सकल चर अचर खचर तर।
चहत छनक जय लहत कहत यह हर हर हर हर हर हर हर हर॥

[७] किरपान वा कृपाण ।

बसु बरन बरन धरि चरन चरन कर समर बरन
गल धरि किरपान ।

टी०-सब मनुष्यों को उचित है कि बहुत सावधानी पूर्वक अपने २ वर्णाश्रम धर्मों का यथावत् पालन करें और श्रेष्ठों से कलह न करें क्योंकि श्रेष्ठों से कलह करना मानो अपने हाथों अपने गले पर कृपाणाघात करना है। पिंगलार्थ—प्रत्येक चरण में (बसु ८×चरण ४) आठ आठ के विश्राम से ३२ वर्णों का प्रयोग करने से 'किरपान' वा 'कृपाण' संज्ञक दंडक बनता है। इस वृत्त में आठ आठ वर्णों पर यति सानुप्रास होती है। अन्त में 'गल' अर्थात् गुरु लघु होते हैं। प्रायः इस वृत्त में बीर रस वर्णन किया जाता है। यदि इसके प्रत्येक चरण के अन्त मे नकार का प्रयोग किया जाय तो अतीव ललित एवं कर्णमधुर होता है। यथा जानकीसमरविजय से उद्धृत १-५ और निजकृत ५-८ तक श्रीकालिकाष्टक—

चली ह्वै के विकराल महाकालहू को काल किये-दोउ दृग लाल धाई रन समुहान। जहां क्रुद्ध ह्वै महान युद्ध करि घमसान, लोथि लोथि पै लदान तड़पी ज्यों तड़ितान। जहां ज्वाला कोट भान के समान दरसान, जीव जन्तु अकुलान भूमि लागी थहरान। तहां लागे लहरान निसिचरहूं परान, वहां कालिका रिसान झुकि झारी किरपान ॥१॥ जहां छूटत हैं बान गोला गोली के समान, नहीं आपनो बिरान तहां केहू निगरान। कहूं छूरी पटा ठान मांड़ि जुद्ध बे प्रमान, कै कटारन कटान किये मथुरी भुजान। मनौ दांतन पै सान चिथि आंतन रिसान, करै कहां लों बखान भये अकह कहान। तहां झमकि झमकि पगु धरति ठमकि कर लमकि लमकि काली झारै किरपान ॥ २॥ लाल रसना अपार बारविथुरे सेवार, बंक भृकुटी सुधार लगी खेलै चवगान। मची महा ललकार, धरु धरु मार मार, चलो रुधिर अपार लगी नदी

लहरान। तहां लैकरि दुधार पिले झूमत जुझार, मानै जीतऊ न हार धूरि छाई आसमान। तहां ठमकि ठमकि पगु धरति झमकि, कर लमकि लमकि काली झारै किरपान ॥ ३ ॥ जहां झिलिम अपार बखतर बेसुमार, काटि कीन्हें तहां छार खुसी गिद्ध वो मसान। जुरी जोरी नीकी जूह चहुं ओर करि हूह, निसिचर के समूह धरि करत पिसान। तहां काटैं मुंडमाल खून चाटैं ततकाल, मारि दोऊ करताल को लखावैं घमसान। तहां ठमकि ठमकि पगु धरति झमकि, कर लमकि लमकि काली झारै किरपान ॥ ४ ॥ जहां सूल सेल सांग मुगदर की लड़ान, बाक बिछुवा मचान सोर छायो चहुं घान। तहां लपटि लपटि मुंड कीन्हे चटकान कहुं रावन हजार सीसहूं को न लखान। घनै घूमै घबरान जाके तऊ नहिं जान, केते चढ़ि कै विमान बीर बोलैं करखान। तहां ठमकि ठमकि पगु धरति झमकि, कर लमकि लमकि काली झारै किरपान ॥ ५ ॥ देखि कालिका को जंग सब होय जात दंग, मति कबिहू की पंग नहीं सकत बखान। कहूं देखो न जहान नहिं परो कहूं कान, ऐसो युद्ध भो महान महा प्रलय लखान। यातु-धान कुलहान देखि देव हरखान, मन मुदित महान हनै तबल निसान। जब झमकि झमकि पग ठमकि ठमकि, चहुं लमकि लमकि काली झारी किरपान ॥६॥ रूप देखि विकराल कांपै दसो दिगपाल अब ह्वै है कौन हाल शेषनाग घबरान। महा प्रलय समान मन कीन अनुमान, राम रावण को युद्ध काहू गिनती न आन। लखि देवन अँदेश विधि हरि औ महेश, तब साथ लै सुरेश करी अस्तुति महान। माई कलिकाकी जय, माई कालिकाकी जय, माई हूजे अब शांत खूब झारी किरपान ॥ ७ ॥ सुनि विनय अमान रूप छांड़ो है भयान, सब मन हर खान करैं माई गुण गान चढ़ि चढ़ि के विमान देव छाये आसमान, लिये पूजा को समान, बहु फूल बरखान। थाके वेद औ पुराण माई करत बखान, यश तेरो है महान किमि कहैं लघु भान। दीजे यही बरदान दास आपनो ही जान रहै बैरन पै सान चढ़ी तोरी किरपान ॥ ८ ॥

दो०—समर विजय अष्टक सुभग, गावहिं जे मनलाय।
विजय सदा जग में लहैं, सुख सम्पति अधिकाय ॥

(८ विजया (३२ वर्ण)

बरण बसु चारिये चरण प्रति धारिये,
लगन ना बिसारिये, सुविजया सम्हारिये।

टी० – एक संत की प्रार्थना–हे जगज्जननी श्रीमती जानकी जी! आप विजया नाम से परिचित हैं और आदि शक्ति हैं बिना आप की कृपा हम सब शक्तिहीन हैं। अतएव 'वरण बसु' वर्णाश्रम में बसने हारे अर्थात् हम चारों प्रकार के वर्णाश्रमियों को अपने चरण में शरण दीजिये। कृपा न बिसारिये। हे माता! हम सबों का उद्धार कीजिये। पिंगलार्थ आठ आठ वर्णों की चार

चौकड़ी अंत में 'लगन' लघु गुरु अथवा नगन भी होता है। कवित्तों के विपरीत इस दंडक में सम सम के अतिरिक्त दो विषमों के बीच सम पद भी होता है। यथा सुन्दरविलासे—

भई हूँ अति बावरी बिरह घेरी बावरी चलत है चवावरी परोगी जाय बावरी।
फिरतिहुं उतावरी लगत नाहीं तावरी सुवारी को बतावरी चल्यो है जात दांवरी।
थके हैं दोऊ पांवरी चढ़त नाहीं पांवरी पियारो नाहीं पांवरी जहर बांटि खांवरी।
दौरत नाहीं नावरी पुकार के सुनावरी सुन्दर कोऊ नावरी डूबत राखे नांवरी।

दूसरा उदाहरण नगनांत जिसमें सब प्रयोग सम विषम विषम रहते हैं—

कोऊ खान में मगन, कोऊ पान में मगन, कोऊ तान में मगन, कोऊ दान में मगन। कोऊ संत में मगन, कोऊ तंत में मगन, कोऊ रहत मगन, सदा शिव के पगन। कोऊ संग में मगन, कोऊ भंग मे मगन, कोऊ रहत मगन, तप करत नगन। कोऊ काहू में मगन, कोऊ काहू में मगन, हम कृष्ण में मगन, जासों लागी है लगन ॥

सू०-मनहर, रूपघनाक्षरी, जलहरण, कृपाण, विजया तथा देवघनाक्षरी वर्णदंडककांतर्गत मुक्तक के भेदों में से हैं इसी कारण ग्रन्थारम्भ में जो दोहा मात्रिक और वर्णवृत्तों के भेदों का दिया गया है, उसके नियम से ये मुक्त हैं। इनको उस नियम के अपवाद (Exception) समझो।

(६) देवघनाक्षरी [३३ वर्ण]

राम योग भक्ति भेव जानि जपै महादेव,

घनअक्षरी सी उठै दामिनी दमकि दमकि।

टी०--श्रीमद्रामचन्द्रजी बिषयक भक्ति योग के प्रभाव को जानकर श्रीमहादेवजी निरन्तर राम नाम का जप करते हैं। कैसी है वह भक्ति कि जिसकी कांति [हृदय में] अक्षयमेघमाला की दामिनीवत् सदा दैदीप्यमान रहती है। यह राम ३×योग ८ = २४ + भक्ति ६=३३ वर्णों का देवघनाक्षरी वृत्त है। ८, ८, ८, ६ पर यति है। इसके अंतिम तीनो वर्ण लघु होते हैं और ऐसे ही दुहरे प्रयोग रोचक होते हैं जैसे—

झिल्ली झनकारैं पिक चातक पुकारैं बन मोरनि गुहारैं उठैं जुगुनू चमकिचमकि
घोर घनघोर भारे धुरवा धुरारे धाम धूमनि मचावैं नाचैं दामिनी दमकि दमकि।
झूकनि बयार बहै लूकनि लगावै अंक हूकनि भभूकनि का उरमें खमकि खमकि।
कैसे करि राखौं प्राण प्यारे जसवन्त बिन नान्हीं नान्हीं बूंद झरै मेघवा झमकि झमकि ॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे भानु कविकृते वर्णसमान्तर्गदंडकवर्णनन्नाम दशमो मयूखः ॥ १० ॥

अथ वर्णार्द्धसम प्रकरणम् ।

विषम विषम सम सम चरण, तुल्य अर्द्ध सम वृत्त ।

जिस वर्णवृत्त के पहिले और तीसरे चरण में और दूसरे और चौथे चरण में समता हो उसे अर्द्धसमवृत्त कहते हैं ।

अर्द्धसमवृत्तों की संख्या जानने की यह रीति है कि जहां चारों चरणों के अक्षर सम हों तो प्रथम चरण के वर्णों की वृत्त संख्या को दूसरे चरण के वर्णों की वृत्त संख्या से गुणा करो और जो गुणनफल आवे उसमें से उसी गुणनफल की मूलराशि घटा दो जो शेष रहे उसी को उत्तर जानो । और जहां सम विषम चरणों में भिन्नाक्षर हों वहां प्रथमचरण के वर्णों की वृत्त संख्या को दूसरे चरण के वर्णों की वृत्त संख्या से गुणा करो जो गुणनफल आवे उसी को उत्तर जानो ॥

वर्णिक संख्या एक सम, चहुँ चरणनि जहँ होय ।
मूल राशिहृत गुणनफल वृत्त अर्द्धसम सोय ।
वर्ण विषम सम चरण की, संख्या जहँ न समान ।
वृत्त भेद गुण तिनहि के, वृत्त अर्द्ध सम जान ॥

	पहिला चरण (विषम)	दूसरा चरण (सम)	तीसरा चरण (विषम)	चौथा चरण (सम)	रीति और संख्या
			सम विषम पाद समान वर्ण		
वर्ण	४	४	४	४	(१) १६×१६=२५६-१६=२४० । समान वर्णोंमें मूलराशिघटानी पड़ती है क्योंकि उसके समान समवृत्तों के भेद आ पड़ते हैं ।
वृत्त	१६	१६	१६	१६	
					(२) समान वर्णोंमें वृत्त की संख्या से १ घटाव, शेष को वृत्त की संख्या से गुणा करो यथा- १६-१=१५×१६=२४० ।
			सम विषम पाद असमान वर्ण		
वर्ण	३	४	३	४	८×१६=१२८ वा ३+४=७ जिसकी वृत्त संख्या १२८ ।
वृत्त	८	१६	८	१६	
			(रूपान्तर)		
वर्ण	४	३	४	३	१६×८=१२८ वा ४+३=७ जिसकी वृत्त संख्या १२८ ।
वृत्त	१६	८	१६	८	

प्रश्न-(१) प्रतिपद एक एक वर्ण के (२) प्रतिपद दो दो वर्णों के और (३) विषम चरणों में एक एक वर्ण और सम चरणों मे दो दो वर्णों के कितने अर्द्धसम वृत्त होंगे? क्रिया सहित उनके रूप लिखो।

उत्तर-(१) १ वर्ण के २ भेद, २×२=४-२ (मूलराशि)=२

(२) २ वर्ण के ४ भेद, ४×४=१६-४ (मूलराशि)=१२

(३) १ वर्ण के २ भेद, २ वर्णों के ४ भेद २×४=८

नीचे इनके रूप लिखे जाते हैं:—

	पहिल पद	दूसरा पद	तीसरा पद	चौथा पद	मूलराशि के भेद जो छोड़े गये
			प्रतिपद एक एक वर्ण		
१	ऽ	।	ऽ	।	ऽ ऽ ऽ ऽ सम
२	।	ऽ	।	ऽ	। । । । सम
			(प्रतिपद दो दो वर्ण)		
१	। ऽ	ऽऽ	। ऽ	ऽऽ	ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ सम
२	ऽ ।	ऽऽ	ऽ ।	ऽऽ	। ऽ । ऽ । ऽ । ऽ सम
३	॥	ऽऽ	॥	ऽऽ	ऽ। ऽ। ऽ। ऽ। सम
४	ऽऽ	। ऽ	ऽऽ	। ऽ	॥ ॥ ॥ ॥ सम
५	ऽ ।	। ऽ	ऽ ।	। ऽ	
६	॥	। ऽ	॥	। ऽ	
७	ऽऽ	ऽ ।	ऽऽ	ऽ ।	
८	। ऽ	ऽ ।	। ऽ	ऽ ।	
९	॥	ऽ ।	॥	ऽ ।	
१०	ऽऽ	॥	ऽऽ	॥	
११	। ऽ	॥	। ऽ	॥	
१२	ऽ ।	॥	ऽ ।	॥	
			(विषम पदों में १ और सम पदों में २ वर्ण)		
१	ऽ	ऽऽ	ऽ	ऽऽ	जहां विषम और सम पदों
२	।	ऽऽ	।	ऽऽ	
३	ऽ	। ऽ	ऽ	। ऽ	के वर्णों की संख्या भिन्न २ हो
४	।	। ऽ	।	। ऽ	
५	ऽ	ऽ ।	ऽ	ऽ ।	वहां मूलराशि की संख्या नहीं
६	।	ऽ ।	।	ऽ ।	
७	ऽ	॥	ऽ	॥	घटती है।
८	।	॥	।	॥	

इसी प्रकार और भी जानो। प्रस्तार की रीति से यदि सम्पूर्ण भेद निकालने बैठो तो असंख्य भेद प्रगट होंगे। परन्तु प्राचीन मतानुसार यह केवल कौतुक और समयनाशक है और यथार्थ में इनके न जानने से कोई विशेष हानि भी नहीं है। विद्यार्थियों को मुख्य २ नियम ही जानना बस है। अब इसके आगे वृत्तों का वर्णन किया जाता है—

१ वेगवती।

विषम चरण--स स स ग, सम चरण--भ भ भ ग ग। यथा—

गिरिजापति मो मन भायो। नारद शारद पार न पायो।
कर जोर अधीन अभागे। ठाढ़ भये बरदायक आगे॥

२ भद्रविराट।

विषम चरण--त ज र ग, सम चरण--म स ज ग ग। यथा—

लोकेश हरी रमा बिहारी। केशी काल कृपा करो मुरारी।
वीरेश हरी विभू मुरारी। मेरी तारण की भई सुवारी॥

३ द्रुतमध्या।

विषम चरण--भ भ भ ग ग, सम चरण--न ज ज य। यथा—

रामहि सेवहु रामहिं गावो। तन मन दै नित सीस नवावो।
जन्म अनेकन के अघ जारो। हरि हरि गा निज जन्म सुधारो॥

४ उपचित्र।

विषम चरण--स स स ल ग, सम चरण--भ भ भ ग ग। यथा—

करुणानिधि माधव मोहना। दीन दयाल सुनो हमरी जू।
कमलापति यादव सोहना। मैं शरणागत हौं तुम्हरी जू॥

५ केतुमती।

विषम चरण--स ज स ग, सम चरण--भ र न ग ग। यथा—

प्रभुजी दयालु मुहिं तारो। तो मन तें सबै अघ निकारो।
जन आपनो मत बिसारो। राम अनाथ को लखि उबारो॥

६ हरिणप्लुता।

विषम चरण--स स स ल ग, सम चरण--न भ भ र। यथा—

हरिको भजिये दिन रात जू। टरहिं तोर सबै भ्रमजाल जू।
यह सीख जु पै मन में धरौ। सहज में भवसागरहीं तरौ॥

७ अपरवक्र।

विषम चरण--न न र ल ग, सम चरण--न ज ज र। यथा—

सब तज सरना गहौ हरी। दुख सब भागहिं पापहूं जरी।
हरि विमुखन संग ना करी। जप दिन रैन हरी हरी हरी॥

८ पुष्पिताग्रा ।

विषम चरण न न र य, सम चरण त ज ज र ग । यथा—

प्रभु सम नहि अन्य कोई दाता । सु धन जु ध्यावत तीन लोकत्राता ॥
सकल असत कामना बिहाई । हरि नित सेवहु मित्त चित्त लाई ॥
परि पतति पयोनियौ पतंगः सरसिरुहामुदरेषु मत्त भृङ्गः ।
उपवन तरुको रे बिहंग स्तरुण जनेषु शनै शनैरनंगः ॥

आख्यानिकी ।

विषम चरण-त त ज ग ग, सम चरण ज त ज ग ग । यथा—

गोविंद गोविंद सदा ररौ जू । असार संसार तबै तरौ जू ॥
श्रीकृष्ण राधा भजु नित्य भाई । जु सत्य चाहौ अपनी भलाई ॥

१० विपरीताख्यानिकी ।

बिषम चरण-ज त ज ग ग, सम चरण-त त ज ग ग । यथा—

असार संसार तबै तरौ जू । गोविंद गोविंद सदा ररौ जू ॥
जु सत्य चाहौ अपनी भलाई । श्रीकृष्ण राधा भजु नित्य भाई ॥

११ मंजुमाधवी ।

तुकांतहीना उपजाति साथ, मिलै जहां माधव द्वादशाक्षरी ।
एकादश द्वादश अक्षरांगी, वहां बखानो मति मंजु माधवी ॥

टी० – जिस वृत्त में (इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रांतर्गत) उपजाति और (वंशस्थविलम् और इन्द्रवंशांतर्गत) माधव वृत्त का संयोग हो उसे 'मंजु माधवी' कहते हैं । यह वृत्त तुकांतहीन भी मधुर होता है । इसके विषम चरण ११, ११ वर्णों के और सम चरण १२, १२ वर्णों के हों अथवा विषम चरण १२, १२ वर्णों के और सम चरण ११, ११ वर्णों के हों । ध्यान रहे कि जहां ये नियम घटित न हों अर्थात् जिसके विषम विषम और सम सम चरणों के वर्ण एक समान न हो तो वह विषम वृत्तों के भेद में गिना जावेगा । "पादांतस्थं विकल्पेन" इस प्रमाण से प्रथम पद के अन्त का 'थ' गुरु मानना चाहिये, उसी प्रकार तीसरे चरण में 'एकादश' शब्द के अन्तिम 'श' को 'संयुक्ताद्यं दीर्घं' इस प्रमाण से गुरु मानो ।

१२ यवमती ।

विषम चरण–र ज र ज, सम चरण-ज र ज र ग । यथा—

त्यागि दे सबै जु हैं असत्य काम । सुधार जन्म आपनो न भूल रामा ।
गाइये जु राम राम राम राम । तनै मनै धनै लगा जपौ सुनामा ॥

१३ शिखा

विषम चरण--२८ ल+ग, सम चरण--३० ल+ग । यथा—

नर धन जग महँ नित उठ नगपति कर जस बरनत अति हित सों ।
तन मन धन सन जपत रहत तिहिं कर भजन करत भल अति चित सों ॥
किमि अरसत मन भजत न किमि तिहि भज भज भज शिव धरि चितहीं ।
हर हर हर हर हर हर हर हर हर हर हर हर कह नितहीं ॥

१४ खंजा।

विषम चरण–३० ल+ग, सम चरण–२८ ल+ग। यथा—

नर धन धन जग महँ नित उठ नगपति कर जस बरनत अति हित सों।
तन मन धन सन जपत रहत तिहि भजन करत भल अति चित सों॥
किमि अरसत मन भजत न किमि तिहिं भज भज भज भज शिव धरि चितहीं॥
हर हर हर हर हर हर हर हर हर हर हर हर कह नितहीं॥

शिखा और खंजा वृत्त में २६ अक्षरों से अधिक अक्षर हैं परन्तु इनकी गणना दंडक में इसलिये नहीं की है कि इनके चारों पद समान नहीं होते।

अर्द्धसम वृत्तों का प्रयोग विशेष कर संस्कृत ही में पाया जाता है भाषा में इन वृत्तों का बहुत कम प्रचार है।

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे भानुकविकृते वर्णार्द्धसम वृत्त वर्णनंनाम एकादशो मयूखः॥ ११॥

अथ वर्णविषम प्रकरणम् ।

ना सम ना पुनि अर्द्ध सम, विषम जानिये वृत्त ।

जो वर्णवृत्त न तो सम वृत्त हो न अर्द्धसम वृत्त हो वही विषम वृत्त है चार चरणों से न्यूनाधिक चरणों वाले वृत्त भी विषम वृत्त ही हैं। मात्रिक विषम छंदों में प्रति पद नियमित मात्राओं की संख्या का विचार है परन्तु वर्णिक विषम वृत्तों में प्रतिपद नियमित गणों की वा वर्णों की अपेक्षा है। वर्ण विषम वृत्तों की संख्या जानने की रीति नीचे लिखी है।

प्रति चरणन के बरन जो, तिनको लीजे जोर ।
तिनकी संख्या वृत्त जो, विषम वृत्त बिन खोर ॥
वर्णिक संख्या एक सम, चहुँ चरणनि जहँ देख ।
मूलराशिहत गुणनफल, संख्या इष्ट सु लेख ॥

	पहिला पद (विषम)	दूसरा पद (सम)	तीसरा पद (विषम)	चौथा पद (सम)	रीति और संख्या
			असमान वर्ण		
वर्ण	२	३	२	४	२+३+२+४ = ११ जिसके वृत्त २०४८
वृत्त	४	८	४	१६	४×८×४×१६= २०४८
वर्ण	३	२	४	२	३+२+४+२ = ११ जिसके वृत्त २०४८
वृत्त	८	४	१६	४	८×४×१६×४= २०४८
वर्ण	२	३	३	४	२+३+३+४ = १२ जिसके वृत्त ४०९६
वृत्त	४	८	८	१६	४×८×८×१६= ४०९६
वर्ण	२	३	४	५	२+३+४+५=१४ जिसकेवृत्त १६३८४
वृत्त	४	८	१६	३२	४×४×१६×३२= १६३८४
					असमान समवृतों के प्रस्तार का एक अटल सिद्धांत यह है सम्पूर्ण पदों के वर्णोंके तुल्यगुरु स्थापितकरकेउनका प्रस्तार निकाले,फल वही प्राप्त होगा,
			समान वर्ण		
वर्ण	४	४	४	४	
वृत्त	१६	१६	१६	१६	१६×१६×१६×१६=६५५३६-२५६= ६५२८०
					समान वर्णों में मूलराशिघटानी पड़ती है क्योंकि उसके समान सम और अर्द्धसम वृत्त के भेद आ पड़ते हैं।

प्रश्न – प्रतिपद १ वर्ण के विषम वृत्त कितने होंगे रीति सहित रूप लिखो।

उत्तर—१ वर्ण के २ वृत्त, २×२×२×२=१६-४=१२

भेद	१ पद	२ पद	३ पद	४ पद	कुल भेद	विषम भेद	व्याख्या
१	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	सम	०	१६ में से ४ गये शेष रहे १२ वही प्रतिपद १ वर्ण के विषम भेद हैं। ऐसे ही और भी जानो।
२	।	ऽ	ऽ	ऽ	विषम	१	
३	ऽ	।	ऽ	ऽ	विषम	२	
४	।	।	ऽ	ऽ	विषम	३	
५	ऽ	ऽ	।	ऽ	विषम	४	
६	।	ऽ	।	ऽ	अर्द्धसम	०	
७	ऽ	।	।	ऽ	विषम	५	
८	।	।	।	ऽ	विषम	६	
९	ऽ	ऽ	ऽ	।	विषम	७	
१०	।	ऽ	ऽ	।	विषम	८	
११	ऽ	।	ऽ	।	अर्द्धसम	०	
१२	।	।	ऽ	।	विषम	९	
१३	ऽ	ऽ	।	।	विषम	१०	
१४	।	ऽ	।	।	विषम	११	
१५	ऽ	।	।	।	विषम	१२	
१६	।	।	।	।	सम	०	

विद्यार्थियों के स्मरणार्थ उक्त नियमों का सारांश नीचे लिखते हैं—

(समान वर्ण)

(१) दुगुन दुगुन सम, सम सम आध। सम सम सम सम विषम अगाध।
अर्द्धसमन सों सम इक बार। सम सम गुणि घटि विषम सुधार॥
(समवृत्त) आदि ही से दूने दूने।
(अर्द्धसमवृत्त) समवृत्त × समवृत्त–समवृत्त।
(विषमवृत्त) समवृत्त×समवृत्त×समवृत्त×समवृत्त- (समवृत्त×समवृत्त)

(१) दुगुन दुगुन समवृत्त हैं, सम सम गुणि पुनि आध।
सम सम सम सम के गुणे, लहिये विषम अगाध॥
अर्द्धसमन अरु विषम तें, मूलराशि हरि लेय।
अक्षर सम चहुँ चरण के, भेद सकल कहि देय॥

(असमान वर्ण)

असम वर्ण प्रस्तार अनंता । गुरु बिन लहत न कोऊ अंता ।
वृत्त भेद गुणि अति सुख लहिये । जय जय जय पिंगल गुरु कहिये ॥

असम वर्ण प्रस्तार में गुरु से ही सब प्रयोजन सिद्ध होते हैं जिसकी व्याख्या पहिले लिख ही चुके हैं । अनंत नाम शेषावतार श्रीगुरु पिंगलाचार्य महाराज का भी है ।

उदाहरणार्थ नीचे लिखे हुए कोष्टक में केवल एक से लेकर ८ वर्णों तक के ही सम अर्द्धसम और विषम वृत्तों की संख्या दर्शित की जाती है पाठकगण इसी से जान लेंगे ।

प्रतिपादाक्षर संख्या	समवृत्त की सं० वा मूलराशि	अर्द्धसम वृत्त	विषम वृत्त
१	२	२	१२
२	४	१२	२४०
३	८	५६	४०३२
४	१६	२४०	६५२८०
५	३२	६७२	१०४७५५२
६	६४	४०३२	१६७७३१२०
७	१२८	११२५६	२६८४१६०७२
८	२५६	६५२८०	४२६४६०१७६०

देखिये कहां तक प्रस्तार बढ़ता जाता है सो भी केवल प्रतिपद समाक्षरों का है यदि पादाक्षर संख्या भिन्न हो तो पूर्वोक्त नियमानुसार इनसे भी अधिक भेद होंगे ।

इस रीति से यदि प्रस्तार निकालने बैठो तो असंख्य वृत्त निकलेंगे जिनका पारावार जन्म भर लगना कठिन है । प्राचीन मतानुसार यह केवल कौतुक और समयनाशक है और यथार्थ में इसके न जानने से कोई विशेष हानि भी नहीं है । ग्रंथ की परिपाटी के अनुसार सब भेदों के नियम लिख दिये हैं । विद्यार्थियों को मुख्य २ नियम समझ लेना समुचित है । ग्रंथ के आरम्भ में जो दोहा मात्रिक छन्द और वर्णवृत्त की पहिचान का दिया गया है वह वर्ण विषमवृत्त में घटित नहीं हो सकता क्योंकि इसमें नियमित रूप से प्रतिपद भिन्नाक्षर वा गण होते हैं ।

विषम वृत्त के मुख्य दो भेद हैं जो नीचे लिखे हुए वृत्त से प्रगट होते हैं । उपभेद तो अनेक है—

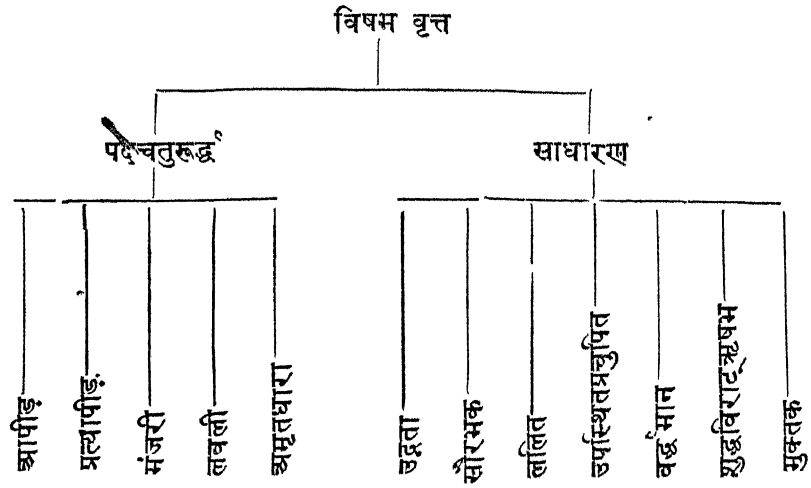

पदचतुरूर्द्ध उसे कहते हैं जिसके प्रथम चरण में ८, दूसरे में १२, तीसरे में १६ और चौथे में २० अक्षर हों। इसमें गुरु लघु का नियम नहीं है। इसी चतुरूर्द्ध के ५ भेद ऐसे हैं जिनके प्रत्येक पद में गुरु लघु का अथवा वर्णों के घट बढ़ होने का नियम है।

१ आपीड़।

पदचतुरूर्द्ध के प्रति चरण में सर्व वर्ण लघु और अन्त में दो गुरु रहते हैं यथा—

प्रभु असुर सुहर्त्ता ८। जग विदित पुनि जगत भर्त्ता १२॥ दनुजकुल अरि जग हित धरम धर्त्ता १६। सरबस तज मन भज नित प्रभु भव दुखहर्त्ता २०॥

२ प्रत्यापीड़

पदचतुरूर्द्ध के प्रत्येक चरण के आदि में दो गुरु किंवा आदि और अन्त दोनों में दो दो गुरु और शेष सब वर्ण रहते हैं। यथा—

रामा असुर सुहर्त्ता ८। सांची अहहिं पुनि जगत भर्त्ता १२ देवारि कुल अरि जग हित धरम धर्त्ता १६। मोहा मद तज मन भज नित प्रभु भव दुखहर्त्ता २०॥

३ मंजरी।

पदचतुरूर्द्ध के प्रथम पद में १२, दूसरे में ८, तीसरे में १६ और चौथे में २० वर्ण रहते हैं यथा—

सांची अहहिं प्रभु जगत भर्त्ता १२। रामा असुर सुहर्त्ता ८॥ दनुज-कुल अरि जग हित धरम धर्त्ता १६। सरबस तज मन भज नित प्रभु भव दुखहर्त्ता २०॥

४ लवली ।

पदचतुरूद्ध के प्रथम पाद में १६, दूसरे में १२, तीसरे में ८ और चौथे में २० वर्ण रहते हैं । यथा—

दनुजकुल अरि जग हित धरम धर्त्ता १६ । सांची अहहिं प्रभु जगत भर्त्ता १२ ॥ रामा असुर सुहर्त्ता ८ । सरबस तज मन भज नित प्रभु भव दुख हर्त्ता २० ॥

५ अमृतधारा ।

पदचतुरूद्ध के प्रथम पाद में २०, दूसरे पाद में १२, तीसरे में १६ और चौथे में ८ वर्ण रहते हैं । यथा—

सरबस तज मन भज नित प्रभु भव दुखहर्त्ता २० । सांची अहहिं प्रभु जगतभर्त्ता १२ ॥ दनुज कुल अरि जग हित धरम धर्त्ता १६ । रामा असुर सुहर्त्ता ८ ॥

॥ इति पदचतुरूद्धाधिकारः ॥

—::❀::—

१ उद्नता ।

प्रथम चरण--स ज स ल, द्वितीय चरण--न स ज ग, तृतीय चरण-भ न ज ल ग, चतुर्थ चरण--स ज स ज ग । यथा—

सब त्यागिये असत काम । शरण गहिये सदा हरी ॥
दुःख भव जनित जायँ टरी । भजिये अहो निशि हरी हरी हरी ॥

२ सौरभक ।

प्रथम चरण--स ज स ल, द्वितीय चरण--ल स ज ग, तृतीय चरण-र न भ ग, चतुर्थ चरण--स ज स ज ग यथा—

सब त्यागिये असत काम । शरण गहिये सदा हरी ॥
सर्व सूल भव जायँ टरी । भजिये अहो निशि हरी हरी हरी ॥

३ ललित ।

प्रथम चरण-स ज स ल, द्वितीय चरण-न स ज ग, तृतीय चरण-न न स स, चतुर्थ चरण-स ज स ज ग, । यथा—

सब त्यागिये असत काम । शरण गहिये सदा हरी ।
भव जनित सकल दुःख टरी । भजिये अहो निशि हरी हरी हरी ॥

४ उपस्थितप्रचुपित ।

प्रथम चरण-म स ज भ ग ग, द्वितीय चरण-स न ज र ग, तृतीय चरण-न न स, चतुर्थ चरण-न न न ज य । यथा—

गोबिंदा पद में जु मित्त चित्त लगैहौ । निहिचै यहि भवसिंधु पार जैहौ ॥
भ्रम अरु मद तज रे । तन मन धन सन भजिये हरि को रे ।

५ वर्द्धमान ।

प्रथम चरण म स ज भ ग ग, द्वितीय चरण-स न ज र ग, तृतीय चरण-न न स न न स, चतुर्थ चरण न न न ज य। यथा—

गोविंदा पद में जु मित्त चित्त लगैहौ। निहिचै यहि भवसिंधु पार जैहौ॥
असत सकल जग मोह मदहिं सब तज रे। तन मन धन सन भजिये हरि को रे॥

६ शुद्धविराट्ऋषभ।

प्रथम चरण-म स ज भ ग ग, द्वितीय चरण-स न ज र ग, तृतीय चरण-त ज र, चतुर्थ चरण-न न न ज य। यथा—

गोविंदा पद मे जु मित्त चित्त लगैहौ। निहिचै यहि भवसिंधु पार जैहौ॥
त्यागौ मद मोह जाल रे। तन मन धन सन भजिये हरि को रे॥

७ मुक्तक।

विषम वृत्तों में 'मुक्तक वृत्त उसे कहते हैं जिस वृत्त में कहीं गुरु लघु और कहीं केवल अक्षरों के संख्या का ही नियम होता है भाषा में इसके प्रायः दो भेद पाये जाते हैं अर्थात् 'अनंगक्रीड़ा' और उसी का उलटा 'ज्योति शिखा'।

और महाराष्ट्रीय भाषा में भी दो ही भेद देखे जाते हैं, अर्थात् अभंग और 'ओवी' यथा—

१ अभंग।

ये वृत्त बहुधा महाराष्ट्रीय भाषा में ही पाये जाते हैं अतएव केवल महाराष्ट्रीय उदाहरण दिये गये हैं इस वृत्त के प्रथम प्रयोगकर्त्ता प्रसिद्ध साधु श्रीतुकारामजी हुए हैं। अभंग ५ प्रकार के होते हैं।

	वर्ण प्रत्येक चरण में			
	१ ले	२ रे	३ रे	४ थे
प्रथम प्रकार	६	६	६	४
द्वितीय प्रकार	६	६	६	४
	८	८	०	०
तृतीय प्रकार	६	८	०	०
चतुर्थ प्रकार	८	७	०	०
पंचम प्रकार	८	८	८	८

१ दूसरे और तीसरे चरणों में यमक होती है।

२ पहिले दूसरे और तीसरे चरणों में यमक होती है।

३ दो दो पद होते हैं चरणांत में यमक होती है।

४ पहिले चरण के अन्त्याक्षर का मेल दूसरे चरण के चौथे अक्षर से होता है।

५ पहिले तीन चरणों के अन्त में यमक होती है। वृत्तदर्पणे—

प्रथम प्रकार।

काय वाणूं आतां, नपुरे ही वाणी। मस्तक चरणीं, ठेवीयलें ॥ १ ॥

द्वितीय प्रकार।

जन हे सुखाचे, दिल्या घेतल्याचे। वा अन्तकांलीचे, नाहीं कोणी ॥१॥

तृतीय प्रकार ।

जरी व्हावा तुज देव। तरी सुलभ उपाव ॥१॥
करीं मस्तकठेंगणा। लागे संतांच्या चरणा ॥२॥
भावें गावें गीत। शुद्ध करोनियां चित्त ॥३॥
तुका म्हणे फार। थोड़ा करी उपकार ॥४॥

चतुर्थ प्रकार।

पुढें आता कैचा जन्म। ऐसा श्रम वारेसा ॥१॥
पांडुरंगा ऐशी नाव। तारी भाव असतां ॥२॥

पंचम प्रकार।

देवा पायीं नाहीं भाव। भक्ति बरी वरी वाव ॥१॥
समर्पिला नाहीं जीव। जाणावा हा व्यभिचार ॥२॥

ओंबी।

यह एक अद्भुत प्रकार का वृत्त है। मुख्य नियम पहिले, दूसरे तीसरे और चौथे चरणों में ८+८+८+७ वर्णों का है परन्तु जैसा जिसके जी में आया वैसा प्रति चरण में अक्षर घटा बढ़ा लिया है केवल इतना ही नियम प्रत्येक वृत्त में देखा जाता है कि प्रथम तीन चरणान्त में अन्त्यानुप्रास की झलक होती है। यथा वृत्तदर्पणे –

ओंबी ज्ञानदेव ८, ८, ८, ६

जो सर्वा भूतांचे ठायीं। द्वेषातें नेणेचि कांहीं।
आप पर जया नाहीं। चैतन्य पै जैसे ॥१॥

ओंबी मुक्तेश्वर १०, १०, ६, ७

पौरव वंशीं प्रख्यात कीर्ती। दुष्यंतनामा गुणैक मूर्ती।
श्रेष्ठ भूपाल चक्रवर्ती। वीर्ये शौर्ये आगळा ॥२॥

ओंबी एकनाथ ६ ६, ६, ८

मातकीचे नील कुंतल। जेंवि नभ अति सुनील।
तलीं मुख चन्द्र निर्मल। भीमकीचा उगवला ॥३॥

ओंबी श्रीधर १७, ८, १०, ८

यशोदा म्हणे हे जग जेठी। आतां कैंची तुमी भेटी।
स्नेहे उमाले उठतीं पोटीं। स्तनीं पान्हा फुटलासे ॥४॥

ओंबी रामदास ८, ६ १०, ४,

आतां वंदूं कवीश्वर। जे शब्द सृष्टीचे ईश्वर।
नाहीं तरी हे परमेश्वर। वंदावे ते ॥ ५ ॥

इस वृत्त के आचार्य्य श्रीज्ञानेश्वर महाराज माने जाते हैं।

सू –अभंग और ओंबी की व्याख्या में जहां यमक शब्द आया है उससे मुख्य अभिप्राय तुकोंका है अर्थात् अन्त्याक्षर अवश्य मिलें।

अनंगक्रीड़ा।

जिस वृत्त के पूर्व्व दल में १६ गुरु वर्ण और उत्तर दल में ३२ लघु वर्ण हों उसे 'अनंगक्रीड़ा' कहते हैं।

आठों यामा शम्भू गावै। सद्भक्ती तें मुक्ती पावै॥
सिख मम धरि हिय भ्रम सब तजि कर। भज नर हर हर हर हर हर हर॥

सू०-इसका दूसरा नाम सौम्याशिखा है। इसी के उलटे को अर्थात् जिसके पहिले दल में ३२ लघु और दूसरे दल में १६ गुरु हों उसे ज्योतिः शिखा कहते हैं।

विषम वृत्तों का प्रयोग बहुधा महाराष्ट्रीय और संस्कृत भाषाही में पाया जाता है, हिन्दी भाषा में इन वृत्तों का प्रचार बहुत कम है। इन वृत्तों का यदि प्रस्तार बढ़ाया जाय तो असंख्य भेद प्रगट होते हैं, परन्तु विद्यार्थियों को मुख्य मुख्य भेद जान लेना ही अलम् है।

विज्ञप्ति।

दोहा– छन्द प्रभाकर ग्रन्थ को, जे पढ़िहैं चितलाय।
तिनपै पिंगलरायजू, रहिहैं सदा सहाय॥१॥
काव्य कछू यदि कीजिये, लहि पिंगल को ज्ञान।
ईशहिं को गुण बरणिये, लोक दुहूं कल्यान॥२॥
ईश! लगै जो छन्द जग, लगै छन्द को छन्द।
यहै छन्द सच्छन्द है, और छन्द सब फन्द॥३॥
समुझि छन्द को अर्थ जे, पढ़हिं सुनहिं मतिमान।
इहँ सुख उहँ मुक्ती लहैं, भाषत वेद पुरान॥४॥
हेतु हिये यह आनि मैं, कीन्हों सरल सुपन्थ।
छन्द शास्त्र सुखदानि को, देखि बहुत सद्ग्रन्थ॥५॥
अमित नायका भेद जे, गूढ़ सिंगार सुसाज।
बुधजन विरचेई नहीं, छन्द नियम के काज॥६॥
जगन्नाथपरसाद तें, जगन्नाथपरसाद।
छन्द प्रभाकर में धरे, छन्द सहित मरजाद॥७॥

काव्य नहीं कविता नहीं, कठिन तासु की रीत ।
छंद वर्ण गुण ग्रन्थि दै, रची माल*सहप्रीति ॥८॥
सज्जन गुणग्राही सदा, करिहैं हिय को हार ।
छंद सुमन की बांस सों, पैहैं मोद अपार ॥९॥
ब्रह्म बिना नहीं लख परत, जग महँ कछु निर्दोष ।
जानि यहै त्रुटि ढांपिहैं, लैहैं गुण मति कोष ॥१०॥
दया दृष्टि सों जो कछू, दरशैहैं सत भाय ।
ह्वै कृतज्ञ दैहौं तिहीं, पुनरावृत्ति मिलाय ॥११॥
संवत् नभ सर ग्रह शशी, विक्रम महँ अवतार । (१९५०)
छन्दप्रभाकर को भयो, मधुसित षट गुरुवार ॥१२॥

इति श्रीछन्दःप्रभाकरे भानुकविकृते वर्णविषमवृत्त वर्णनन्नाम द्वादशो मयूखः ॥१२॥

॥ इति वर्णवृत्तान्युत्तरार्द्धञ्च ॥

॥ छंदःप्रभाकरः समाप्तिमगात् ॥

॥ शुभम्भूयात ॥

*(१) माल अर्थात् माला, (२) "म, य, र, स, त, ज, भ, न, ग, ल" इन दशाक्षरों के आदि का गण "मगण" है और मगण के आदि का गुरुवर्ण "मा" और इन्हीं दशाक्षरों के अन्त का लघुवर्ण "ल" मिलकर "माल" शब्द सिद्ध हुआ । इन्हीं दो के अन्तर्गत ये सब वर्ण हैं ।

श्रीगुरु पिंगलाचार्य महाराज की जय !!!

आरती १

जय जय जय पिंगल गुरुराया। सन्तत मोपर कीजिय दायां ॥टेक॥
मंगल करण अमंगल हारी। अनुचर पर निज राखहु छाया ॥१॥
तुम्हरी कृपा परम सुख भोगत। सुमिरत श्रीशारद गणराया ॥२॥
आदि गुरू शुभ नाम तुम्हारो। अगम गूढ़ सब पंथ लखाया ॥३॥
छोटे मुख किमि महिमा गावौं। गरल छुड़ाय सुधारस प्याया ॥४॥
तव प्रसादं निर्मल मति पाई। करत भजन सिय पिय रघुराया। ५॥
संशय सकल समूल नसाने। छन्द प्रबन्ध बोध भल पाया ॥६॥
दीन दयाल दया निधि स्वामी। दीन जानि प्रभु मुहिं अपनाया ७॥
"भानु जुगल पद पंकज सेवत। दास तुम्हारो मन वच काया ॥८॥

आरती २

जय जय जय पिंगल गुरुराया। दीन जानि प्रभु कीजिय दाया ॥टेक।
सिद्ध सदन अभिमत बरदानी। भक्तन हित मुद मंगल खानी ॥
प्रभुता तुव नहिं जात बखानी। गावत गुण शारद गणराया ॥१॥
ब्रह्मादिक नारद मुनि ज्ञानी। घट संभव शुक शंभु भवानी ॥
कीरति बरणत अति रति मानी। संतन संतत गुण गण गाया ॥२॥
बालमीक सनकादिक ऋषीसा। ब्यास समान महान मुनीसा ॥
गावत गुण तुव पद धरि सीसा। करत गान सीता रघुराया ॥३॥
अष्टादश पुराण श्रुति चारी। पुनि षट् शास्त्र सुमति अनुसारी ॥
नित नूतन बरणत यश भारी। भजन प्रभाव सरस दरसाया ॥४
मर्म सुछन्द गरुड़ प्रति गाये। मोह जनित भ्रम सकल नसाये ॥
भेद अनंत भनत मन भाये। हिय अनुराग अचल उपजाया ॥५॥
धरि महि भार दुसह दुख टारे। सब जग तुम्हरेहि रहत सहारे ॥
राम अनुज जन तारण हारे। दीनन की नित करत सहाया ॥६॥
जय जय शेष अमित गुण आगर। परम कृपाल उदार उजागर ॥
छन्द प्रबन्ध सुधारस सागर। पान करत अज्ञान नसाया ॥७
जुगल चरण पङ्कज अनुगामी। नाथ नमामि नमामि नमामी ॥
"भानु" सदा शरणागति स्वामी। सेवक तुम्हरो मन वच काया ॥८॥

❀ इति शम ❀

अथ वैदिक छंदः कोष्ठकम् ।

	संज्ञा	गायत्री	उष्णिक्	अनुष्टुप्	बृहती	पंक्ति	त्रिष्टुप्	जगती
	देवता	अग्नि	सविता	सोम	बृहस्पति	मित्रावरुण	इन्द्र	विश्वेदेवा
	स्वर	षड्ज	ऋषभ	गांधार	मध्यम	पंचम	धैवत	निषाद
	वर्ण	सित	सारंग	पिशंग	कृष्ण	नील	लोहित	गौर
	गोत्र	अग्निवेश्य	काश्यप	गौतम	आंगिरस	भार्गव	कौशिक	वाशिष्ठ
	छन्द	६	७	८	९	१०	११	१२
१	आर्षी—	२४	२८	३२	३६	४०	४४	४८
२	दैवी—	१	२	३	४	५	६	७
३	आसुरी—	१५	१४	१३	१२	११	१०	९
४	प्राजापत्या—	८	१२	१६	२०	२४	२८	३२
५	याजुषी—	६	७	८	९	१०	११	१२
६	साम्ना—	१२	१४	१६	१८	२०	२२	२४
७	आर्ची—	१८	२१	२४	२७	३०	३३	३६
८	ब्राह्मी—	३६	४२	४८	५४	६०	६६	७२

इन कोष्ठों में जो वर्ण संख्या दी गई है उतने ही में भिन्न२ प्रकार के प्रत्येक छन्द को पूर्ण समझो चाहे उन वर्णों के योग से एक वा अनेक पाद सिद्ध हों।

उक्त कोष्ठक से यह जाना गया कि आर्षी गायत्री के सब चरणों के वर्ण मिलकर २४ होते हैं वैसे ही साम्ना गायत्री में सब चरणों के वर्ण मिलकर १२ होते हैं, आर्ची पंक्ति के सब चरणों में कुल ३० वर्ण होते हैं ऐसे ही और भी जानो, जिस छन्द का जो देवता, स्वर वर्ण अथवा गोत्र है वह स्मरणार्थ उसी छन्द के सामने लिख दिया है। इस हिन्दी के ग्रन्थ में इनके अनेक भेदोपभेद लिखने की आवश्यकता नहीं है।

उपयुक्त सूचना।

तुकांत।

यद्यपि यह विषय पिंगल संबन्धी नहीं साहित्य सम्बन्धी है, तथापि छन्दःप्रभाकर के पाठकों के लाभार्थ इसका संक्षिप्त वर्णन यहां इसलिये कर दिया जाता है कि भाषा कविता में इसका बहुत काम पड़ता है। प्रत्येक पद के चार चरण होते हैं। इन चरणों के अन्त्याक्षरों को तुकांत कहते हैं। भाषा में तुकांत ६ प्रकार के पाये जाते हैं। यथा—

संख्या	संज्ञा	प्रथम चरणान्त्य (विषम)	द्वितीय चरणान्त्य (सम)	तृतीय चरणान्त्य (विषम)	चतुर्थ चरणान्त्य (सम)
१	सर्वान्त्य	रा	रा	रा	रा
२	समान्त्य विषमान्त्य	रा	मा	रा	मा
३	समान्त्य	मा	मा	रा	मा
४	विषमान्त्य	रा	रा	रा	मा
५	समविषमान्त्य	रा	रा	मा	मा
६	भिन्न तुकांत Blank (Verse)	रा	मा	सी	ता
		रा	रा	सी	ता
		सी	ता	रा	रा

१ सर्व्वान्त्य।

जिस छन्द के चारों चरणों के अन्त्याक्षर एक से हों। यथा—

न ललचहु। सब तजहु। हरि भजहु। यम करहु।

२ समान्त्य विषमान्त्य।

जिस छन्द के सम से सम और विषम से विषम पद के अन्त्याक्षर मिलें। यथा—

जिहि सुमिरत सिधि होय, गणनायक करिवर वदन।
करहु अनुग्रह सोय, बुद्धि राशि शुभ गुण सदन॥

३ समान्त्य

जिस छन्द के सम चरणों के अन्त्याक्षर मिलते हों, परन्तु विषम चरणों के न मिलें। यथा—

सब तो। शरण। गिरिजा। रमण॥

४ विषमान्त्य।

जिस छन्द के विषम चरणों के अन्त्याक्षर मिलते हों, परन्तु सम चरणों के नहीं। यथा—

लोभिहिं प्रिय जिमि दाम, कामिहिं नारि पियारि जिमि।
तुलसी के मन राम, ऐसे ह्वै कब लागिहौ।

५ समविषमान्त्य।

जिस छन्द के प्रथम पाद का अन्त्याक्षर दूसरे पद के अन्त्याक्षर से और तीसरे का चौथे से मिले। यथा—

जगो गुपाला। सुभोर काला। कहै यशोदा। लहै प्रमोदा।

६ भिन्न तुकांत।

जिस छन्द के सम से सम और विषम से विषम पदों के अन्त्याक्षर न मिलें। इसके ३ भेद हैं।

प्रतिपद भिन्नांत्य-रामाजू। ध्यावो रे। भक्ती को पावोगे॥
पूर्व्वार्द्ध तुकांत-श्रीरामा। विश्रामा। दै दीजे। दाया कै॥
उत्तरार्द्ध तुकांत-दै दीजे। दाया कै। श्रीरामा। विश्रामा॥

भाषा में तुकांतप्रिय कवियों को निम्नांकित नियमों को ध्यान में रखना समुचित है, केवल इतना ही नहीं कि चरणों के अन्त्याक्षर ही मिल जावें, किंतु स्वर भी मिलना चाहिये। यथा—

तुकांत	उत्तम	मध्यम	निकृष्ट
SS	तिहारी बिहारी	तुम्हारी, हमारी	सुरारी, घनेरी
IS	मानकी, जानकी	ध्याइये, गाइये	देखिये, चाहिये
SI	मोजान, सोजान	कुमार, अपार	अहीर, हमार
I I	टेरत, हेरत	ध्यावत, गावत	भोजन, दीनन
I II	गमन, नमन	सुमति, लसति	उचित, कहत
II II	बरसत, तरसत	बिहँसत, हुलसत	तपसिन, दरसन

अभिप्राय यह है कि तुकांत में अन्त्याक्षर और स्वर अवश्य मिलें उपांत्याक्षर (अन्त्य के पूर्व्व का अक्षर) भी जहां तक हो सवर्णी हो। यदि यह न हो तो समान स्वर मिलित तो अवश्य हो।

तुकांत अर्थात् अन्त्यानुप्रास हिन्दी भाषा काव्य में परम आदरणीय है और वह होता भी है बहुत सरस और कर्ण मधुर। हिन्दी ही क्यों मराठी, गुजराती, पंजाबी, बंगाली, अंग्रेजी, फारसी, उर्दू जहां देखो वहां अन्त्यानुप्रास का ही साम्राज्य दृष्टिगोचर होता है परन्तु देववाणी संस्कृत के समस्त काव्य ग्रन्थ भिन्न तुकांत कविता से भरे पड़े हैं और उस भाषा में वे सरस और कर्णमधुर भी हैं। अब बंगला तथा अंग्रेजी भाषा में भी भिन्न तुकांत कविता होने लगी है। हर्ष की बात है कि साम्प्रत हिन्दी खड़ी बोली के कुछ कवियों

का भी ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है यथार्थ में भिन्न तुकांतभी, कविता के नियमों से पृथक् नहीं है इसमें इतनी सुविधा और है कि कवि अपने बिचारों को स्वतंत्रता पूर्वक बिना कठिनाई के प्रगट कर सकता है। भिन्न तुकांत कविता के लिए संस्कृत वृत्त ही उपयुक्त जान पड़ते हैं। परन्तु यहां पर यह सूचित कर देना भी आवश्यक जान पड़ता है कि कविता चाहे तुकांत मे हो चाहे भिन्न तुकांत में पर भाषा उसकी सरल रहे। उसमें क्लिष्ट शब्दों का बाहुल्य न हो क्योंकि प्रसादगुण सम्पन्न कविता का ही सर्व्वत्र समादर होता है। हाल ही में खड़ी बोली में श्रीयुत पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय (हरि औध कवि) ने प्रियप्रवास नामक एक ग्रन्थ भिन्न तुकांत मे लिखा है आपका नूतन परिश्रम प्रशंसनीय है। आपके ग्रन्थ से नीचे एक उदाहरण दिया जाता है—

(मन्दाक्रांता)

कुंजों कुंजों प्रतिदिन जिन्हें चाव से था चराया।
जो प्यारी थीं परम ब्रज के लाड़िले को सदा ही।
खिन्ना दीना विकल बन में आज जो घूमती हैं।
ऊधो कैसे हृदय धन को हाय! वे धेनु भूलीं।

उर्दू कविता शैली का दिग्दर्शन

उर्दू कोई जुदी भाषा नहीं वह हिन्दी भाषा की ही एक शाखा है। उर्दू के प्रसिद्ध विद्वान् मौलाना आजाद का तो यहां तक कथन है कि उर्दू ज़बान ब्रजभाषा से निकली है अन्तर इतना ही है कि हिन्दी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है और संस्कृत के शब्दों की उसमें अधिकता रहती है। उर्दू फारसी लिपि में लिखी जाती है और उसमें फारसी और अरबी के शब्दों की अधिकता रहती है और उसकी कविता के नियम भी फारसी के नियमों से बँधे हुए हैं। पिंगल शास्त्र के प्रस्तार भेदानुसार तो फारसी व उर्दू के कोई छन्द ऐसे नहीं जो हिन्दी के भेदों से बाहर हो तथापि प्रत्येक भाषा की शैली अलग अलग है। हिन्दी के नियम उर्दू में तथा उर्दू के नियम हिन्दी में पूर्णतया घटित नहीं हो सकते। हां ध्वनि का साम्य अवश्य पाया जाता है। जहां जहां किसी छन्द का साम्य उर्दू के प्रचलित छन्दों से पाया गया वह इस ग्रंथ में संक्षेप से लिख दिया गया है।

उर्दू में गद्य को नसर और पद्य को नज़्म कहते हैं। हिन्दी पिंगल की तुलनानुसार उर्दू के प्रायः सब छन्द मात्रिक होते हैं क्योंकि उनमें एक गुरु के स्थान में दो लघु आ सकते हैं और गनमें भाषा की सफाई भी अच्छी है परन्तु संस्कृत के 'अपिमात्रं मर्षं कुर्य्याच्छन्दो भंगन्न कारयेत्' के आधारवत् उर्दू में भी बहर के लिहाज से गुरु वर्ण को लघु मान लेते हैं जैसे मेरा का मिरा, तेरा का तिरा, और का अर, किसी का किसि, ये का य, वह का व, भी का भि, से का स इत्यादि। छन्दों को बहर और छन्दों के नियमों को इल्म उरूज़ कहते हैं। पदों के अनुसार छन्द इस प्रकार हैं, १ पद को मिसरा

२ पद वाले छंदों को फर्द, बैत या शेर, ३ पद वालों को मुसल्लिस, ४ पद वालों को मुरब्बा या क़िता ५ पद वालो को मुखम्मस, ६ पद वालों को मुसद्दस, ७ पद वालों को मुसब्बा, ८ पद वालों को मुसम्मन, ९ पद वालों को मुतस्सा और १० पद वालों को मुअश्शर कहते हैं। छंदों के लक्षण विचार को तक़तीअ कहते हैं। चरणांत में जो पद होता है उसे रदीफ और उपांत अर्थात् अंतिम से पूर्व पद वाले शब्द को काफिया कहते हैं यथा–अन्त रदीफ़ उपांत क़ाफ़िया। क़ाफ़िया सभी कविता में नहीं होता विशेष कर क़सीदे और गज़लों में पाया जाता है। क़ाफ़िया प्रायः एक शब्द से अधिक का नहीं होता। क़ाफ़िया पूर्व पद अर्थात् विषम चरण में कभी २ परन्तु उत्तर पद अर्थात् सम चरण में अवश्य होता है। रदीफ और क़ाफ़िये की परिभाषा इस प्रकार है।

गज़ल से मुराद है आशिक का माशूक से इश्क का इज़हार करना।

गजलें तरह २ की बहरों (छन्दों) में लिखी जाती हैं इनमें कम से कम पांच और ज्यादा से ज्यादा पचीस शेर होते हैं, पर इसकी भी कोई पाबन्दी नहीं देखी जाती गज़ल के पहिले शेर को मतला और आखिर के शेर को जिसमें शायर का नाम भी रहता है मक़ता कहते हैं गज़ल में हर एक शेर का मजमून अलग अलग रहता है दूसरे शेर से सम्बन्ध नहीं लेकिन हर एक शेर में काफ़िया और रदीफ की पाबन्दी रहती है।

क़ाफ़िया–चरणांत में रदीफ़ के पूर्व का वह सानुप्रास शब्द जो सदैव बदलता जावे और उसका अर्थ भी बदलता जावे यथा—

रदीफ़—वह एक वा अनेक शब्द जो निरन्तर चरणों के अन्त में आते जावें और उनका एक ही अर्थ रहे।

रुख पुर नूर दिखलाया तो होता, महेताबां को शरमाया तो होता।
खुशी से नाखुशी से नेको बद से, ज़बां पर कुछ कभी लाया तो होता॥

यहां दिखलाया, शरमाया और लाया क़ाफ़िया हैं और तो होता तो होता रदीफ़ हैं। ऐसे ही और भी जानो।

हमारी हिंदी भाषा की कविता में भी ऐसे कई पुराने तथा नवीन प्रयोग मिलते हैं। उनके दो तीन उदाहरण यहां देते हैं।

(१)

झांकति हैं का झरोखे लगी लग लागिबे को यहां झेल नहीं फिर।
त्यों पदमाकर तीखे कटाछन की सर कौ सर सेल नहीं फिर॥
नैनन ही की धला घल कै घन घावन को कछु तेल नहीं फिर।
प्रीति पयोनिधि में धसि कै हँसि कै कढ़िबो हँसी खेल नहीं फिर॥

यहां झेल, सेल, तेल और खेल क़ाफ़िया हैं और चारों चरणों के अन्त में 'नहीं फिर' 'नहीं फिर' रदीफ़ हैं।

(२)

चंचला चमां कै चहूं ओरन तें चाह भरी चरज गई थी फेर चरजन लागीरी।
कहैं पदमाकर लवंगन की लोनी लता लरज गई थी फेर लरजन लागीरी॥

कैसे धरौं धीर बीर त्रिविध समीरैं तन तरज गई थी फेर तरजन लागीरी।
घुमड़ घुमंड घटा घन की घनेरी अबै गरज गई थी फेर गरजन लागीरी॥

यहां गरजन. तरजन, तरजन और गरजन क़ाफिया हैं और चारों चरणों के अन्त में लागीरी लागीरी रदीफ हैं।

(३) (लाला भगवानदीन जी)

खिल रही है आज कैसी भूमि तल पर चांदनी।
खोजती फिरती है किसको आज घर घर चांदनी॥
घन घटा घूँघट उठा मुसकाई है कुछ ऋतु शरद।
मारी मारी फिरती है इस हेतु दर दर चांदनी॥

यहां घर और दर क़ाफ़िया हैं और चांदनी रदीफ है।

क़ाफिया में अनूठापन अवश्य है परन्तु शुद्ध काफिया का मिलते जाना सहज नहीं है जब क़ाफ़िया नहीं मिलता और शायर हताश हो जाता है, तब कहा जाता है कि अब क़ाफिया तंग हो गया। हिन्दी में यह बात नहीं यहां का मैदान बहुत विस्तृत है। (देखिये अनुप्रास प्रिषय) इसमें क़ाफ़िया तङ्ग होने की सम्भावना ही नहीं है।

विदित हो कि उर्दू में भी गण होते हैं पर उनकी रीति विलक्षण है। वे सब ध्वन्यात्मक हैं। गण को रुक्न कहते हैं। रुक्न का बहुवचन अरकान है जैसे लफ्ज का बहुवचन अलफ़ाज़, वज़न का बहुवचन अवज़ान और शेर का बहुवचन अशआर है। ध्वनि भेद से अरकान कई हैं।

(अरकान)

मुतहर्रिक और साकिन दो प्रकार के हरुफ़ (हर्फों) के आधार पर अरकान बनते हैं। मुतहर्रिक हरफ़ वह है जा ज़बर, ज़ेर या पेश रखता हो ज़बर को-अ, ज़ेर को-इ, और पेश को-उ समझिये जैसे-गल, गिल, गुल यहां ग के ऊपर ज़बर है, गि के नीचे ज़ेर है और गु के ऊपर पेश है इसलिये ग, गि और गु में हरकत लगने से तीनों मुतहर्रिक है। तीनों शब्दों के अन्त में ल साकिन अर्थात् हल है. परन्तु निस्बत अर्थात् सम्बन्धवाची प्रयोगों में पूर्व्व शब्द का अंतिम अक्षर भी ज़ेर लगने के कारण मुतहर्रिक हो जाता है यथा-

गुल-नरगिस = गुले नर गिस-यहां ग और ल दोनों मुतहर्रिक हैं।
दर-दौलत = दरे दौलत-यहां द और र दोनों मुतहर्रिक हैं।
दिल बीमार = दिले बीमार-यहां द और ल दोनों मुतहर्रिक हैं।

हिन्दी वा संस्कृत में 'संयुक्ताद्य दीर्घ' और हल से ही ये सब काम निकल जाते हैं। उर्दू के तर्ज पर मुतहर्रिक और साकिन का झगड़ा नहीं है इसलिये हिन्दी की कविता को उर्दू पैमाने या उर्दू कविता को हिन्दी पैमाने से नापना ठीक नहीं। दोनों की शैली अलग अलग है। जिसकी जो शैली है वह उसी में शोभा देती है जैसे हिन्दी के ब्राह्मण, प्रद्युम्न, संस्कृत, शास्त्र इत्यादिक शब्द उर्दू में बिरहमन, परदमन, संसकिरत, और शासतर लिखे और पढ़े जाते हैं अतएव वर्णसाम्य तो असंभव है। हां! ध्वनिसाम्य हिन्दी के किसी न किसी छंद से अवश्य पाया जायगा।

हर्ष का विषय है कि आजकल हिन्दी के अनेक कवि उर्दू भाषा से और उर्दू के अनेक कवि (हिन्दी) भाषा से भलीभांति परिचित हैं तथापि कई कवि ऐसे भी हैं जो केवल एकही भाषा जानते हैं ऐसे कवियों के हितार्थ आगे दिया हुआ कोष्ठक किसी न किसी अंश में अवश्य लाभदायक होगा—

हिन्दी के गण और उर्दू के अरकानों का तुलनात्मक कोष्ठक।

	गण और वर्ण	गणाक्षरों में उदाहरण	मिलते जुलते अरकान	उर्दू में उदाहरण	मात्रा
१	मगण	मागाना SSS	मफऊलुन्	मौलाना, पैमाना	६
२	यगण	यागाना ISS	फ़ऊलुन्	यशोदा, करम कर	५
३	रगण	रागाना SIS	फ़ायलुन्	रामका. कर करम	५
४	सगण	सगना IIS	फ़यलुन्	सहना, सहकर	४
५	तगण	तगान SSI	मफ़ऊल	तातार. बाज़ार	५
६	जगण	जगान ISI	फ़ऊल	जमाल, कमाल	४
७	भगण	भागन SII	फ़ालन् वा फ़ेलुन्	भीतर, बहतर	४
८	नगण	नगन III	फ़अल	नसर, नफर	३
९	ग	गा S	फ़े	आ	२
१०	ल	ल I	फ	अ	१
११	गग	गागा SS	फ़ालन् वा फ़ेलुन्	फ़ानी	४
१२	ग	गाल SI	फ़ाअ्	फ़ाल	३
१३	लग	लगा IS	फ़इल	फ़ना	३
१४	सग	सानागा	फ़यलातुन्	फहराया, बतलाया	६
१५	जग	जगानगा	मफ़ाइलुन्	मिलाकरो	६
१६	भग	भागनगा	मुफ़्तअलन्	मेलकरो	६
१७	यल	यगानाल	मफ़ाईल,फ़ऊलान्	मकानात	६
१८	रल	रागनाल	फ़ायलात्	फेरफार	६
१९	यग	यगानागा	मफ़ालुन्	मकानों में,करमकर रब	७
२०	जलग	जगानलगा	मफ़ाअलतन्	मुबारक है	७
२१	रग	रागनागा	फ़ायलातुन्	फ़ायदाहै. रब करमकर	७
२२	तग	तागानगा	मु तफ़ अलुन्	मालूम है ये कौन हैं	७
२३	सलन	सगनालगा	मुतफ़ायलु न्	महबूब है, वह कौन हैं	७
२४	सगल	सगनागाल	मफऊलात्	मनकी बात. रबकोमान	७

विदित हो कि उर्दू में एक गुरु के स्थान में दो लघु आ सक्ते हैं तदनुसार हिन्दी से तुलना करने में हिन्दी के गणों में भी फेरफार होता जायगा। हिंदी की दृष्टि से कुछ अरकान आपस में एक दूसरे से मिले हुए जान पड़ते हैं। इन अरकानों के भी अनेक भेदोपभेद हैं जिस बहर में एकही प्रकार या अन्य प्रकार के अरकान पूर्णरूप से आवें उस बहर को सालिम कहते हैं अगर अरकानों में तोड़ मरोड़ कर कमी बेशी की गई हो तो वह

बहर मुज़ाहिफ़ कहलायगीं। विस्तारपूर्वक बर्णन बहरुलउरज़ उर्दू या मेरी रचित उर्दू पुस्तक गुलज़ारे सखुन में मिलेगा। अब इस ग्रंथ से चुनकर कुछ उदाहरण अपने प्रिय पाठकों के बिनोदार्थ यहां लिखते हैं।

नाम छंद	अरकान की तरकीब	उदाहरण
पीयूष वर्ष	फ़ायलातुन् फ़ायलातुन फ़ायलातुन	मन नमीदानम फ़ऊलुन फ़ायलुन शेर भी गोयम वह अज़दुरें अदन।
शुद्धगीता	फ़ायलातुन् फ़यलातुन् फ़ायला-तुन् फ़ायलात्	सूरते गरदद मुजस्सिम सुबह गोयद आशकार।
सीता	फ़ायलातुन फ़ायलातुन फ़ायला-तुन फ़ायलुन्	गो मिले जिन्नत भी रहने की बजाये लखनऊ। चौंक उठताहूँ मैं हरदम कहके हाये लखनऊ।
सुमेरु	मफ़ाईलुन् मफ़ाईलुन् फ़ऊलुन्	तसव्वर राम का शामो सहर हो ख़याले जानकी नक़्शे जिगर हो।
शास्त्र	मफ़ाईलुन् मफ़ाईलुन् मफ़ाईलु	रहे बिर्दे ज़बां श्रीराम का नाम नमो रामो नमो रामो नमो राम
बिधाता	मफ़ाईलुन् मफ़ाईलुन् मफ़ाईलुन मफ़ाईलुन	न छोड़ा साथ लछमन ने बिरादर हो तो ऐसा हो।
भुजंगी	फ़ऊलुन फ़ऊलुन फ़ऊलुन फ़ऊल्	करीमा बबख़्शाय बर हालमा कि हस्तम असीरे कमन्दे हवा बनामे खुदाबन्द बिशियार बख्श।
सगुण	फ़ऊलुन फ़ऊलुन फ़ऊलुन फ़ऊल	न छेड़ो हमें दिल दुखाये हुए हैं।
भुजंग प्रयात	फ़ऊलुन फ़ऊलुन फ़ऊलुन फ़ऊलुन	रहा सिकन्दर यहां न दारा न है फरीदूँ यहां न जम है।
यशोदा	फ़ऊल फ़ालन् फ़ऊल फ़ालन फ़ऊल फ़ालन फ़ऊल फ़ालन	यों कहके गया दिल तू मुझे याद कियाकर।
बिहारी	मफ़ऊल मफ़ाईल मफ़ाईल फ़ऊलुन वा मफ़ऊल मफ़ाईलुन मफ़ऊल फ़ऊलुन	मक़दूर नहीं उस्कि तजल्ली के बयां का।
दिगपाल	मफ़ऊलुन फ़ायलातुन मफ़ऊल फ़ालयतुन	क्या क्या मची है यारो बरसात की बहारें।
खरारी	मफ़ऊल मफ़ाईलुनमफ़ऊल फ़ऊलुन् मफ़ऊल फ़ऊलुन्	शाहां च अजब गर बनवाज़न्द गदारा गाहे ब निगाहे।
नित	मुफ़्त अलन् मफ़ाईलुन	मुतरिबे खुशनवा बगो ताज़ा व ताज़ा नौ बनौ।
सारस	मुफ़्तअलन मुफ़्तअलन मुफ़्त अलन मुफ़्तअलन	इल्म बहर हासिल हो छन्दप्रभाकर जो पढ़ो।
हरिगीतिका	मुस्तफ़अलन मुस्तफ़अलन् मुस्तफ़अलन् मुस्तफ़अलन	अय माह आलम सोज़मन् अज़मन चरा रंजीदई।

अलंकार

मुख्य अलंकार दो हैं--१ शब्दालंकार और १ अर्थालंकार। ये दोनों (अलंकार) साहित्य के विषय हैं। इनका सम्यक् ज्ञान साहित्य के ग्रन्थ से तथा हमारे रचित काव्यप्रभाकर अथवा हिन्दी काव्यालंकार ग्रन्थों के पठन से हो सकता है यहां केवल शब्दालंकार का ही कुछ संक्षिप्त वर्णन करते हैं। इनमें ६ मुख्य हैं १ छेक, २ वृत्ति, ३ श्रुति, ४ लाट, ५ अंत्य और ६ यमक (वर्णसाम्यमनुप्रास)

१ छेक–अनुप्रास

(Single Alliteration)

जहँ अनेक व्यंजनन की, आवृति एकै बार।
सो छेकानुप्रास ज्यों, अमल कमल कर धार॥

जहां अनेक व्यंजनों की क्रमपूर्वक केवल एक बार आवृत्ति हो उसको छेकानुप्रास कहते हैं स्वर मिलें वा न मिलें। यथा—

(१) अमल, कमल यहां 'मल' की एक बार आवृत्ति है।

(२) कर, धार यहां 'र' की एक बार आवृत्ति है।

(३) दाख दुखी मिसरी मुरी। यहां द, ख, म और र की एक बार आवृत्ति है।

२ वृत्ति अनुप्रास

(Harmonic us Alliteration)

व्यंजन इक या अधिक की, आवृति कैयो बार।
सो वृत्यानुप्रास जो, परै वृत्ति अनुसार॥

जहां एक वा अधिक व्यंजनों की आवृत्ति कई बार हो, स्वर मिलैं वा न मिलैं उसे वृत्यानुप्रास कहते हैं। यथा –

(१) कहि जय जय जय रघुकुल केतू।
(ककार ३ बार, जकार ३ बार, यकार ३ बार)

(२) सहित सनेह सील सुखमागर (सकार ५ बार)

वृत्ति के तीन भेद हैं। उपनागरिका, (२) कोमला, (३) परुषा।

१ उपनागरिका-जिसमें मधुर वर्ण तथा सानुनासिक का बाहुल्य हो परन्तु ट ठ ड ढ ण न हों। यथा रघुनंद आनँद कंद कौशलचंद दशरथ नंदनम्। गुण माधुर्य्य। अनुकूलरस-शृङ्गार, हास्य, करुणा और शांत।

२ कोमला--जिसमें प्रायः उपनागरिका के हो वर्ण हों परन्तु योजना सरल हो सानुनासिक और संयुक्त वर्ण कम हों और अल्प समास वाले का समासरहित ऐसे शब्द हों जो पढ़ते या सुनते ही समझ में आ जावें। यथा—सत्य सनेह सील सुख सागर। गुण-प्रसाद। अनुकूल रस-सब रस।

३ परुषा—जिसमें कठोर वर्ण ट ठ ड ढ ष द्वित्त वर्ण, रेफ दीर्घ समास तथा संयुक्त वर्णों का बाहुल्य हो जैसे वक्र वक्त्र करि पुच्छ करि रुष्ट ऋच्छ कपि गुच्छ। गुण ओज। अनुकूलरस--वीर, वीभत्स भय अद्भुत और रौद्र।

उपनागरिका और कोमला की रीति को वैदर्भी और परुषा की रीति को गौड़ी कहते हैं, वैदर्भी और गौड़ी के मिश्रण को पांचाली रीति कहते हैं यदि पांचाली में गूढ़ता कुछ कम हुई तो वह लाटी रीति कहाती है यथा—

वैदर्भी सुन्दर सरल, गौड़ी गुंठित गूढ़।
पांचाली जानौ जहां, रचना गूढ़ अगूढ़॥

श्रुति अनुप्रास

(Melodious Alliteration)

वर्ण तालु कंठादि की, समता श्रुतिहि प्रमान। यथा—

जयति द्वारका धीश, जय संतन संतापहर।

यहां तालुस्थानी जकार यकार तथा दंतस्थानी सकार तकार और नकार का प्रयोग है।

४ लाट अनुप्रास

Repetition in the same sense, but in a different application.

लाट पदावृति जानिये, तात्पर्य्य महँ भेद।

पीय निकट जाके नहीं, घाम चांदनी ताहि।
पीय निकट जाके नहीं, घाम चांदनी ताहि॥

टी० जिस स्त्री के निकट उसका प्रीतम प्यारा है उसे धूप, धूप नहीं वरन चांदनी प्रतीत होती है, जिस स्त्री के निकट उसका पति नहीं उसे चांदनी, चांदनी नहीं वरन धूप है।

५ अन्त्य अनुप्रास

(Final Alliteration)

पदके अंतहिं वर्ण जो, सो तुकांत हिय जान

इसका वर्णन उपयुक्त सूचना में ऊपर करही चुके हैं।
तुकांत ही अन्त्यानुप्रास है।

६ यमक

(Repetition of words in different meaning)

यमक शब्द को पुनि श्रवण, अर्थ जुदो हो जाय। यथाः—

"शीतल चंदन चंदनहिं अधिक अग्नि तें ताय"

यहां चंदन शब्द के पश्चात् फिर चंदन शब्द आया है परंतु अर्थ भिन्न है। शीतल चंदन है नकि चन्द्र, क्योंकि विरहणियों के लिये चन्द्र अग्नि से भी अधिक तप्त है। कहीं २ शब्द बहुलार्थी और ध्वन्यर्थी भी होते हैं।

बहुल-अर्थी, यथा-वृन्द वृन्द। ध्वनि-अर्थी, यथा—छुम छुम् छुम् छुम्। एक पद या एक छन्द में एक से अधिक अनुप्रास भी होते हैं। यथा—

छोनी में के छोनी पति छाजै जिन्हें छत्र छाया--
छोनी छोनी छाये छिति आये निमि राज के॥

१ छेक छोनी मे के छोनी (छ छ न न)

२ वृत्ति छकार नकार कई बार आया है।

३ श्रुति—छकार, जकार, यकार, तालुस्थानीय तथा तकार, नकार दंतस्थानीय की समता है।

४ लाट--छोनी मे के छोनी पति, छोनी छोनी छाये छिति-इन पदों में लाटानुप्रास की भी झलक है।

५ यमक--छोनी, छोनी, पहिले छोनी का अर्थ अछोहिस्सी और दूसरे का अर्थ अनेक है।

६ अन्त्यानुप्रास--इस कवित्त का एकही चरण ऊपर दिया है, इसके चारों चरणों में 'सर्वान्त्य' तुकांत तो स्पष्ट ही है।

समालोचना--सार ।

विस्तार भयसे सहस्त्रों प्रशंसा पत्रों में से केवल एक नीचे उद्धृत किया जाता है:—

भानु की झाँकी ।

श्री कामताप्रसादजी गुरु (सरस्वती--फरवरी १९०६)

१ छंदः पथ-दर्शक कवि भानु, छन्दो जलधि जिन्हें परमाणु ।
जिनका छन्द-प्रभाकर ग्रंथ, विद्युत-प्रभा-प्रकाशित पंथ ॥
२ उनकी आज मनोहर झांकी, कलम् ! बतादे सबको बांकी ।
प्रतिभा—अवलोकन-अभिलाषी, होंय तृप्त सब भारत-बासी ॥
३ गौर शरीर तेज की राशी, मानो यश की प्रभा प्रकाशी ।
विहसन मधुर सुधा से बैन, दिव्य-साधुता--सूचक नैन ॥
४ जिनका अहंकार उपकार, वसुधा जिनका प्रिय परिवार ।
कालिदास से कविता कामी, मनसा ईदृश कवि नमामी ॥
५ चलो, उठो सब हिन्दी-सेवी, है प्रिय जिनको कविता देवी ।
देखो अन्तर्नयन उघार, अपनों में अपना अवतार ॥
६ वीराराधन धर्म समाज, रखले तूभी अपनी लाज ।
ले विलोक यह रूप पवित्र, सत्य--वीर-पूजा का चित्र ॥
७ विज्ञानी जज, सभ्य वकील, कवि लेखक, शिक्षक गुणशील ।
अंग्रेजी—रत हिन्दुस्तानी, अस्थिर प्रभुता के अभिमानी ॥
८ तजके स्वार्थ जनित सब द्वेष, देखो यह उपकारी भेष ।
जरा उबालो अपना रक्त, बनो मातृ-भाषा के भक्त ॥
९ जननी पय संग की प्रियवाणी, बालकपन की लाड़ कहानी ।
सारे जीवन का सुख-मूल, गये हाय ! तुम पल में भूल ॥
१० महाराष्ट्र उड़िया, बंगाली, हँसते हैं सब दे दे ताली ॥
जिनकी भाषा का यह हाल, वह भी बजा रहे हैं गाल ॥
११ 'इन्दुप्रकाश', 'काल' इत्यादी, 'प्रजाबंधु, 'वसुमति' हितवादी ।
निज-निज-जाति--जीवनाधार, करते हैं हमको धिक्कार ॥
१२ धर्म बंधु मम हिंदी-भाषी, मत होओ इमि स्वार्थ विलाषी ।
यह अनूप छवि हिये विचारो, पड़ी हुई निज जाति उबारो ॥

प्रोप्राईटर—सरयूप्रसाद श्रीवास्तव्य, श्रीहनुमन् प्रेस, श्रीअयोध्याजी ।

भूमिका—

पेज नम्बर	लाइन नम्बर	असुद्ध	सुद्ध
२	२४	यथा	तथा
२	२८	जिनने	जिंतने
७	२३	६	१६
१३	६	वही	यही
,,	अन्त	थर्थार्थ	यथार्थ

संक्षिप्त जीवनी—

पेज नम्बर	लाइन नम्बर	असुद्ध	सुद्ध
१४	६	रही	रहीं
,,	११	अन्तर्नपयन	अन्तर्नयन
,,	२७	छूटा है	सुनकर
१५	६	पत्नि	पत्नी
,,	१२	साधू	साधु
,,	१६	छुटा है	साहित्य

छन्द:प्रभाकर—

पेज नम्बर	लाइन नम्बर	असुद्ध	सुद्ध
२	२३	अ	त्र
१२	अन्त	दण्डका	दण्डक
५	गद्य लाइन ५	छैंद	छंद
,,	गद्य अन्तिम लाइन	वृत्त	वृत्त
६	रगण उदाहरण लाइन १०	मुरलीध	मुरलीधर
१२	४	१६४६	१०६४६
१३	मोटि लाइन	किवता	कविता
३२	दाहिनी लाइन	प्रारन्भ	प्रारम्भ
३३	१८	को	की

पेज नम्बर	लाइन नम्बर	असुद्ध	सुद्ध
३४	३	२० ४	$\frac{२०}{४}$
,,	५	५×७)	(५×७)
३८	कोष्ट में	७ ४	$\frac{७}{४}$
५६	२६	॥	।॥।
६०	७	दाखा	दाता
६३	४	स्वधर्घ	स्वधर्म
८१	नीचे से तीसरी लाइन	टी	टी०
८२	३	(शिव	(शिव)
९०	७	१३	३१
१०३	४	अ	आनि
१०६	३	मीप	मीत
१०७	६	ज।ऽ	।ऽ।
,,	६	मय	भय
११०	१९	वहीं	नहीं
१३८	निचे का लाइन	पातात्मज	वातात्मज
२१६	१	इंस	इस

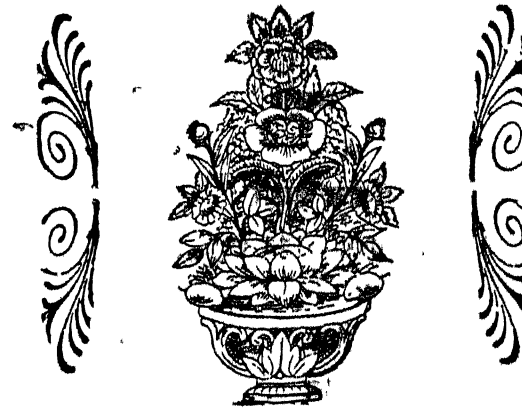

The University Library

ALLAHABAD. Hindi.

Accession No. 176579

Call No. 825 H / 27

(Form No 28 L 75,000—57)